बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

सर्वाधिकार नवजीवन ट्रस्टके अधीन

पहली आवृत्ति २०००, सन् १९५४
पुनर्मुद्रण ३०००, सन् १९५८

मू० ३.५०

सितम्बर, १९५८

समर्पण

सन् १९०८की बात है। मै सातवे दर्जेमे पढता था। अेक रोज शामको जयपुरके रामनिवास बागसे खेल कर लौट रहा था। रास्तेमे अेक अधी बुढिया रास्ता दिखानेकी मदद माग रही थी। मैने अुसकी बैसाखी पकड कर अुसे अपने घर पहुचा दिया और हृदयमे अेक अनोखा सुख अनुभव किया। वास्तवमे अुसने मुझे आनन्ददायिनी विशुद्ध सेवाका रास्ता वताया। अुसी अज्ञात प्रज्ञाचक्षु वृद्धाको यह पुस्तक कृतज्ञतापूर्वक समर्पित है।

रामनारायण चौधरी

दो शब्द

जिन लोगोने मेरी 'वर्तमान राजस्थान'* नामक सार्वजनिक सस्मरणोकी पुस्तक पढी है, अुनमे से अनेकोने गाधीजीके सम्बन्धमें अैसे ही सस्मरण लिखनेको मुझसे कहा है। मेरे परम मित्र प० बनारसीदासजी चतुर्वेदीने जब जब मिलना या पत्र-व्यवहार हुआ अैसी माग की है। अुन्होने तो विदेशोके लिअे अग्रेजीमें लिखनेका भी सुझाव दिया है। नवजीवन ट्रस्टके व्यवस्थापक-ट्रस्टी श्री जीवणजीभाअी देसाअीने भी चाहा है कि बापूके बारेमे अुनके सपर्कमें आनेवालोकी जानकारीकी जितनी बातें सामने आ जाय अुतना ही अच्छा है। श्री काका कालेलकरने अपनी 'बापूकी झाकिया' के प्राक्कथनमें सभीसे यह अपील की है। अिसलिअे मैंने यही ठीक समझा कि अपने दस वर्षके साधारण और बीस सालके घनिष्ठ परिचयमें मैंने महात्मा गाधीको जैसा देखा और समझा अुसकी कुछ झाकिया जनताके सामने पेश कर दू।

परन्तु महापुरुषोंके बारेमे अेक सावधानी जरूर रखनी चाहिये कि सिवा अुन चीजोके जो अक्षरश किसी महापुरुषके लेखो या वचनोसे अधिकृत रूपमें अुद्धृत की जाय, और जो भी कुछ अुसके विषयमें लिखा या कहा जाय अुसे अुसका विचार या वचन न समझकर यह समझना चाहिये कि लेखकने अुस विचार या वचनको अिस प्रकार समझा है। पाठकोसे अनुरोध है कि अिस पुस्तकको पढते समय भी वे यह सावधानी अवश्य रखें, ताकि गाधीजीको समझनेमें भूल न हो और अुनके विचारोके प्रति कोअी अन्याय न हो।

अिन सस्मरणोमें मेरी सहधर्मिणी अजनादेवीके भी कुछ सस्मरण शामिल है। साथ ही अिनमें गाधीजीके कुछ अैसे साथियोके बारेमें भी फुटकर और सक्षिप्त सस्मरण दिये गये है, जो अिस ससारमें नही रहे या जिनका मुझ पर खास असर पडा। गाधीजीको जिस रूपमें मैंने देखा अुसका यथेष्ट चित्र अुपस्थित करनेके लिअे यह सामग्री देना आवश्यक था।

आशा है अिस सामग्रीसे मेरे खयालमें अिस युगके ही नही, बल्कि अितिहास भरके सबसे बडे पुरुषके बारेमें पाठकोकी कुछ न कुछ ज्ञानवृद्धि जरूर होगी और अुसे समझनेमें थोडी-बहुत सहायता अवश्य मिलेगी।

अजमेर
३० जनवरी, १९५४

रामनारायण चौधरी

---

* यह पुस्तक राजस्थान प्रकाशन मडल, अजमेरने प्रकाशित की है। मूल्य ४ रु०; डाकखर्च ०-१२-०।

बापू

मैंने क्या देखा, क्या समझा ?

१

गाधीजीसे मेरा प्रथम परिचय परोक्ष ही हुआ। १९१३ की बात होगी। मै अुस समय जयपुरके महाराजा कालेजकी बिंटर कक्षाका विद्यार्थी था। राजस्थानमे राष्ट्रीय जाग्रतिके जनक स्वर्गीय पडित अर्जुनलालजी सेठीके ससर्गसे मुझे देशभक्तिकी दीक्षा मिल चुकी थी और मुझ पर क्रातिकारी विचारोका अुन्माद-सा सवार रहने लगा था। अुधर दक्षिण अफ्रीकामें गाधीजीका सत्याग्रह आन्दोलन जोर-शोरके साथ चल रहा था। देशभरमें अुसकी सहायता और हिमायतमें विराट सभाओ और धन-सग्रहकी धूम मची हुअी थी। परन्तु जयपुर अेक देशी राज्य था। अग्रेजोका जमाना था। रियासतोमें अग्रेजी अिलाकेसे भी सार्वजनिक जीवनका अधिक दमन था। ब्रिटिश साम्राज्यवादकी अैसी ही नीति थी। अिसलिअे राजधानी जयपुरका वातावरण अितना गलाघोटू था कि भारत भरमें खलबली मचानेवाले अिस आन्दोलनका जयपुरमें कोअी प्रत्यक्ष प्रभाव नही था। फिर भी समाचारपत्रो द्वारा आनेवाली खबरोसे पढे-लिखे लोगो और विद्यार्थियोको अेक हद तक जानकारी व स्फूर्ति भी मिलती ही थी।

हमारी मडलीमें श्री कृष्णकान्तजी मालवीयकी 'मर्यादा' और श्री गणेशशकरजी विद्यार्थीकी 'प्रभा' मासिक पत्रिकाअें आती। वे अेक ओर भारतीय क्रातिकारियोके जीवन और कारनामे प्रगट कर रही थी और दूसरी तरफ गाधीजीके सत्याग्रह आन्दोलनकी गतिविधिका अुत्साहवर्द्धक स्व प अुपस्थित कर रही थी। मुझ पर अुस आन्दोलनका पहला असर गोरोके प्रति घृणाकी वृद्धिका हुआ और दूसरा यह हुआ कि हमारा अेक देशवासी अैसा तो निकला जो ब्रिटिश साम्राज्यमें होनेवाले अत्याचारोके विरुद्ध खुले तौर पर सामूहिक विद्रोह कर और करा रहा है। मेरे युवक हृदयमे अेक हलकी-सी आशा बधी कि किसी दिन यह आदमी भारतमें आकर भी अपने जौहर दिखायेगा। अुन दिनो हिन्दी ससारमें बापू कर्मवीर गाधीके नामसे मशहूर थे। महात्माकी पदवी अुन्हे बादमें मिली।

२

बापूसे मेरी दूसरी जान-पहचान भी हुअी तो अप्रत्यक्ष ही, परन्तु वह पहलेसे अधिक निकटकी थी। बनारस षड्यत्रके मामलेमें फसनेसे बाल-बाल बचनेके बाद क्रातिकारी दलके प्रचारके जोशमें मै १९१५ के अन्तमें जापान जानेकी अेक छात्रवृत्ति और कालेज छोडकर जयपुर राज्यान्तर्गत शेखावाटी प्रदेशके रामगढ कस्बेमें अेक शिक्षक बनकर पहुच गया था। यहाका वातावरण मारवाडी सेठोके कलकत्ते बम्बअीसे लाये हुअे सस्कारोके कारण जयपुरसे अधिक स्वतत्रतापूर्ण था। यहा खुफिया पुलिसका जोर और रियासती दमनका भय लगभग नही था। परन्तु सेठोके भेदभावपूर्ण व्यवहारको

मेरा समतावादी और स्वाभिमानी मानस सहन न कर सका। अुन्हीं दिनों कलकत्तेमें अेक बंगाली युवकने शायद वसन्तकुमार दास नामक सी० आअी० डी० के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्टकी हत्या की थी। अिसी प्रकारकी और घटनाअें भी बंगालमें हो रही थीं। गांधीजी भारत लौट आये थे। अुन्होंने कलकत्तेके छात्रोंमें अेक भाषण दिया, जिसमें जिन आतंकवादी कृत्योंकी भर्त्सना की गअी और साथ ही सरकारकी दमन-नीतिकी निन्दा। मुझे अुनका यह दोहरा साहस असाधारण लगा। मैंने अपनेमें अिसकी धुंधली-सी छूत और गांधीजीके व्यक्तित्व और कार्य-प्रणालीके प्रति हलका-सा आकर्षण महसूस किया।

३

अुन्हीं दिनों रामगढ़में अेक विशेष घटना हुअी। वहांके पोद्दारों और खेमकोंके दो प्रभावशाली परिवारोंमें सामाजिक प्रतिष्ठा और राजमान्यताके क्षेत्रमें प्रतिद्वंद्विता थी। अेक मामलेमें सीकरके राजाजीने, जो रामगढके भी जागीरदार थे, जिन दोनों कुटुम्बोंके झगड़ेका अैसा फैसला दिया, जिसे खेमकोंने पोद्दारोंके प्रति पक्षपात और अपने लिअे अन्याय समझा। अुस समयके रियासती विधानके अनुसार पीड़ित पक्ष सालसे अर्थात् राज्यकी अदालतमें अिस जागीरके दीवानी फैसलोंकी अपील नहीं कर सकता था। अुसने 'देशत्याग' (हिजरत) का आश्रय लिया। मुझे खूब याद है कि जब खेमकोंके असबाबकी गाड़ियां और सवारीके रथोंकी कतार बाजारसे गुजरी, तब सारा कस्बा अुस हृदयद्रावक दृश्यको देखनेके लिअे अुलट आया था और सब दर्शकोंके नेत्र सजल थे। पोद्दारों पर अिसका तुरन्त असर हुआ। अुन्होंने अपना दावा लौटा लिया और खेमकोंको मनाकर वापस ले आये। घरमें अपने अनजानसे माता-पिताका जी पिघलानेके सिवा मेरे लिअे यह दूसरा अनुभव था, जिसने मुझे स्वयं कष्ट सहन करके विपक्षीका दिल जीतनेके बापूके तरीकेकी ओर अज्ञात रूपमें खींचा।

४

यहीं मेरी स्व० सेठ जमनालालजीसे प्रथम भेंट हुअी। वे हमारे स्कूलमें आये और मेरा राष्ट्रीय दृष्टिकोणसे जितिहास पढ़ाना देखकर प्रभावित हुअे। अेक मारवाड़ी युवकमें देशभक्तिका होना अुन दिनों विशेष आकर्षक लगता था। मेरी अुनकी शामको कार्ड हुअी और अुन्होंने मुझे वर्धा आनेका निमन्त्रण दिया। अुस समय तक जयपुरकी मारवाड़ी अग्रवाल मण्डलीके नेता श्री छोटेलालजी जैन हिंसा-मार्गका त्याग करके १९१७ में रामगढ़की 'मार्क्सी' छोड़कर अपने जन्मस्थान नीमके थाने पहुंचते ही जमनालालजी और छोटेलालजी दोनोंको अेक साथ जिसकी सूचना भेज दी। दोनों ही वहांसे मुझे बुलाया आ गया।

परन्तु मेरे आश्चर्यका ठिकाना नही रहा, जब मुझे छोटेलालजीके बजाय गाधीजीका पत्र मिला और वह भी हिन्दीमें। यद्यपि दुर्भाग्यवश वह मेरे पास सुरक्षित नही रहा, फिर भी मुझे याद है कि अुसकी भाषा और लिखावट अच्छी नही थी। परन्तु गाधीजीका खुदका खत और हिन्दीमें आना मेरे लिअे बडे गर्वकी बात थी। अुसमें मुझसे अपनी आवश्यकताअें पूछी गअी थी और यह भी पूछा गया था कि मै कब तक चम्पारन पहुच सकता हू। मैने दोनो बातें लिख दी और साथ ही यह भी सूचना दे दी कि जमनालालजी भी मुझे बुला रहे है। अिसका जो अुत्तर आया वह पहलेसे भी आश्चर्यजनक था। बापूके लिखनेका आशय यह था कि आपकी मागे तो मुझे मजूर है, मगर मै अपनी आवश्यकतासे जमनालालजीकी जरूरतको ज्यादा महत्त्व देता हू। अिसलिअे आप वर्धा जायं तो बेहतर हो। मुझे यह त्यागभाव अनूठा लगा। मेरी मागें भी अुस समयके लिहाजसे कुछ अधिक कही जा सकती थी, परन्तु गाधीजीने अुन्हे पूरी तरह स्वीकार करके अुदारताका भी परिचय दिया।

५

मै जमनालालजीके पास चला गया, परन्तु मनमें अेक गुप्त शका रह गअी कि कही मेरे आतकवादी विचार तो गाधीजी तक पहुचनेमें बाधक नही हुअे होंगे। अिस शकाका समाधान छोटेलालजीने जब हम कअी वर्ष बाद मिले तब यू किया कि बापूजीको तो क्रान्तिकारी युवक अधिक पसद है, क्योकि अिनमें अुन्हें प्राण और निष्ठा मालूम होती है और अुनके कअी प्रमुख साथी भूतपूर्व क्रान्तिकारी है। यह भी पता चला कि छोटेलालजीने चम्पारनमें बापूजीसे मेरी अच्छी तरह 'चुगली' खाअी थी। अेक बात बापूने खास तौर पर पूछी थी कि क्या रामनारायणजी छुआछूत छोड सकेंगे? जब अुन्हे 'हा' में अुत्तर मिला तो साश्चर्य हर्ष हुआ, क्योकि किसी मारवाडीके लिअे अुस जमानेमें सामाजिक क्षेत्रमें अितने साहसकी आशा नही रखी जाती थी। परन्तु मै तो अपने स्वभावके अनुसार प० अर्जुनलालजी सेठीके प्रथम ससर्गमे ही खान-पान और स्पर्शास्पर्शके मामलेमे जाति-पाति, हिन्दू-मुसलमान और छुआछूतके भेदभावको तिलाजलि दे चुका था।

६

दिसबर १९१७की बात है। काग्रेसका अधिवेशन कलकत्तेमें होनेवाला था। मै अुन दिनो सेठ जमनालालजी और श्रीकृष्णदासजी जाजूके पास मारवाडी शिक्षा-मडलमें काम कर रहा था। सेठजी राजस्थानी युवकोको—विशेषत: देशसेवा और समाज-सुधारकी भावनावाले मारवाडियोको—खास तौर पर प्रोत्साहन देते थे। मुझे भी अपने और जाजूजीके साथ वे काग्रेसके लिअे कलकत्ते ले गये। सयोगवश गाधीजी भी अुसी गाडीसे जा रहे थे। वे तीसरे दर्जेमें थे। नगा सिर, मोटी खादीका कुर्ता

पहने, रागकी डंडीका चश्मा लगाये वे कुछ पढ रहे थे। लम्बे-लम्बे कान, सावला-सा रंग और अजीब भद्दी-सी शक्ल थी। परन्तु न जाने क्यों, देखते ही मुझ पर विलक्षण प्रभाव पड़ा और धन्यता अनुभव हुई।

७

नागपुर निकल जानेके बाद जाजूजी जिज्ञासावश गांधीजीके डब्बेमें जा बैठे और उनसे प्रश्न किया कि जो काम आपने अफ्रीकामें किया वह यहां क्यों नहीं हो सकता? जहां तक मुझे याद है जाजूजीने हमें गांधीजीका उत्तर उन्हींके शब्दोंमें सुनाया कि, 'Given the cause and the leader the same can be done here' (कारण और नेता मिल जाय तो वही यहां भी हो सकता है।) इस सूत्ररूपी जवाबसे जाजूजी जैसे मितभाषी और बुद्धिमान व्यक्ति तो सन्तुष्ट हुये ही, मुझे भी वह मन्त्र-सा लगा।

८

कलकत्तेमें बापूजीको माहेश्वरी विद्यालयके नये बन रहे मकानमें ठहराया गया था। जमनालालजीने मुझे उनकी सेवामें तैनात किया। मुझे इससे बढकर और क्या चाहिये था? ज्यूं ही वे शौच-स्नानके लिये कपड़े, साबुन और लोटा लिये निकले, मैंने अपनी सेवायें पेश कीं। तुरंत बोले, 'नहीं, नहीं, इसमें बोझा नहीं।' मैंने कहा, 'तो कपडे मुझे धोने देंगे?' 'वह तो मैं रोज हाथसे ही करता हूं।' इतने बडे आदमीकी यह सादगी अति जमानेमें असाधारण बात थी। जब मैंने उन्हें चम्पारनके पत्रव्यवहारकी याद दिलाई, तो तुरन्त कहने लगे, 'अच्छा, छोटेलालजीने आप ही के लिये कहा था। आजकल कहां हैं? वर्धा ही हैं न?'

९

कांग्रेसका अधिवेशन हुआ। मेरे लिये कांग्रेस ही क्या, किसी भी बड़े समारोहके देखनेका यह पहला ही अवसर था। उस समय भारतके राजनीतिक गगनमें तीन सितारे विशेष चमक रहे थे। श्रीमती बेसेण्ट अधिवेशनकी अध्यक्ष थीं। वे हाल ही में नजरबन्दीसे छूटी थीं और होमरूल आन्दोलनकी नेता थीं। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक राष्ट्रीय हृदयोंके सम्राट और देशके सबसे प्रभावशाली नेता थे। कर्मवीर मोहनदास करमचंद गांधी दक्षिण अफ्रीका और चम्पारनके सत्याग्रहोंके विजयी वीर और भारतीय आकाशके उदीयमान सूर्य थे। ये तीनों और महामना मदनमोहनजी मान्चीय देशी पोशाकमें थे। अन्य बड़े नेता विदेशी वेशमें थे। भाषण हिन्दीमें केवल गांधीजीका हुआ। जब वे नंगे पैरों, मोटी खादीका लम्बा अंगरखा पहने और काठियावाड़ी पगड़ी लगाये राष्ट्रभाषामें बोलने खड़े हुये, तो सबकी नजर और कान उन्हींकी

ओर थे। मैं तो आनन्दविभोर होकर रोमाचित हो गया। अतमे अुन्होने अग्रेजीमे भी भाषणका सार दिया था, परन्तु श्रोताओके बहुत आग्रह पर।

१०

काग्रेस अधिवेशनकी समाप्ति पर मारवाडी समाजकी ओरसे अुन्हे मानपत्र दिया गया। अभिनदन समारोह माहेश्वरी विद्यालयमें हुआ। शामका वक्त था। विद्यालय-भवन खचाखच भरा हुआ था। अुनका अेक वाक्य मुझे भलीभाति स्मरण है। 'अैसे गदे वातावरणमें विद्यालय रखनेसे अुसे जला डालना अच्छा है।' अुनका सकेत शहरकी नैतिक अपवित्रता और भौतिक अस्वच्छता दोनोकी ओर था। लोगोको ठकुर-सुहाती कहकर खुश करनेके अुस युगमे अैसा कटु किन्तु कल्याणकारी सत्य कहनेका साहस किसी नेतामें मैंने पहली ही बार देखा।

११

शायद १९१८के गरमीके दिन थे। जमनालालजी कुछ बीमार थे। वे अेक दिन शामको बम्बअीकी अपनी दुकान बच्छराज जमनालालकी छत पर लेटे हुअे थे। मैं भी पास ही बैठा था। अितनेमें गाधीजी और अेक दूटे हाथवाले अन्य सज्जन आ पहुचे। बादमें मालूम हुआ कि वे गाधीजीकी साथी प्रसिद्ध देशसेविका श्रीमती अवन्तिका बाअीके पति अवसर-प्राप्त अिजीनियर श्री गोखले थे। अिस बार बापू नगे पैर तो थे, परन्तु अगरखा और पगडके स्थान पर कुर्ता-टोपी पहने हुअे थे। गाधी टोपी मैंने पहले-पहल देखी। जमनालालजीकी मिजाजपुरसीके लिअे आये थे। गाधीजीकी अुस सहृदयता और रोगियोके प्रति कोमल भावनाका भी मुझे यह प्रथम ही परिचय था, जिसे आगे चलकर तो मैंने अपने अनुभवसे भी गैरमामूली मात्रामें पाया। मेरा आकर्षण गाधीजीकी ओर बढता ही जा रहा था।

बातचीतमें पता लगा कि वे दूसरे ही दिन पूनाके पास चिचवडके अनाथाश्रमके किसी समारोहका सभापतित्व करने जा रहे हैं। मैंने भी जानेकी अिच्छा प्रगट की और जमनालालजीने, शायद गाधीजीसे मेरा सपर्क बढानेकी दृष्टिसे, तुरत स्वीकृति दे दी और सुविधा कर दी। मेरे सुपुर्द अुनके लिअे फल ले जानेका सुखद कर्तव्य कर दिया गया। वे प्रथम विश्वयुद्धके अतिम दिवस थे। बापूजी भारतीय सैनिकोके अेक तीसरे दर्जेके डब्बेमें बैठे थे। स्व० महादेवभाअी देसाअी साथ थे। सिपाहियोने बापूजीको तो अेक तख्ते पर लेटने लायक जगह दे दी थी, मगर बदलेमें महादेवभाअीको आगनकी शरण लेनी पड़ी। मैं भी अुनके साथ शरीक हो गया। सिपाही लोग दूसरे मुसाफिरोके साथ गाली-गुफ्तार और धक्का-मुक्कीसे पेश आ रहे थे, जिसे देखकर मुझे भीतर ही भीतर अुबाल आ रहा था। परतु बापूजी अुन्हे बडी शान्ति और धीरजसे समझाते थे। अिस यात्रामे २४ घटे साथ रहनेका सौभाग्य मिला। मैं अुनके सफाअी, सादगी और वक्तकी पाबन्दी आदि गुणोका सक्रामक प्रभाव लेकर लौटा।

१२

व्यक्तिगत दृष्टिसे अेक मजेदार बात भी हुअी। दो अेक बार जब वे मुझे 'आप' शब्दसे सबोधन करते रहे, तो मैंने अेक मर्तबा साहस करके पूछा, "मुझे आप 'तुम' नहीं कह सकते?" बापू हसकर कहने लगे, "अैसा समय आ सकता है, परतु अभी नहीं।" वर्षों बाद तो वे मुझे 'चिरजीव' ही लिखने लगे थे। असलमें सभी निकटके साथियों और आश्रमवासियोंको वे अपना पुत्र या पुत्री समझते थे, पत्रव्यवहारमें अुसीके अनुसार सबोधन करते थे और वैसा ही बर्ताव रखते थे। साथियोंके प्रति अैसी पारिवारिक भावना, अितनी अुत्कट आत्मीयता बापूजीके व्यवहारकी वह विशेषता थी, जो मेरी जानकारीमें किसी और महापुरुषके जीवनमें अितनी नहीं पाअी जाती। गाधीजीके बाद अुनके साथियोंमें यह गुण सबसे अधिक जमनालालजीमें था।

१३

बापूके अेक कार्यकी मेरे मन पर बडी विपरीत प्रतिक्रिया हुअी थी और वह था अुनका अग्रेजोंके लिअे फौजी भरती करना। अनेक युवकोंकी तरह मेरा हृदय भी ब्रिटिश हुकूमतके प्रति रोषसे जल रहा था। गाधीजीके अिस सहयोगने आगमें घीका काम दिया और मैंने मान लिया कि यह आदमी निरा सन्त है, राजनीति नहीं समझता। मगर यह असर बहुत दिन नहीं टिका। गाधीजीने होमरूल आन्दोलनके सिलसिलेमें भद्र अवज्ञाकी जो मुहिम जारी की, अुससे मेरा आदर अुनकी कर्मण्यताके प्रति पहलेसे भी बढ़ गया। अिसके बाद रौलेट कानूनके विरुद्ध देशव्यापी किन्तु शात सग्राम और पजाब हत्याकाडकी कांग्रेसी जाचने अुस आदरमें और वृद्धि की। थोडे ही समय बाद जब प्रयागके खिलाफत सम्मेलनमें बापूका असहयोग कार्यक्रम पास हुआ, तब तो अुनकी राजनीतिक नेतृत्वकी योग्यतामें भी मेरा विश्वास होने लगा। अिस कार्यक्रमके हिन्दू-मुस्लिम-अेकता और अस्पृश्यता-निवारणके अगोंमें मुझे अुस समय मार्मिकता या आध्यात्मिकता तो दिखाअी नहीं दी, परतु अुसमें अेक ओर अुनकी [illegible] और विशेष परिस्थितियों तथा जन-मानसको आन्दोलित करनेवाली विशेष [illegible] लाभ अुठाकर राष्ट्रको दृढ करनेकी दीर्घदृष्टि तथा दूसरी ओर हिन्दू [illegible] सगठित करनेकी कुशलताके दर्शन अधिक हुअे।

१४

१ अगस्त १९२० को [illegible] का निधन हुआ। क्रान्तिकारी दल अुन्हें [illegible] मानता था और गुप्त राजनीतिमें अुनका अनुयायी था। अिस [illegible] प्रति भक्ति-भावना थी। अुन दिनों मैं सेठ जमनालालजी द्वारा [illegible] का काम कर रहा था। जिस रोज 'बॉम्बे [illegible]' के [illegible] समाचार आये मैं बुखारमें पड़ा था। यह खबर

पढते ही मेरे दिलको ऐसा धक्का पहुचा कि जितना अिस अवसर पर मैं रोया अुतना अपने महान अुपकारक पिताजी और परम स्नेहमयी माताके मरने पर भी नही रोया। अतमें मुझे अिस बातसे आश्वासन मिला कि देशको गाधीजीके रूपमें तिलकका योग्य अुत्तराधिकारी प्राप्त हो गया है। कुछ धुधली-सी स्मृति है कि लोकमान्यने भी मृत्युसे पहले यह कहा था कि राष्ट्रके हित गाधीजीके हाथोमें सुरक्षित है और बापूजीके भी अुद्गार थे कि लोकमान्यका काम जारी रहेगा। मेरे कमरेमें अुन्हीका चित्र था। मैंने बिस्तर पर बैठकर अुन्हे प्रणाम किया और अुनकी साक्षीमें गाधीजीको श्रद्धापूर्वक भारतका और अपना राष्ट्रीय नेता स्वीकार किया और सारा समय और शक्ति लगाकर आजन्म देशसेवा करनेका व्रत ले लिया। यह मुख्यत भावना-प्रधान निश्चय था, जिस पर सितम्बर १९२० में लाला लाजपतरायकी अध्यक्षतामें हुअी कलकत्तेकी विशेष काग्रेसने बापूके असहयोग कार्यक्रमको पूरी तरह स्वीकार करके बुद्धिकी मुहर लगा दी। परतु यह परिवर्तन जिसे अुन दिनो देशी राज्योके कार्यकर्ता ब्रिटिश भारतीय राजनीति कहते थे अुसीसे सबध रखता था। समूचे भारतके बारेमें मेरे विचारोमें यह सशोधन नागपुर काग्रेसके समय हुआ।

१५

मेरा तीसरी बार बापूसे मिलनेका अवसर दिसम्बर १९२० में आया। नागपुरमे काग्रेसका साधारण अधिवेशन था। मेवाडमें बिजौलिया जागीरके किसान-सत्याग्रहके नेता श्री विजयसिहजी पथिक बापूसे मिलने अुनके कैम्पमे गये। मैं भी साथ था। मुझे अपने पिताजीसे प्राप्त बडोका अदब और सकोच सदा रहा है। अिसलिअे मैं पथिकजीकी आडमें बैठा। बापूजीकी तेज नजरने देख लिया और पूछा, 'ये कौन है?' 'हमारी सस्था राजस्थान-सेवासघके मत्री और मेरे प्रमुख साथी है।' जब मैंने मुह सामने किया तो तुरत बोले, 'आप चिचवडमे मिले तो थे?' अितनी प्रबल थी अुनकी स्मरण-शक्ति और लोक-सग्रहकी वृत्ति कि अितनी कार्यव्यस्तता और हजारोके परिचयमे भी अेक अदना कार्यकर्ता—या भावी कार्यकर्ता—को वे न भूले!

१६

पथिकजीने पूछा, "महात्माजी, हम लोग बिजौलियाके अपने छोटेसे काममें लगे रहे या आपके अिस महान यज्ञमें हाथ बटाये?" "नही, आपको स्वधर्म पालन करना चाहिये। वह भी तो मेरा ही काम है और अिस यज्ञकी ही अेक आहुति है। आप अुसीमें लगे रहिये। हा, असहयोग कार्यक्रमके जो अग देशी राज्यमें लाग किये जा सकते हो अुन्हे जरूर अपने क्षेत्रमें लागू कर लीजिये। मगर मैं तो अुलटे आपसे अेक बात पूछना चाहता हू। मैंने बिजौलिया सत्याग्रहमें मदद देनेका वचन आपको पहले दिया था। यह बडी जिम्मेदारी मुझ पर बादमें आअी है। हिमाबसे मुझे पहले दिया

हुआ वादा पहले पूरा करना चाहिये। अुसका बोझा मेरे दिल पर है। आप अुससे मुझे मुक्त करें तो ही मैं नया भार हल्के हृदयसे अुठा सकता हू।" पथिकजी गद्गद हो गये और मैं तो पानी पानी ही हो गया। वचन-पालनकी कितनी अुत्कट भावना प्रगट होती थी अिस अुत्तरसे! सार्वजनिक क्षेत्रमें भी निर्लोभी होनेका कितना अुदात्त भाव था अिस सलाहमें! बात यह थी कि दो तीन वर्ष पहले बापूजीने महादेवभाअीको विजौलिया भेजकर जाच करा ली थी, किसानोकी शिकायतोको सही पाया था और यह वचन दिया था कि महाराणा न्याय नही करेगे तो मैं स्वय विजौलिया सत्याग्रहका सचालन करूगा। अिससे मुझे किसी कामको छोटा-बड़ा न समझकर अपने अगीकृत कर्तव्यको पूरा करनेका ही सबसे ज्यादा खयाल रखनेका पाठ भी पहली मर्तबा मिला। अस्पष्ट-सा यह भी बोध हुआ कि रियासतोमें ब्रिटिश भारतके राजनीतिक कार्यक्रमको ज्यूका त्यू लागू करनेमें दोनोकी हानि है।

१७

नागपुर अधिवेशनमें बापूजीने काग्रेसका जो विधान तैयार करके पास कराया, अुसकी तीन बातोका मुझ पर खास असर हुआ। अुनमें से पहली तो यह थी कि काग्रेसके ध्येयमें ब्रिटिश भारतके बजाय देशी राज्यो सहित सारे भारतके स्वराज्यका समावेश किया गया। हम लोग कुछ ही समय पहले राजस्थान-सेवा-सघ नामक सस्था स्थापित करके आजन्म देशी रियासतोकी जनताकी राजनीतिक सेवाका व्रत ले चुके थे। अुन दिनो देशी राज्योंके कार्यकर्ताओमें अेक वर्ग अैसा था—और हम लोग भी अुसीमें थे—जिसे यह सन्देह था कि ब्रिटिश भारतके नेता अपने लिअे अधिकार प्राप्त करके राजाओंसे समझौता कर लेंगे और रियासतोको अछूता छोड देंगे। अिससे रियासती जनताके लिअे परम्परागत और अनियत्रित शासनकी गुलामी बनी ही नही रहेगी, अुसकी जजीरे और भी मजबूत हो जायगी। गाधीजीने राष्ट्रकी आजादीके लिअे लडनेवाली सर्वोपरि सस्थाके विधानमें रियासतोको शामिल करके और वहाकी जनताको, अप्रत्यक्ष ही सही, प्रतिनिधित्व देकर हम लोगोकी बडी शकाका समाधान कर दिया।

मुझे अपील करनेवाली दूसरी बात थी भाषाके आधार पर प्रान्तोकी रचना। मैं अुन दिनों अपने देहाती कार्यक्रममें अपनी मातृभाषा राजस्थानीमें ही बोलता था। मैंने अनुभव किया कि अिस माध्यमके बिना मेरा काम कारगर नही हो सकता था। मुझे अुसमें साहित्यिक भाषा या खडी बोलीसे सम्पन्नता भी अधिक मालूम हुअी। समन्वय तो था ही। जिनसिअे भाषावार प्रान्तोकी व्यवस्था मुझे अत्यत स्वाभाविक, स्वाधीन और अुपयोगी प्रतीत हुअी।

तीसरी बात मेरे कार्यक्षेत्रसे सीधा सम्बन्ध रखनेवाली थी। बापूके विधानने राजपूताना, मध्यभारत और अजमेर-मेरवाडेको अितिहासमें पहली बार अेक प्रान्त बनाकर हमारी नवुक्त राजस्थानकी आकाक्षाओंको बडा सन्तोष दिया। परिणाम यह

हुआ कि मैंने हृदय और बुद्धि दोनोंसे गांधीजीको समस्त राष्ट्रका अेकमात्र राजनीतिक नेता स्वीकार कर लिया। मुझे याद है अिस प्रस्तावके पास होने पर मैं खुशीके मारे अुछल पड़ा था।

१८

श्री मुहम्मदअली जिन्नाह किसी प्रस्ताव पर बोलने खडे हुअे। बापूको अुस समय 'महात्मा'की पदवी मिल चुकी थी। जिन्नाह साहबकी अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी लिबास तो था ही, बापूको अुन्होंने 'मिस्टर गांधी' कहकर याद किया। अिस पर मौलाना मुहम्मदअली खडे हुअे और बोले, 'मिस्टर नही, महात्मा कहिये।' प्रतिनिधियोंने शोर मचाया, 'बैठ जाअिये।' दर्शक चिल्लाये, 'महात्मा गांधी कहिये।' मगर जिन्नाह साहब अपनी बात पर अडे रहे। वयोवृद्ध सभापति श्री विजयराघवाचार्यने भी समझाया, 'आम जनताकी भावनाका खयाल रखना अच्छा है।' परन्तु जनाब जिन्नाह टससे मस न हुअे। तब बापूने अुठ कर लोगोंको मीठी डाट पिलाअी, 'मैं महात्मा नही, मामूली आदमी हू। जिन्नाह साहबके विचार-स्वातन्त्र्यमें बाधा डाल कर आप मेरा सम्मान नही कर रहे हैं। दूसरो पर जबरन् अपने विचार थोप कर हम शुद्ध स्वराज्य नही ले सकते। जब तक किसीकी भाषामें कोअी अशिष्ट या अशोभनीय बात न हो, तब तक वह दूसरेके बारेमें कुछ भी मत रखे और प्रकट करे।' तब कही लोग शान्त हुअे। बापूकी अपनी नम्रताके भानका और जनसमहकी असहिष्णुता और अवश्रद्धाके विरोधका यह प्रथम अनुभव मेरे लिअे बडा शिक्षाप्रद था।

१९

नागपुर काग्रेसके सिलसिलेमें मुझे अेक बात बापूकी और अेक जमनालालजीकी पसन्द नही आअी। बापूका लाला लाजपतराय जैसे पुराने हुतात्माओंकी अपेक्षा मोतीलालजी नेहरू जैसे नये त्यागियोंको अधिक महत्त्व देना खटका और जमनालालजीका डॉ० मुजेके मुकाबिलेमें स्वागताध्यक्ष बनना अदूरदर्शितापूर्ण दिखाअी दिया, यद्यपि मैं जमनालालजीके निकट था और मुझे अुनके चुनाव पर गर्व भी हुआ था। पिछली बात मैंने अुनसे अुसी समय कही भी थी। अुनका बचाव यह था कि अुन्हे बापूके कार्य पर विश्वास है और डॉ० मुजेको नही है, अिसलिअे कार्यकी सफलताकी दृष्टिसे बहुमतका निर्णय मानना अुन्होंने धर्म समझा है। मगर मेरा यह भय बना रहा कि लोकमान्यके निधनके ताजा घावसे व्यथित महाराष्ट्रके हृदय और लोकमान्यके कारण प्राप्त नेतृत्वसे वंचित महाराष्ट्रकी बुद्धिको ठेस लगेगी और बापूजीके कार्यक्रमको महाराष्ट्रके राजनीतिक हलकोंमे पूरा सहयोग नही मिलेगा। आगे चल कर जब शायद १९४० या १९४१ में बापू खाकसार सगठन पर विस्तृत रूपमें लिखनेकी तैयारी कर रहे थे, तब मैंने अुनसे भी कहा था कि अल्लामा मशरिकीकी तरह डॉ० हेडगेवारके

जर्मनी जाकर फैसिस्ट विचारधारा और संगठन-प्रणाली सीख कर आने और तदनुसार राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघकी स्थापना करनेका बीज नागपुर कांग्रेसकी युक्त घटनामें ही था। मैं तो यहां तक मानता हूं कि बापूकी हत्या भी उस छोटेसे बीजका एक बड़ा फल था।

२०

बापूके सामूहिक सत्याग्रहका प्रयोग स्वतंत्र रूपमें सर्वप्रथम बिजौलियामें हुआ। उसके आरंभमें जहां बापूकी अप्रत्यक्ष प्रेरणा थी, वहां बादमें उनकी सीधी सलाह और सहायता भी रही। यह मेवाड़ राज्यका जागीरी जिलाका था, जहांका जागीरदार प्रजासे कठोर भूमिकर और दर्जनों लागबाग वसूल करता था और अमानुषिक रसद बेगार कराता था। उसे दीवानी, फौजदारी और रेवेन्यू अदालतके अधिकार प्राप्त थे। कोशी पच्चीस हजारकी आबादी थी। लोगोंमें तीव्र असन्तोष था। उस असन्तोषको युद्ध-ऋणकी वसूलीमें मनमानी करके जागीरदारने तीव्रतर बना दिया था। वितनेमें सन् १९१६ या १९१७ में बनारस षड्यंत्रके भागे हुये अभियुक्त श्री पथिक वहां आ पहुंचे। थोड़े ही समयमें उन्होंने किसानोंको संगठित करके जागीरदारके अत्याचारोंके शान्त विरोधका नेतृत्व धारण कर लिया। उनकी कार्यप्रणालीमें क्रान्तिकारियोंकी गुप्तता और गांधीजीकी खुलावट, दोनों तत्त्वोंका समिश्रण था। सामन्ती व्यवस्थाकी क्रूरता और जनताकी भीरुताके कारण नेताकी असामयिक गिरफ्तारीसे सारा आन्दोलन चौपट होनेका अन्देशा था। इसलिये पथिकजी छुपकर रहते थे। परंतु किसानोंका सारा आन्दोलन प्रगट और शान्तिपूर्ण था। पथिकजी जमनालालजीकी मारफत बापूसे परिचय कर चुके थे। बापूने महादेवभाईको बिजौलिया भेजकर जांच करवा ली थी। बाहरके कार्यकर्ताओंमें खुले रूपमें बिजौलिया जानेवाले पहले कार्यकर्ता महादेवभाई थे। उन्होंने किसानोंकी शिकायतोंको सही पाया। उन दिनों मेवाड़ राज्यके दीवान महामना मालवीयजीके पुत्र प० रमाकान्त थे। बापू उनके द्वारा महाराणा फतहसिंहजीसे किसानोंके साथ न्याय करनेका अनुरोध कर चुके थे, और पथिकजीको वचन भी दे चुके थे कि यदि किसानोंके साथ इन्साफ नहीं हुआ तो वे स्वयं सत्याग्रहके अगुआ बनेंगे।

जागीरदारकी आज्ञायें न मानना, उसे कोशी कर न देना और उसकी अदालत व पुलिससे वास्ता न रखना जिस सत्याग्रहका मुख्य कार्यक्रम था। तीन चार साल जब तक सत्याग्रह रहा, लोगोंने शराब छोड़ दी, शादी और मौसर बन्द रखे, जागीरकी सारी जमीन पड़त रखी और किसानोंने आसपासके जिलाकोंमें खेती करके गुजर किया, ठिकानेका लगान वसूल नहीं हुआ और उसकी अदालतमें मामले-मुकदमे नहीं गये। उन दिनों बिजौलिया प्रदेश चारों तरफ 'वन्देमातरम्' की आवाजसे गूंजता था। हर स्त्री-पुरुषका यही अभिवादन था। किसान-पंचायतमें सभी लोग शरीक थे। उनका संगठन बड़ा व्यापक और दृढ़ था। उसका अनुशासन जबर्दस्त था। उसकी अपनी पाठशालायें थीं। समाज-सुधार, सफाई और स्वदेशी प्रचारका काम भी साथ साथ

जारी था। अिस प्रकार अिस आन्दोलनके सघर्ष और रचना, दोनो पहलुओ पर बापूकी कार्यप्रणालीकी छाप स्पष्ट थी।

२१

पथिकजी बिजौलियाके संबधमें जब भी कोअी गभीर समस्या अुपस्थित होती और कोअी खास कदम अुठानेको होते, तब गाधीजीसे परामर्श करके ही निर्णय करते थे। चार वर्षके सफल सग्रामका जागीरदार पर असर पड चुका था। अुसकी ओरसे समझौतेके सदेश आने लगे थे। बापू अुन दिनो दिल्लीमें थे। पथिकजी और मैं अुनसे वही मिले। वे अपने अीसाअी मित्र आचार्य रुद्रके मेहमान थे। बापूजी अब मुझे पहचानने लगे थे। यह मेरी अुनसे चौथी भेंट थी। अुन्होने समझौतेके प्रस्तावका स्वागत किया। अुन्होने साफ तौर पर राय दी कि अब जो भी कार्यकर्ता बिजौलिया जाय या रहे, वह खुले तौर पर काम करे। तदनुसार मैं वहा भेजा गया। वहा मैंने देखा कि बापूके नाम पर नही तो अुनकी सलाह या सहायतासे चलनेवाले आन्दोलनसे जागीरदारको काफी हानि और परेशानी हुअी थी, फिर भी अुनके और अुनके अमलेके मनमें बापूके प्रति खूब आदर-भाव था। जब मैं बिजौलियासे लौटा तो गाधीजीके सार्वजनिक सत्याग्रहके अपूर्ण-से स्वरूपका भी प्रभाव और परिणाम देखकर अुस पर मेरा विश्वास हो गया और मैं गुप्त षड्यत्र और स्फुट हिंसा तथा लूट-मारकी देशभक्तिके अुन्मादसे मुक्त होकर जनताकी खुली सेवाका कायल हो गया। मैंने आतकवादको सदाके लिअे प्रणाम कर दिया।

२२

लेकिन हम लोगोंके सार्वजनिक जीवन पर अिससे भी अधिक ठोस छाप गाधीजीकी यह पडी कि हमने आजन्म सेवा करनेवाले कार्यकर्ताओकी अेक सस्था बनाअी। अिसका नाम राजस्थान-सेवा-सघ था। यू तो माननीय गोखलेजीकी भारत सेवक समितिका नाम हमने सुन रखा था, परतु वह नरम दलवालोका सगठन था, जो अुन दिनो हमारे लिअे अैसी ही चिढकी वस्तु थी जैसा साढ़के लिअे लाल कपडा होता है। अिसलिअे हमने अुस पर ध्यान नही दिया। परतु बापूके आश्रमके सगठनके अध्ययनने हमने अुसके खालिस आध्यात्मिक अगको छोडकर शेष बातोको अपनानेका निश्चय कर लिया। यू तो नौकरीके बधनोमें जकडे रहकर, धन और वैभवकी गोदमें खेलते हुअे, सत्ताके आसन पर विराजमान होते हुअे और दूसरे धधे करते हुअे भी विचारवान और भावनाशील मनुष्य समाजकी भलाअीके काम कर सकता है, फिर भी अैसे लोग अपवाद-स्वरूप ही होते है और अुनके कार्यकी मात्रा भी मर्यादित होती है। परतु जब किसी देशकी स्वतत्रताका प्रश्न हो, किसी प्रजाको रोग, दारिद्र्य और अज्ञानके गहरे गर्तसे निकालना हो या समाजका पुनर्निर्माण करना हो, तब तो वाछित

फल प्राप्त करनेके लिअे अैसे लोगोकी जरूरत अनिवार्य ही होती है, जिनको अेक ही लक्ष्यका ध्यान हो और अुसीकी प्राप्ति पर जिनकी सारी शक्तिया केन्द्रित हो। ये सामाजिक सन्यासी या मिशनरी सिर्फ भिक्षान्न पर गुजर करनेवाले और सारा समय लगाकर काम करनेवाले ही हो सकते है। अुनमें न व्यक्तिगत सम्पत्तिका मोह होना चाहिये और न धार्मिक रागद्वेष। हम लोगोने बापूके अिन विचारोको शिरोधार्य कर लिया।

तदनुसार मैने भी अपनी अचल पैतृक सम्पत्तिको तिलाजलि दे दी। हमारे सघका प्रत्येक कार्यकर्ता अपने और अपने आश्रितोंके लिअे प्रति व्यक्ति १५) रुपये मासिकसे अधिक नही ले सकता था और अुसमें भी कोअी बचत रहे तो अुसे सघको लौटा देता था। अिस प्रकारके आदर्श, अुत्साह और कार्यक्रमसे अनुप्राणित होकर हमारे सघने राजस्थानकी जनताकी सर्वतोमुखी सेवाके क्षेत्रमें पदार्पण किया। अब विजौलियाकी जिम्मेदारी पथिकजीसे हटकर सघ पर आ गअी। यह घटना १९२० के नवम्बर मासकी है।

मुझे अिस कठिन मार्ग पर अग्रसर होनेमें अपनी पत्नी अजनादेवीसे बडा बल मिला। अुसे दो बार पूज्य बापूके दर्शनोका लाभ मिल चुका था। अुसकी बापूसे वर्धामें दो बार भेंट हो चुकी थी और फलस्वरूप अुसने जेवर न पहनने और विदेशी तथा मिलका कपडा छोडकर खादी धारण करनेकी प्रतिज्ञा ले ली थी, जो कभी नही टूटी।

२३

सेठ जमनालालजीकी अुदार सहायतासे हम लोगोने 'राजस्थान केसरी' नामक साप्ताहिक अखबारके विशेष कांग्रेसके बाद वर्धासे निकाला। मै अुसका प्रकाशक व सहायक सम्पादक बनाया गया। अुन दिनोंके प्रेस कानूनके अनुसार सारी कानूनी जिम्मेदारी प्रकाशककी ही होती थी। सम्पादकका तो नाम भी पत्र पर देना जरूरी नही था।

'राजस्थान केसरी' अेक ओर देशी राज्यो और खास तौर पर राजस्थानकी जनताके अभाव-अभियोगो पर खुलकर रोशनी डालता और दूसरी तरफ असहयोग आन्दोलनका प्रबल समर्थन करता। हमारी मडली असहयोगकी प्रवृत्तियोमें प्रमुख भाग लेती। अेक प्रकारसे हमारा कार्यालय वर्धामें असहयोग-कार्यक्रमका मुख्य केन्द्र बन गया था। अिन सब बातोंसे सरकारका हमसे नाराज होना स्वाभाविक था। वर्धा जिलेके डिप्टी कमिश्नर अेक विद्वान भारतीय थे। वे दमनकी पहल करनेकी नीची जिम्मेदारी लेना नही चाहते थे। अिसलिअे किसी गावमें अेक थानेदारसे, जिसने वहा बडे जुल्म किये थे और जिसके खिलाफ 'राजस्थान केसरी' में कोअी खबर छपी थी, पत्र पर मानहानिका मुकदमा चलवाकर मुझे और श्री सत्यदेव विद्यालकारको तीन तीन महीनेकी सजा दे दी गअी।

परन्तु जेलमें पहुचकर भारतीय कर्मचारियो पर बापूका असाधारण प्रभाव देखकर हम दग रह गये। जेलरने, जो अेक मद्रासी थे, बहुत अिज्जतके साथ हमारा स्वागत किया। सुपरिन्टेन्डेन्ट अेक बूढे बगाली सिविल सर्जन थे। वे जब दूसरे दिन आये तो अुन्होने अपने व्यवहारसे हमें और भी आश्चर्यचकित कर दिया। अुन्होने आते ही हमें झुककर प्रणाम किया और जब आते तब अैसा ही करते। अुनकी बुजुर्गीके कारण भी हमें अुनकी अिस नम्रतासे लज्जा हुअी, तो कहने लगे "आप लोग देशकी आजादीके लिअे कष्ट अुठा रहे है और महात्मा गाधीके प्रतिनिधि है। हम और कुछ न कर सकें तो आपका आदर भी न करे?" जेल-अधिकारियोके बापूके प्रति अिस भक्तिभावके कारण ही हमें 'क' वर्गमें होते हुअे भी स्वास्थ्यके नाम पर 'अ' वर्गकी लगभग सारी सुविधाअें प्राप्त हुअी। जेलरके साथ हम बगीचेमें घूमने जाते, अुनके घर पर नाश्ता करते, दफ्तरमें बैठकर पत्रव्यवहारमें सहायता देते, कुअेंमें कूद-कूदकर नहाते। और तो और, हम जेलमें बैठकर अपने पत्रके लिअे लेख भी लिखकर भेजते और जब जिससे चाहते मुलाकात कर लेते। अहमदाबादकी काग्रेस निकट आ रही थी। हमारे छूटनेकी विधिवत् तारीख अधिवेशनकी समाप्तिके अेक दिन बाद पडती थी। जेल सुपरिन्टेन्डेन्टने अुतने दिनकी रियायत देकर हमारी रिहाअी अिस प्रकार कर दी कि हम ठीक समय पर अहमदाबाद पहुच गये और वह भी सरकारके खर्च पर! अैसा था गाधीका जादू जो भीतर ही भीतर भारतीय राज-कर्मचारियोके हृदयोमें चमत्कार कर रहा था! मुझे अनुभव हुआ कि जहा निरे राजपुरुषोकी अुनके अनुयायी भी आलोचना करते है, वहा सन्तोकी अुनके शत्रु भी प्रशसा करते है।

२४

जब मैं अहमदाबाद पहुचा तो वहा अपूर्व दृश्य देखा। जहा पहलेकी काग्रेसें शहरके बीचमे सजे हुअे पडालोमें होती थी, दर्शक और प्रतिनिधि कुर्सियों पर बिठाये जाते थे और होटलोमें ठहराये जाते या ठहरते थे, वहा अिस बारका 'गाधी-छाप' अधिवेशन नगरके बाहर लम्बे-चौडे मैदानमें हुआ। खादी और बासके टट्टोका ही मडप और अतिथियोके लिअे अुसी सामग्रीसे बने हुअे कमरे थे। खाअिया खोदकर और बास व टाटकी आड लगाकर पाखाने और पेशावघर बनाये गये थे, जिन्हें शौच जानेवाले स्वय मिट्टी डालकर स्वच्छ रखते थे या अिसी कामके लिअे तैनात स्वय-सेवक साफ कर देते थे। काग्रेस नगरकी अपनी जल-व्यवस्था और भोजनका अपना ही सादा किन्तु स्वास्थ्यप्रद प्रबन्ध था। खादीकी प्रदर्शनी, ग्रामीण नृत्य और गान तथा हिन्दुस्तानी भाषाकी प्रधानता पहली ही बार नजर आअी। नेताओंके लिअे मेज-कुर्सीके बजाय गद्दी-तकियेका और प्रतिनिधियो तथा दर्शकोके लिअे फर्श पर बैठनेका अितजाम था। सर्वत्र खादी ही खादी दिखाअी देती थी। ये सब बातें नअी थी और गाधीयुगके आगमनकी सूचना दे रही थी।

अिस अवसर पर बापूके केवल दर्शन ही हुअे। भेंट होनेका सौभाग्य नहीं मिल सका। परन्तु छोटेलालजीसे छह वर्ष बाद पुनर्मिलनका सुखद अवसर प्राप्त हुआ। अुन्होंने अपने हस्ताक्षर करके आश्रम-भजनावलिकी अेक प्रति मुझे भेंट की, जो अब भी अेक मूल्यवान स्मृति-चिह्नके रूपमें मेरे पास सुरक्षित है। दूसरी अुल्लेखनीय घटना थी छोटेलालजी द्वारा स्व० श्री मगनलालभाअी गांधीसे परिचय होना। मुलाकात तो थोडी देरकी थी और वह आखरी ही साबित हुअी, परन्तु अुनकी सादगी, मितभाषण, गंभीरता और लगनकी गहरी छाप मुझ पर पहली ही बारमें पड गअी। अिसी अवसर पर स्व० मणिलालजी कोठारीसे भी जान-पहचान हुअी, जो आगे चलकर आत्मीयताकी हद तक बढ गअी। वे अधिकतर बापूके कामोंके लिअे चंदा जमा करते थे और अिस कारण गांधीवादी हल्कोंमें 'भिक्षुराज' के नामसे पुकारे जाने लगे थे। बडे भावुक और प्रेमी जीव थे और राजस्थानके मामलोंमें बडी दिलचस्पी लेते थे। सिरोहीके भीलों पर जब गोलीकांड हुआ था, तब बापूने अुसकी जांच और पीडितोंकी सहायताके लिअे कोठारीजीको ही भेजा था। अुनकी रिपोर्टके आधार पर बापूने 'यंग अिंडिया' में अेक टिप्पणी भी लिखी थी, जो भीलोंके लिअे सहायक और रियासती कार्यकर्ताओंके लिअे अुत्साहवर्धक सिद्ध हुअी।

लेकिन अिस अवसर पर जो सबसे कीमती परिचय बापूका हुआ, वह था साबरमती सत्याग्रह आश्रमके रूपमें। छोटेलालजीने मुझे सब जगह घुमाकर सारी प्रवृत्तियां दिखाअी। यद्यपि वह आरम्भकाल ही था, फिर भी साबरमती तट पर वृक्षोंकी छायामें अलग अलग सादे मकान, सम्मिलित भोजनालय, खेती, गोशाला, बुनाअी-रुनाअी, राष्ट्रीय शिक्षा, स्त्री-पुरुषकी समानता, स्वतंत्रता और मर्यादा तथा समान और सात्त्विक जीवनकी व्यवस्था देखकर यह असर पडा कि गांधीजी जो कहते हैं वह करते भी हैं और राष्ट्र व समाज-रचनाके अपने कार्यक्रमके सभी अंगोंका विकास साथ-साथ करते जा रहे हैं। जब मैंने छोटेलालजीसे विदा ली तो आश्रमका अन्न पर अितना आकर्षण था कि चलते चलते मेरे मुंहसे ये शब्द निकल ही पडे "किसी न किसी दिन फिर आपके संघ होना पडेगा।" दस वर्ष बाद वही हुआ भी।

२५

अुन दिनों देशमें कांग्रेसका नाम अितना नहीं था जितना महात्मा गांधीका। जनतामें अुनके जबरदस्त और चमत्कारी पुरुष होनेके कअी किस्से चल पडे थे। राजस्थानमें यद्यपि जन-जागृति, सार्वजनिक कष्ट-निवारण और राजनीतिक आन्दोलनका काम मुख्यतः राजस्थान-सेवा-संघके कार्यकर्ता कर रहे थे, परन्तु ग्रामीण जनता और सरकारी दोनों हलकों यह समझते थे कि हम लोग महात्मा गांधीके आदमी हैं और जनतामें कार्यकर्ताओंके प्रभाव और अुनके प्रति विश्वासका यह अेक मुख्य कारण था। भारतमें असहयोगकी जो ज्वाला प्रगट हुअी थी अुसका यद्यपि राजस्थानके रियासती हिस्सेसे सीधा सम्बन्ध नहीं था, फिर भी अुससे प्रेरित और अनुप्राणित होकर

सदियोंकी दोहरी गुलामीमें पिसती हुई जनता जगह जगह सामूहिक रूपमें उठ खडी हुई थी और उसने लागबाग, बेगार, रिश्वत और अधिक लगान देना बन्द कर दिया था, नशाखोरी कम हो गई थी और कुरीति-निवारणकी लहर-सी आ गई थी। कई व्यक्तियोंके जीवन पलट गये थे, विलासी त्यागी और कायर वीर बन गये थे।

२६

जिसका एक विलक्षण उदाहरण उल्लेखनीय है। अहमदाबाद कांग्रेससे लौटकर जब मैं बिजौलियाके समीपवर्ती बेगू जागीरमें पहुचा, तो वहा भी किसानोंमें अपूर्व चेतना पाई। जिस जाग्रतिसे क्षुब्ध होकर वहाके एक छुटभैये रावडदा ठाकुरने स्त्रियो तक पर अत्याचार करने शुरू कर दिये थे। एक दिन उसने एक मालिनको सरे बाजार घसीटवाया और एक भीलनीको औधी लटकवाकर पिटवाया। जिसे किसान सहन न कर सके और ठाकुरके भवन पर सामूहिक रूपमें पहुच गये। ठाकुरने भी भरी बन्दूक तान ली। गोलीकाड और फिर प्रतिशोधका कुचक्र चलने ही वाला था कि इतनेमें रामनिवास शर्मा नामक एक अल्पशिक्षित — लगभग अपढ — देहाती युवक कार्यकर्ता, जो बापूके आन्दोलन और व्यक्तित्वसे प्रभावित हो चुका था, सामने आया। उसने 'महात्मा गाधीकी जय' का गगनभेदी नारा लगाया और सारी भीडने उसे प्रतिध्वनित किया। उसने एक हाथके इशारेसे भीडको शात रहनेका आदेश दिया और दूसरे हाथसे छाती खोलकर ठाकुरके सामने कर दी। अहिंसक शौर्यके इस प्रदर्शनका विलक्षण परिणाम हुआ। भीड शान्त रही, ठाकुरका हृदय-परिवर्तन — कमसे कम तात्कालिक रूपमें — हो गया और दोनो पीडित बहनें रिहा कर दी गई। जनता विजयपताका फहराती हुई और अपनी आन्तरिक शक्तिका भान करती हुई घर लौट आई।

२७

एक और घटनासे चोर-डाकुओ तक पर बापूके सुप्रभावका पता चला। मैं बिजौलियामें था। ग्वालियर राज्यके सिंगोली जिलाकेसे वहा घाटी चढकर आना पडता था। वह घने जगलके बीच थी और चोर-डाकुओका गढ मानी जाती थी। रक्षक दलके बिना वहासे गुजरना खतरनाक होता था। एक बार एक सुनार मेरे पास आकर पैरोंमें पड़कर अत्यन्त कृतज्ञ भाव प्रगट करने लगा। मैं आश्चर्यमें पड गया और कुछ समझ न सका। जब पूछा तो उसने बताया कि "कल मैं सिंगोलीकी घाटीमें डाकुओकी जदमें आ गया था। परन्तु जब मैंने 'वन्देमातरम्' का अभिवादन किया, अपने खादीके कपडे बताये और महात्मा गाधीका आदमी होना जाहिर किया, तो डाकू मुझे बिना कुछ कहे-सुने अछूता छोडकर चले गये!" एक बार मैं भी उसी मार्गसे कुछ किसानोके साथ जा रहा था। एक सशस्त्र टोली जंगलकी तरफसे

हमारी ओर बढती हुअी दिखाअी दी। किसान तुरन्त ताड गये कि क्या माजरा है। अुन्होने जोरसे 'महात्मा गाधीकी जय' बोली और हथियार-बन्द दल जिन पैरो आया था अुन्ही पैरो चुपचाप लौट गया। मैंने सोचा कि भारतीय सस्कृतिने चोर-डाकुओमें भी ब्राह्मणो, साधुओ और स्त्रियो पर हिंसा व बलप्रयोग न करनेकी जो मर्यादा स्थापित की है, अुसमें महान सन्त गाधीने लोकसेवको और अुनके समर्थकोको भी स्थान दिलवा दिया है।

२८

सन् १९२१ की बात है। अजमेरमें पथिकजी और कुछ काग्रेसी कार्यकर्ताओमें मतभेद हो गया था। अुन्ही दिनो दीनबन्धु अॅड्रूजने बेगारको 'आधुनिक गुलामी' की पदवी देकर अुसके विरुद्ध भारतव्यापी मुहिम छेड रखी थी। हम लोग यही लडाअी राजस्थानमें लड रहे थे। हमने दीनबन्धुको राजस्थानमें आनेका निमत्रण दिया। अुन्होने स्वीकार कर लिया। तारीखें और कार्यक्रम भी तय हो गया। अिसी बीच स्थानीय काग्रेसी नेताओने दीनबन्धुको पथिकजीके विरुद्ध कुछ लिखा होगा। पथिकजी दीनबन्धुको गाधीजी द्वारा अपना परिचय करा चुके थे। अिसलिअे वे बापूसे पथिक-जीके बारेमें जानना चाहते थे। अिस सम्बन्धमें श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदीने अेक जगह जो लिखा है वह अुन्हीके शब्दोमें सुनिये

"देशबन्धु सी० आर० दासके मकान पर महात्मा गाधीजी व भारतबन्धु अॅड्रूज बातचीत कर रहे थे। वही बैठा हुआ मै भी अिस वार्तालापको सुन रहा था। कुछ देर बाद मि० अॅड्रूजने कहा, 'महादेवभाअी कहा है?' महात्माजीने अुत्तर दिया, 'वे कही बाहर गये हुअे है, क्या आपको अुनसे कुछ काम है?' मि० अॅड्रूजने कहा, 'पथिकके विषयमें अुनसे कुछ पूछना था। वे कौन है, कैसे आदमी है?' महात्माजी मुस्कराते हुअे बोले, 'I can tell you something about Pathik Pathik is a worker, while others are talkers Pathik is a soldier, brave and impetuous but obstinate He was Mahadev's infallible guide in Bijolia and the remarkable thing is that the masses of Bijolia have implicit confidence in him'"

('मै पथिकके बारेमें कुछ बतला सकता हू। पथिक काम करनेवाला है, दूसरे सब बातूनी है। पथिक अेक सिपाही आदमी है, बहादुर है, जोशीला है और तेज मिजाज है, लेकिन जिद्दी है। जब महादेव बिजौलिया गये तब पथिक अुनके निर्भ्रान्त नायी थे। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि बिजौलियाकी जनताका अुन पर पूरा पूरा विश्वास है।')

मनुष्य-चरित्रके जितने अुत्तम ज्ञाता महात्मा गाधी थे अुतना शायद ही कोअी दूसरा हो। मगर मुझे अिस घटनामें बापूके मानव-चरित्रके ज्ञानसे भी अुनकी गुण-ग्राहकता, न्यायपरायणता और अुनके द्वारा असली कार्यकर्ताओको सहायता देनेकी

वृत्ति अधिक अुदात्त मालूम हुअी। अेक तरफ काग्रेसके कार्यकर्ता थे जो बापूके असहयोग-कार्यक्रमको सीधा पूरा कर रहे थे और दूसरी ओर अेक अैसा व्यक्ति था जिसका बापूके कामसे अप्रत्यक्ष ही सम्बन्ध था। फिर भी अुन्होने चन्द वाक्योमे अपनी अुत्कट अिन्साफपसन्दीका परिचय दे दिया और काम करनेवाली अेक विनीत मडलीको भारी मदद पहुचा दी।

२९

सन् १९२४ की बात होगी। बिजौलियाकी शानदार जीतके बाद वैसा ही गौरवशाली समझौता हो चुका था। अब हम वहाकी जनतामें रचनात्मक कार्य करनेमें लग गये थे। बापूके भेजे हुअे जेठालाल भाअी स्वावलम्बी खादीका प्रचार और सगठन कर रहे थे। राजस्थान-सेवा-सघने शिक्षा-प्रचार, समाज-सुधार, नशा-निषेध, अस्पृश्यता-निवारण आदि काम हाथमें ले लिये थे। स्त्रियोमें अजनादेवी काम कर रही थी। सघके मत्रीकी हैसियतसे मैं अिन सब कामोकी देखभाल कर रहा था। बिजौलियाके पहाडी अिलाके और जागीरदारके सुरक्षित जगलोके कारण सूअर और हिरण आदि वन्य पशुओका बडा अुत्पात था। वे आसपासकी खेतीको बहुत हानि पहुचाते थे। किसान अुनके मारे तग थे। बेचारे रातो जाग-जागकर भी अपनी फसलोकी पूरी रक्षा नही कर पाते थे। किसानोने अुन्हे मारनेके बारेमें मुझसे सलाह मागी। मैं अुस समय तक अहिंसाका पूरी तरह कायल तो नही हुआ था, परन्तु किसानो द्वारा कोअी हिंसात्मक कार्य नही होने देना चाहता था। अिसलिअे मैंने बापूको लिखकर पूछा कि अिस तरहके जानवरोको मारा जा सकता है या नही। जहा तक मुझे याद है, अुन्होने लिखा था कि मानव-जीवनकी रक्षाके लिअे खेतीको नुकसान पहुचानेवाले प्राणियोको मारना अनिवार्य हिंसा है। अिस रायसे मैंने यह समझा कि बापू सचमुच व्यावहारिक आदर्शवादी हैं।

घटनास्थल पर गये। अुस समयका दृश्य देखने लायक था। अेक तरफ 'सत्याग्रह' के नाम पर भारतके अेकमात्र नेता पर गालियोंकी बौछार हो रही थी और दूसरी ओर गांधीजी हंसते चेहरेसे अुन लोगोंको वीरज और प्रेमपूर्वक समझा रहे थे, अुन्हें तात्कालिक राहत देनेको तैयार थे और अधिवेशनके बाद निष्पक्ष न्यायका आश्वासन दिला रहे थे। बापूकी क्षमाशीलता और स्थितप्रज्ञताका मैंने पहली बार अनुभव किया।

३१

अुन दिनों देशी राज्योंकी जनताका देशव्यापी आन्दोलन बड़ा क्षीण-सा था। केवल तीन दल काम कर रहे थे. राजस्थानमें हमारा राजस्थान-सेवा-संघ, काठियावाड़में 'सौराष्ट्र' परिवार और महाराष्ट्रमें भारत सेवक समितिके कार्यकर्ता। पहला दल देहाती जनतामें प्रत्यक्ष संघर्षका संचालन कर रहा था, मगर रियासतोंमें ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपका विरोधी था। 'सौराष्ट्र' की आवाज थी तो जोरदार, परन्तु वह शहरों तक सीमित थी और ब्रिटिश हस्तक्षेप पर अुसे आपत्ति नहीं थी। महाराष्ट्रीय मंडलीका सारा दारमदार ब्रिटिश हस्तक्षेप पर था। अिन्हीं तीनों विविध तत्त्वोंने मिलकर देशीराज्य प्रजा परिषदके नामसे कानपुर कांग्रेसके समय अेक सम्मेलन किया। सम्मेलनमें कोअी दम नहीं था। न अुसका कोअी संगठन था और न कोअी स्पष्ट नीति और कार्यक्रम ही था।

अिस सम्मेलनके कुछ मास पूर्व नीमूचाणा हत्याकांड हो चुका था। अलवर राज्यमें हुअी अिस घटनाको देशी राज्योंका जलियांवाला कहा जाता है। बापूका अुन समय देशी राज्योंके बारेमें तटस्थ-सा या अेक खास प्रकारका रुख था। फिर भी अुन्होंने रियासती शाकरशाही और विदेशी नौकरशाहीके अिस दोहरे स्वेच्छाचारको 'Dyerism Double Distilled' कह कर निन्दा की और अिस शीर्षकसे 'यंग अिंडिया' में अेक टिप्पणी लिखी, जिसे पढ़कर हम नवयुवकोंके संतप्त हृदयोंको संतोष मिला। अुसका अनुवाद यह है

"अलवरके विषयमें मेरे पास अितना ब्यौरा नहीं है कि कुछ लिख सकूं। मेरी बात या लेख पर निजाम साहबकी तरह अलवर महाराज भी तिरस्कारके साथ हंस सकते हैं। अब तक जो बातें प्रकाशित हुअी हैं, वे यदि सच हैं तो अिसे दोहरी डायरशाही ही समझना चाहिये। परन्तु मैं जानता हूं कि फिलहाल मेरे पास अितनी कोअी दवा नहीं है। अिन भीषण आरोपोंके सम्बन्धमें कमसे कम जांच करानेके निमित्त सत्याचारपीड़ितोंकी जो अुद्योग कर रहे हैं अुसे मैं आदरकी दृष्टिसे देख रहा हूं।"

सौराष्ट्रकी अिस मर्यादा वाजिब मांगको बापूने अिन टिप्पणी द्वारा सहारा ही नहीं दिया, अत्याचारियोंको चेतावनी भी दी कि बापू चुप हैं तो भी निष्क्रिय नहीं हैं और अुनकी सहानुभूति पीड़ितोंके साथ है।

३२

परन्तु अिस टिप्पणीसे भी अधिक स्फूर्तिदायक वह सन्देश था, जो कानपूरकी देशीराज्य प्रजा परिषदके लिअे बापूने स्वय अपने हाथसे हिन्दीमें लिखकर दिया। सन्देश यह था

"प्रत्येक मनुष्य अपना बन्धन काट सकता है। यदि हम अिस सामान्य नियमको समझ लें और अुसका पालन करे तो सब दुखकी जड काट सकते है। कोअी जालिम मजलूमकी सहायके बगैर जुल्म नही कर सका है। अितना पाठ सीख ले तो कैसा अच्छा होगा?"

बापूकी स्वावलम्बन और बुराअीके साथ असहयोगकी अिस सीखने हमें अुस निराशाके वातावरणमें भी बडा बल दिया। जो लोग ब्रिटिश हस्तक्षेपकी परावलम्बी नीति पर दारमदार रखते थे, अुन्हे भी अिस अुपदेशने विचार करनेकी काफी सामग्री दी।

३३

अुस दिन बापूका मौन था, फिर भी स्व० मणिलालजी कोठारी और मैं जब अुनके पास पहुंचे तो अुन्होने परिषदके लिअे नीमूचाणा सम्बन्धी प्रस्तावका मसौदा भी खुद बनाकर दे दिया। प्रस्ताव अंग्रेजीमें था जिसका हिन्दी अनुवाद यह है

"देशी राज्योकी प्रजाकी यह परिषद अलवर राज्यान्तर्गत नीमूचाणाकी अमानुषिक दुर्घटनाओ पर खेद प्रगट करती है और अिससे भी अधिक खेद अिस बात पर प्रगट करती है कि राज्यने अपनी पुलिस और अफसरो द्वारा किये गये घोर अत्याचारो और अनियमितताओंके कारणो और विस्तारकी खुली और निष्पक्ष जाच करनेकी अनुमति न देनेका दुराग्रह किया है।

"यह परिषद अनेक शोकदग्ध कुटुम्बो, आहत व्यक्तियो और अुन लोगोंके प्रति, जो कानून और व्यवस्थाके नाम पर अपनी सम्पत्तिके अकारण नष्ट कर दिये जानेसे गृहहीन हो गये है, हार्दिक सहानुभूति प्रगट करती है और चाहती है कि वह नीमूचाणाके लोगोकी अिस सकटके समय कुछ कारगर सहायता करनेमें समर्थ हो।"

अिस मसौदेसे जहा यह स्पष्ट था कि बापू सदा निष्पक्ष जाचके बाद ही कोअी निर्णय करनेके पक्षमें थे, वहा वे पीड़ितोके प्रति कोरी हमदर्दी जाहिर करके या झूठी आशाअें दिलाकर ही सन्तोष नही कर लेना चाहते थे बल्कि अुनके [illegible] निवारणके लिअे कुछ न कुछ प्रत्यक्ष कार्रवाअी करनेकी भी अपेक्षा [illegible] रखते थे। अन्याय और अत्याचार-पीडितोंके लिअे अुनके दिलमें दर्द [illegible] और सक्रिय रहता था। यह मेरी अुनमें पायी [illegible]

३४

महान सुधारक बापूने मानव-जीवनके किसी भी महत्त्वपूर्ण क्षेत्रको अछूता नहीं छोड़ा था। जिनलिंगे विवाह जैसे बड़े धार्मिक और सामाजिक संस्कारको परिष्कृत करनेकी ओर अुनका ध्यान जाना स्वाभाविक था। अुन्होंने अेक सात्त्विक, सरल, संक्षिप्त और मितव्ययी विवाह-पद्धति बना ली। जहां तक मैं जानता हूं अुसे कार्यान्वित करनेका प्रथम अवसर २६ फरवरी १९२६ को अुपस्थित हुआ। अुस दिन जमनालालजीकी बड़ी लड़की कमलाका विवाह था। जमनालालजी स्वयं अुत्कट समाज-सुधारक थे। अुनके सुधारवाद पर पश्चिमकी निरी आधुनिकताके बजाय भारतीय आध्यात्मिकताकी छाप थी। अुन्होंने बापूकी अुपस्थिति और पथप्रदर्शनमें अपनी लड़कीकी शादी करानी चाही। अुनके थोड़े-से निकट मित्रोंमें मैं और अजनाबेन भी निमन्त्रित थे। जहां तक मुझे खयाल है बापूने काकासाहब कालेलकरसे कहकर अपनी विवाह-पद्धतिको पहली बार लेखबद्ध कराया और आश्रमके संगीत-शिक्षक पं० नारायण मोरेश्वर खरेके हाथों विवाह-विधि सम्पन्न हुअी। विधिमें केवल सप्तपदीका संस्कार हुआ और सारा काम कोअी घंटे भरके भीतर निपट गया। वर-वधूने अेक दूसरेके गलेमें मालाएं पहनाअी और दोनोंने सब बुजुर्गोंके पैर छुअे। अिसके सिवा और कोअी रस्म नहीं हुअी। बापूके आशीर्वाद प्राप्त करना अैसे मौकों पर जरा महंगा सौदा होता था। दोनों जीवन-साथियोंको पीठमें जोरकी धप्पा खानी पड़ती थी।

बादमें तो विवाहोंके लिअे बापू अपने आशीर्वादकी कड़ी शर्तें लगाने लगे थे। अन्तर्जातीय, अन्तर्प्रान्तीय, या विधवा-विवाह हों या हरिजन कन्या या वरसे विवाह, अिनमें से कोअी अेक बात होनी आवश्यक थी। अेक सगाअीको अुन्होंने अुभय पक्षसे यह प्रतिज्ञा करा कर अपनी शुभकामनायें दी थीं कि वे ५ वर्ष तक या स्वराज्य मिलने तक (जो भी अवधि कम हो) विवाह नहीं करेंगे और तब तक शुद्ध प्रेम-सम्बन्ध रखेंगे। अपने अेक आत्मीय पर अुनके पवित्र स्नेहकी परीक्षा लेनेके लिअे कअी साल तक कुआरे रहनेका ही नहीं, बल्कि अुसकी प्रियतमा लड़कीसे सर्वथा सम्पर्क न रखनेका बन्धन लगानेकी अुनकी बात तो मशहूर ही है। अेक दूसरे अजीजसे बापूने विवाहके बाद भी कुछ वर्ष तक संयम रखनेकी शर्त कराअी थी। अवश्य ही ये मर्यादायें खुशीसे स्वीकार की गअी थीं और अुनके पालनमें सम्बन्धित व्यक्तियोंको अपने प्रेरकके महान संयमके अुदाहरणसे काफी बल मिलता था।

कमलाके मामलेमें जहां तक मुझे मालूम है बापूका विवाहमें ही वास्ता था, अुसकी सगाअीमें अुनका कोअी हाथ नहीं था। अिसके बाद दो विवाह और हुअे, अिनमें सम्बन्ध तय होनेमें भी बापूने दिलचस्पी ली थी। अुन दिनों मैं साबरमती आश्रममें ही था। अेक तो था स्व० मगनलालभाअी गांधीकी छोटी लड़की रुक्मिणी बहन और जमनालालजीके अेक दूसरे निकटवर बनारसीलाल बजाजका और दूसरा

था अुदयपुरके श्री शकरलाल अग्रवाल और श्री जयसुखलाल गाधीकी पुत्री अुमिया बहनका। ये दोनो सम्बन्ध जमनालालजीने कराये थे। आगे चलकर तो अुनके हाथो अितने सम्बन्ध हुअे कि अुनके अिष्ट मित्रोमें अुनका अुपनाम 'शादीलालजी' पड गया था।

३५

गाधी परिवारकी अिन दो कन्याओका सबध जिस प्रकार हुआ, अुससे मुझे बापूका तरीका और बातोकी तरह पूर्व और पश्चिमकी पद्धतियोके समन्वयका मालूम हुआ। वह न तो रूढिवादियोकी तरह माता-पिता द्वारा वरके सिर पर चाहे जैसी कन्या और कन्याके मत्थे चाहे जैसा वर थोप देनेका था और न पश्चिमकी भाति अुच्छृखल प्रणय (Courtship) द्वारा अुत्तेजित विकारोके वेगमें किये जानेवाले निर्णयका था। अुनकी पद्धतिके अनुसार अेक पक्षके माता-पिता या अभिभावक दूसरे पक्षके घराने, अुसके सस्कार और स्वभाव आदिकी जाच करे और अुनके आधार पर लडके-लडकीको अुचित सलाह दे दें। मगर अतिम निर्णय अुन्ही पर छोड दें। मुझे यह तरीका जच गया, क्योकि अपरिपक्व बुद्धिके युवक-युवतियोको अिसमें बुजुर्गोके अवकाश, अनुभव और ज्ञानका लाभ मिल जाता है और आखिरी फैसला करनेकी जिम्मेदारी वे अुठाते हैं जिनके लिअे जीवनभरका प्रश्न है।

३६

कमला बजाजका विवाह गुजरात विद्यापीठके स्नातक रामेश्वर नेवटियामे हुआ। अुस अवसर पर बापूने वर-वधूको जिन शब्दोमें आशीर्वाद दिया, अुनका सार अुस समय मैंने हमारे हिन्दी साप्ताहिक 'तरुण राजस्थान' में अिस प्रकार दिया था :

"हिन्दू जातिमें जो विवाह होता है अुसमें बहुत आडबर होता है। राग-रग, नाच-तमाशा, खाना-पीना, और अनेक प्रकारका प्रलोभन होता है। विवाहका धार्मिक अश, जिसके कारण विवाह करना योग्य समझा गया है, भुला दिया जाता है। पैसा अितना खर्च किया जाता है कि गरीबोके लिअे तो विवाह करना [illegible] हो जाता है। कअी लोग अैसे कर्जदार हो जाते हैं कि जन्मभर [illegible]। जिन विवाहमें अितना आडबर अितना अपव्यय और [illegible] हो, अुससे वर और कन्या नयमनय जीवन व्यतीत [illegible]। जिन (सत्याग्रह) आश्रमका आदर्श [illegible] करनेवाले किसी पर बलात्कार नहीं [illegible]। अैसे [illegible] कर सकते, अुनके लिअे विवाह [illegible] प्रकार विवाह करनेवालोको आशीर्वाद [illegible]।

हिन्दुस्तानमें और जहा कही भी विवाहमें धार्मिक विधि मानी जाती है वहा अुसमें सयमका अश होता है। स्मृतियोमें लिखा है कि जो दपती नियमसे रहते हैं वे भी ब्रह्मचारी हैं। जो लोग अपने विकारोका सर्वथा नाश नहीं कर सकते, वे मर्यादामें रह कर विकारो पर अकुश रखते हुअे केवल अुतना व्यवहार कर सकते हैं जितना अनिवार्य हो।

"मारवाडी समाजमें धन बहुत है और खर्च भी अधिक होता है। अिससे गरीबोको विवाह करना अशक्य-सा हो जाता है। फुलवाडी, भोजन, रोशनी और नाच होता है। अिसका असर सारे मारवाडी समाज पर और हिन्दूजाति पर ही नही, मुसलमान अित्यादि जातियो पर भी पडता है। अिससे आप सोच सकते है कि धनवानो पर कितनी जिम्मेदारी है। मारवाडी लोगोमें धन और दुराचार होते हुअे भी धर्मके लिअे प्रेम है। अिसलिअे मैंने और जमनालालजीने सोचा कि विवाह सादगीसे किया जाय। अत आप देखेंगे कि अिस विवाहमें आडंबर नही होगा, नाचगान नही होगा, और केवल धार्मिक विधिया ही की जायगी। आप अिसमें साक्षी हो, सम्मत हो और अनुकरण करनेकी प्रतिज्ञा करे। हिन्दुस्तानमें थोडेसे धनवान और बाकी कगाल ही कगाल है। यहा जितने लोग भूखके मारे मरते, कष्ट पाते और जडवत् रहते है, अुतने ससारमें किसी देशमें नही है। यह बात हमारे राज्यकर्ता अितिहासकारो तककी कही हुअी है। अैसे गरीब देशके करोडपतियोको अैसा काम करनेका अधिकार नही है जिसमे गरीबोके पेटमें दर्द हो। वनिक लोग धन भी अिन्ही गरीबोको और गरीब बनाकर कमाते है। अैसी हालतमें अितना ही धन खर्च करना चाहिये जितना धर्मके लिअे अनिवार्य हो और बचा हुआ धन परोपकारमें खर्च करना चाहिये। अिस दृष्टिसे यह विवाह अनुकरणीय है। यह सामान्य सुधार नही है, अिसकी जड खूब भीतर जाती है। जमनालालजीके पास धन होते हुअे भी अुसका अुपयोग अिसमें नही किया गया। अिसका परिणाम अच्छा ही होगा, क्योकि गीताजीमें भी लिखा है कि श्रेष्ठ लोग जो करते हैं अुसकी देखादेख दूसरे लोग भी करते है। रामेश्वर और कमला दोनो समझ सकते हैं। अुन्हें समझना चाहिये कि विवाह स्वच्छदताके लिअे, विकारका गुलाम बननेके लिअे नही है। गृहस्थाश्रम अूचे भाव बटानेके लिअे है। विकारवश केवल सन्तानकी अिच्छा होने पर ही हो सकने है। रामेश्वरको मैं यह बात बता देना चाहता हू कि स्त्री पुरुषकी गुलाम नही, अर्धांगिनी है, सहधर्मिणी है, और मित्र है। यह दम्पती शिव-पार्वती, सावित्री-सत्यवान या सीता-रामके समान आदर्श हो। हिन्दू धर्मने स्त्रियोको बहुत अुच्च स्थान दिया है। मैं अिन दोनोको आशीर्वाद देता हू कि ये दोनो दीर्घायु हो, अपने बडोको सुशोभित करे और धर्मकी रक्षा तथा देशकी सेवा करे।"

३७

श्री शकरलाल अग्रवाल और अुमिया गाधीका विवाह ४ दिसम्बर, १९२९ को हुआ। यह विवाह केवल अन्तर्प्रान्तीय ही नही, बल्कि अुपजातीय भी था। अग्रवाल और मोढोमे विवाह-सम्बन्ध नही होते। किन्तु यही दो विशेषताअें अिस विवाहमे नही थी। श्री शकरलालकी अवस्था २५ के आसपास और अुमिया बहनकी १८ से अूपर थी। दोनोकी परस्पर समतिसे विवाह-सबध हुआ था। सिर्फ ४५ मिनटमें सारी विवाह-विधि सम्पन्न हुअी। वर-वधू तो खादी पहनते ही थे, अुदयपुर-मेवाडके बराती भी खादी पहनकर आये थे। बरातियोको भोजन वही खिलाया गया, जो आश्रममे नित्य आश्रमवासी करते है। विवाह-विधिके समयके अलावा कही किसी तरह यह नही मालूम होता था कि कोअी अुत्सव हो रहा है। बापूजी चाहते थे कि आश्रम-वासी अैसे आदर्शको पहुच जाय कि अेक ओर विवाह हो रहा हो और दूसरी ओर किसीकी शवयात्रा होती हो, तो दोनो काम हम शान्ति और स्थिरताके साथ अपने मनको डावाडोल न होने देते हुअे कर सकें। जनन, मरण और परण (विवाह) ये तीनो समाज-जीवनमें अैसा स्वाभाविक स्थान ले लें कि हमें अिनमें कोअी असाधारणता न मालूम हो। अिसलिअे तमाम विवाह-व्यवस्थामे कही भी असाधारणता या दैनिक जीवनसे भिन्नता न दिखाअी देती थी। विवाहके दिन वर-कन्याने अुपवास किया, और गो-पूजा, सामाजिक सफाअी जैसे कुअेंके आसपास और गोशालामें, तुलसी-पूजा, कताअी-यज्ञ और गीता-अध्ययन, अितने सामाजिक और धार्मिक काम किये। फिर शामको मधुपर्क, कन्यादान और सप्तपदीकी विधियोके बाद विवाह कार्य समाप्त हुआ। अुस दिन बापूने सुबह-शामकी प्रार्थनामें वर-वधूको आशीर्वाद देते हुअे जो पवित्र वचन सुनाये, अुनका अुपरोक्त वर्णनके साथ अेक मासिकमें यह साराश दिया गया था

"किसीके मनमें यह प्रश्न अूठेगा कि आश्रम और विवाह, अिन दो बातोका मेल कैसे बैठ सकता है? अिसका अुत्तर यह है कि अिसमें परस्पर कुछ भी विरोध नही है। जो ब्रह्मचर्यका पालन कर सकें वे ब्रह्मचारी रहे और जो न कर सकें वे विवाह कर लें, यह अुचित है। कोअी यह न समझें कि ब्रह्मचारी सभी अच्छे होते हैं और विवाहित सभी घटिया होते हैं। हो सकता है कि गृहस्थ गुणवान हो और ब्रह्मचारी दम्भी। यही कारण है कि विवाहको अुपाधि समझते हुअे भी हम अिष्ट मानते हैं।

"अिस विवाहमें हम अेक कदम आगे बढे हैं। मणिलाल (बापूके द्वितीय पुत्र)के विवाहमें हमने जातिकी बाड तोडी, अिस विवाहमें प्रान्तकी सीमाको लाघा। गुजरातसे मेवाड गये। यह शुभ चिह्न है। परन्तु अिससे हमारी जिम्मेवारी भी बढ गअी है। हम जो विवाह यहा करते हैं वे धार्मिक विधि और धार्मिक दृष्टिसे करते है। अुनमें मर्यादा-पालनकी चेष्टा रहती है। आजके अिस आपत्कालमें देशकी स्थितिको देखकर यदि अिन्द्रिय-निग्रह कर सकें तो बहुत अच्छी बात है, किन्तु यह बात जोर-जबरसे नही हो सकती। अिसलिअे यदि लडका-लडकी चाहे तो अुनका विवाह कर देना

चाहिये और अुनके लिअे जोडी ढूंढकर अपने आशीर्वादके साथ अुनका विवाह कर देना आश्रमका कर्तव्य है। अब तक अिसीके अनुसार यहा व्यवहार होता रहा है और अुसका फल बुरा नही हुआ। हम बिना किसी आडबरके, थोडे समयमें, पवित्र हृदयके द्वारा विवाह-विधि सम्पन्न करते है, यह हर्षकी बात है।

"अिस विवाहके आरभमें क्षोभ और व्यग्रता अुत्पन्न हुअी थी, पर धीरे-धीरे वह शान्त हो गअी। अिस सम्बन्धमें जितनी सावधानी रखी जा सकती है अुतनी रखी गयी है। वर-वधूकी सम्मति लेकर ही यह विवाह किया गया है। अिसमें मैंने व्यक्तिगत सुखका विचार नही किया है। अिनी बातको अपनी दृष्टिके सामने रखा है कि देशका हित किस बातमें है। अिस विवाहके द्वारा अेक प्रान्त दूसरे प्रान्तके निकट आता है। यह पहला प्रयोग है।"

श्री शकरलालको सबोधन करके कहा, "अिसमें जितनी जिम्मेवारी अुमिया पर है अिनसे सौ-गुनी ज्यादा आप पर है। अुमियाकी हिम्मतको देखकर मुझे खुशी हुअी है। अुसकी अिच्छाओको जानते रहियेगा। हिन्दू समाजमे स्त्रीका स्त्रीत्व कम हो गया है। वह अबला हो गअी है। अिसलिअे आप अुसे स्वतन्त्रता दीजियेगा। आप तो स्काअुट है। स्काअुटका धर्म है सबकी रक्षा करना। अुमिया यहू न अनुभव करे कि मुझे दुख है। वह यही समझती रहे कि यहा तो सब मुझ पर प्रेमामृत बरसाते है। मैं अुसे हिन्दी अधिक न पढा सका—सो अुसे निबाह लीजियेगा। यदि सब अपनी-अपनी जिम्मेदारीको समझकर काम करे, तो मारवाडी और गुजरातीमें भेद नही रह सकता। धर्म और मर्यादाको कभी न भूलियेगा। दोनोसे कहता हू कि मर्यादित रहकर भोगोको भोगना और अपने देशको कभी न भूलना।

"अुमिया, तुमने क्या कहू? अितना समय नही कि तुमसे अकेलेमें बातचीत करू। तुमने बहादुरी दिखाअी है। तुम अपने कुल, प्रान्त और आश्रमकी कीर्ति बढाना। तुम्हारे हाथसे कोअी बुरा काम न हो। मैंने तुम दोनोको छोटासा हार पहनाया है। पर मेरी दृष्टिमें यह बडा है। गीताजीका रोज पाठ करना। जब जब मनमे निराशा आने लगे तब तब भजनावलिमें से भजन गाना। फुरसतके समय तकली कातना और आनदमे रहना। अीश्वर तुम लोगोको सच्चे सेवक-सेविका बनावे, दीर्घायु करे। तुम दोनो अिस तरह जीवन बिताना कि मुझे पश्चात्ताप न हो।"

३८

सन् १९२८ की बात होगी। अुस जमानेमें राजस्थानमे तीन दल काम कर रहे थे। प० अर्जुनलालजी सेठीके नेतृत्वमें काग्रेस, सेठ जमनालालजीके अधीन गाधी-सघी कार्यकर्ता और हमारा राजस्थान-सेवा-सघ। तीनोमें सहयोग नही था। भीतर ही भीतर विरोधका भाव भी था। जमनालालजी चाहते थे कि मैं अुनके साथ काम करू। परन्तु मेरे विचार अुस वक्त तक पूरी तरह नहीं बदले थे। फिर भी गाधीजीके प्रति आकर्षण तो बढ ही रहा था। अितनेमें ही पथिकजी मेवाड़के लम्बे

कारावाससे छूट कर आये तो गाधी विचारधारासे काफी प्रभावित दिखाअी दिये। मैंने अिसे अनुकूल अवसर समझ कर अुन्हे बापूके पास जाकर चर्चा करनेका सुझाव दिया। तदनुसार पथिकजी साबरमती गये। जमनालालजी भी पहुचे। परन्तु नेतृत्वकी चट्टानसे टकराकर सहयोगकी नाव टूट गअी। बापू चाहते थे कि राजस्थानके मामलोंमें जमनालालजी अुनके मुख्य प्रतिनिधि हों और शेप कार्यकर्ता सेठजीके साथी बनकर रहे। पथिकजी गाधीजीसे सीधा सम्बन्ध रखना चाहते थे और जमनालालजीको अपना नेता माननेको तैयार नही थे। बापूको अेक म्यानमें दो तलवारोंकी कार्यपद्धति व्यावहारिक दिखाअी नही देती थी। वे अपना नुमाअिंदा अैसी व्यक्तिको बना सकते थे जिसने अुनकी विचारधारा और कार्य-पद्धतिको अच्छी तरह समझ कर अपना लिया हो। दूसरा आदमी भले ही अधिक पुराना या सक्षम हो तो भी अुस पर अुनका अितना विश्वास न होना स्वाभाविक था। मुझे अिस निर्णयके परिणाम पर अुस समय दुःख तो हुआ, मगर अिससे बापूकी व्यवहार-कुशलताका परिचय जरूर हुआ।

३९

अिस घटनाके अेक साल बाद मेरा सपूर्ण विचार-परिवर्तन हुआ। हिंसाकी नीतिकी निष्फलता और अनिष्टताका कायल तो मैं आठ वर्ष पहले ही हो चुका था। अिस अर्सेके अनुभवों और पिछले दो बरसके झगडोंने 'शठ प्रति शाठ्यम्' के परिणाम अितने नग्न और भयकर रूपमें दिखाये कि १९२१ में आत्मा गाधीजीकी ओर प्रबल वेगसे आकृष्ट हुआ। अुस समय मैं ब्यावरसे 'यग राजस्थान' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक निकाल रहा था। सेठ जमनालालजीके वसीलेसे मैं अगस्त या सितबरमें साबरमतीके लिअे रवाना हो गया।

रास्ते भर मेरे मनमें बडी अुथल-पुथल रही। बापूसे मैं कअी बार मिल चुका था। मगर अिस बारका मिलन बडा गभीर होने वाला था। मुझे अुनकी विचार-धारा स्वीकार करनी थी। अुनके मार्गको अपना जीवन-पथ बनानेकी मनमें ठान [illegible] थी। क्या वे मुझे स्वीकार करेंगे? क्या मैं अुनके विचारों और कार्यक्रमको हृदय और बुद्धिसे स्वीकार कर सकूगा? क्या अुस पर मन-क्रम-वचनसे चल सकूगा? अुनसे खुलकर बात कर सकूगा? अुनके सामने अपनेको नग्न रूपमें रख सकूगा? अुनके सम्मुख अपनी सारी शका-प्रशका और सारी समस्याअें निःसंकोच पेश कर सकूगा? सबसे बडा पसोपेश यह था कि अुन्होंने अगर अखबार [illegible] सकूगा? क्या अपना नया किन्तु प्रबल मोह त्याग देनेका साहस होगा? [illegible] या अुनकी पद्धतिमें तारापलट करनेकी आज्ञा दी तो क्या अुसे पालन कर [illegible] क्या अपने तेज स्वभावको काबूमें रख सकूगा? ये और अैसे [illegible] मनमें अुठ रहे थे। दूसरी ओर [illegible] भावनासे और [illegible]

समागम होगा और साथ रहनेका अवसर मिलेगा। जिससे हृदयमें उत्साह और आनंद लहरें मार रहे थे।

मैं दोपहरको अहमदाबादमें अेक परिचितके यहा खाना खाकर और आराम करके तीन बजेके करीब तागेसे साबरमती पहुचा। आश्रम १९२० की कांग्रेसके समय देख चुका था। मगर वह अवलोकन था, यह तीर्थयात्रा थी। जिस बार दूरसे ही अुसके मकानों, वृक्षों और खेतोंका आकर्षण प्रतीत हो रहा था। हर कदम पर प्रतीक्षा और अुत्सुकता तीव्र होती जा रही थी। अन्तमें सड़क पर जिमलीके पेडके नीचे तागा ठहरा और मैं पूछता हुआ दफ्तरमें पहुचा। अपने आनेकी खबर बापूको पहले दे चुका था। मालूम होता है अुन्होंने मत्रीको पहले ही सूचना दे रखी थी, जिसलिअे सामान वहीं छोडकर मुझे तुरत 'हृदय-कुज' में बापूके सामने खडा कर दिया गया।

साबरमतीके पश्चिमी तट पर स्व० मगनलालजी गाधीकी कुटियाका वह कमरा था, जिसमें कअी खिडकिया और दरवाजे थे जो सब खुले थे। बापू अेक गादी पर मसनदके सहारे बैठे थे। अेक चौकी अुनके सामने थी। कमरेमें बैठनेकी दीवारोंसे लगे हुअे खादीके पातिये बिछे हुअे थे। बीचका आगन खाली था। यह व्यवस्था बापूकी प्रिय किफायतशारीका नमूना पेश कर रही थी। मुझे देखते ही मुस्कराकर पूछा - "आ गये? मगर क्या गाडी लेट थी? मैंने तो तुम्हारे लिअे खाना रखनेको भी कह रखा है।" अुन मुस्कानमें कितनी हार्दिकता, कितनी मोहकता थी! अुस प्रश्नमें कितनी आत्मीयता और भिन्न भिन्न दिशाओंसे आनेवाली रेलगाडियोंके समयकी कितनी जानकारी थी! मैंने विलबका कारण बताया। बापूका दूसरा सवाल था, "अखबारके सपादनका क्या प्रबध किया? पीछेसे कोअी सभालनेवाला है?" मैंने कहा, "जी, है।" "फिर भी तुम्हें यहासे लिखकर भेजते रहना चाहिये। मैं तो बाहर होता हू तो बराबर लिखकर भेजता रहता हू।" मैंने कहा, "बहुत अच्छा।" बात यहीं खतम हुअी। मेरे ठहरनेकी जगहका निश्चय करके मुझे आश्रम देख लेनेकी आज्ञा हुअी।

४०

लगभग अेक मास मैं महात्माजीके निकट सान्निध्यमें रहा। अुनके आदेशानुसार मेरा यह कार्यक्रम था कि दिनभर अुनके पास बैठा तकली चलाया करता, अुनकी गतिविधिया देखा करता, अुनके सभाषण सुना करता और अवकाशमें अुनसे अपनी शकाओंका समाधान किया करता। अुन्होंने दूसरे ही दिनकी बातचीतमें मुझे पूरी तरह निर्भय करके मुझसे मेरे जीवन और कार्यका सक्षिप्त इतिहास सुन लिया था और मैंने भी अपनेको खुली किताबकी तरह अुनके सामने रख दिया था। अुन्होंने मुझे स्पष्टतासे नर्वस कर दिया था कि कोअी अुनसे अेकान्तमें बात करनेकी अिच्छा प्रगट करे तब मैं अुठकर चला जाया करूं। जिस चेतावनीने मुझे अपनी नाजुक तबीयत तरह गाधीवादी बना दिया।

४१

अिस प्रवासमे मुझे आश्रममें दाद हो गयी। बापूको पता चला तो अुन्होने अुसे देखा और, जैसा कि अुन्हे शौक था, मुझे अपने अिलाजमें ले लिया। वे रोज जहा जहा दाद थी खुद अपने हाथसे हल्का तेजाब लगाते। मुझे शुरूमें सकोच तो हुआ, परन्तु अितने बडे आदमीके निकट सम्पर्कके गर्व और आनन्दकी अनुभूतिसे दूसरे ही दिन सारा सकोच काफूर हो गया। बापूके रोगियोके प्रति सेवाभावका यह पहला अनुभव बडा सुखद था। अुनकी चिकित्साके दूसरे अग ये थे कि मुझे अेक दिनका अुपवास करना पडा, रोज दो पुडिया शोधे हुअे गधककी खानी पडती और अेनिमा लेना पडता। भोजन तो आश्रमका शक्कर और मसालेसे रहित और बिना तला या छोका हुआ था ही। वह मुझे बहुत पसद आया और बादमें तो अुसकी वैज्ञानिकताके कारण कुछ परिवर्तनके साथ वह मेरा साधारण आहार ही बन गया।

अिसी प्रवासमें मुझे पहली बार पता लगा कि अुन दिनो बापूके चिकित्सा-शस्त्रागारमें अुपवास, अेनिमा, स्पन्ज, गधक और कुनेन—ये पाच ही अमोघ अस्त्र थे। अिन्ही पाच दवाअिओसे वे सौ रोगोको अच्छा कर लेते थे।

४२

अिस अुपचारके सिलसिलेमें अेक दिन बापूने मुझे अगूर खानेको बताये और बासे माग लेनेको भेजा। मै दो चार कदम ही गया हूगा कि वापस बुलाकर बोले, "मगर देखो, कडवे अनुभवके लिअे तैयार होकर जाना। जो हो सो लौटकर मुझे सुनाना।" मै बाके कमरेमें, जो साबरमतीके किनारे पर था, पहुचा और अगूरोकी माग की। बाके चेहरे पर त्यौरी चढ गअी और प्यारेलालजीको पुकार कहने लगी, 'देखो तो प्यारेलाल, यह कौन आदमी है? बापूके अगूर लेने चला आया है।' सचमुच मुझे बापू पहले ही चेतावनी न दे चुके होते तो मेरा नाजुक स्वभाव अिस ठेसको शायद ही सहन कर सका होता। प्यारेलालजीके आनेसे पहले ही मैंने कहा, 'वा, नया ही आया हू। बीमार पड गया हू। और बापूके भेजनेसे अनिच्छापूर्वक अगूर ले रहा हू।' बाका हृदय तुरन्त पिघल गया, अुनका चेहरा बदल गया और बोली, 'कोअी बात नही। अगूर तो मेरे पास बहुत थे। बापूने और तो सब बीमारोको बाट दिये। ये थोडेसे मैंने अुनके लिअे रख लिअे थे। आपकी जरूरत ज्यादा होगी, अिसी-लिअे भेजा होगा। ले जाअिये।' जब मुझे यह पता लगा कि मै बापूके हिस्सेके लिये जा रहा हू तो अपने पर बड़ी ग्लानि हुअी और लेनेमें हिचकिचाने लगा। परन्तु बाने आश्वासन भरी मुद्रा और वाणीसे मुझे अगूर दे ही दिये और कहामे लगे है, क्या करते थे, घरमें कौन कौन है, आदि पूछताछ करके मुझे विदा किया। मै प्रसन्न था।

बापू शायद मेरे गमगीन चेहरेकी बाट देख रहे थे। जब मैंने यह सब हाल सुनाया तो कहने लगे, "बस, बाकी यही बात है। जहा अपने मेरी कोअी चीज छिनती दिखती है तो अुखड पडती है। परन्तु हृदय अथाह समुद्रकी तरह हमदर्दीसे भरा है। जहा दूसरेके कष्टका पता चला कि वह मोम हो जाता है। फिर तो मेरा मोह भी भस्म जाती है।" मेरा मन बापके पातिव्रतधर्म और स्नेहपूर्ण हृदयके अिस वर्णनके अेक अेक अक्षरसे सहमत था। कालान्तरमें यह अनुभव कअी बार ताजा और पुष्ट हुआ।

४३

अेक दिन सरदार वल्लभभाअी और बापू बैठे थे। बापूके सामनेकी चौकी पर अुनका लिखने-पढनेका सामान रखा रहता था। अुनकी पेंसिल शायद दाअी ओर रही होगी। सरदारसे बात करते करते अुन्होंने पेंसिलके स्थान पर हाथ बढाया तो वह वहा नहीं थी। बाअी ओरको मिली। मैंने देखा कि बापूके मुखमडल पर हलकी-सी क्षोभकी रेखा आ गअी थी। तुरत प्यारेलालजीको आवाज दी। वे सामने आकर खडे हुअे तो पूछा, 'मेरी पेंसिल कहा रख दी थी?' प्यारेलालजी प्रश्नके तर्ज और बापूकी मुख-मुद्रासे फौरन् ताड गये और निरुत्तर होकर छतकी ओर निहारने लगे। अुन्हें हतप्रभ देखकर सरदारने स्थिति सभाली और मुस्कराकर कहा, 'पेलो कवि छे' (ये तो कवि है)। बापू हस दिये और सरदार तो खिलखिला ही पडे। मुझ पर यह असर हुआ कि बापू कमालके व्यवस्थित आदमी हैं और वे तथा सरदार दोनो ही कवियोंको अव्यवस्थित प्राणी मानते है। सरदारके जानेके बाद मैंने पूछा 'बापू, बात तो बहुत छोटी थी?' बापू तुरत गभीर होकर कहने लगे, 'मनुष्यके जीवनमें व्यवस्थितता होना बहुत आवश्यक है। यदि सूर्य, चद्र और पृथ्वी निसर्गके नियमोका पालन न करे, तो क्षणभरमें सारा विश्व अस्तव्यस्त हो जाय। मेरे जैसे आदमीका अेक अेक क्षण काममे भरा रहता है। मेरी चीजें जगह पर न मिले तो मेरा कितना समय बर्बाद हो जाय, मुझे कितनी असुविधा हो, कार्यमें कितनी हानि हो सकती है? मेरे निकटके साथियोको तो अिन सब बातोका ध्यान रहना ही चाहिये। और तुम जानते हो अंग्रेजीमें गदगीकी क्या व्याख्या है?' 'जी, नही,' मैंने अपना अज्ञान प्रकट किया। वे बोले, 'Anything out of place is dirt' (कोअी वस्तु अपने स्थान पर न हो तो वही कचरा है।) मलमूत्र ठीक ढगसे खेतमें पहुच जाय तो धरती सोना अुगलने लगती है और अिधर अुधर खुला पडा रहता है, तो वही अनेक रोग अुत्पन्न करता है। रद्दी कागज ठाठे या कागज बनाने और जलानेमें अुपयोगी है, मगर खादमें डालनेमे व्यर्थ जाता है। रेल्वेका सिग्नलमैन जरा अव्यवस्थित हो जाय तो रेलगाडिया लड जाय और मैंकडो जानें चली जाय।' स्वच्छता और नियमितता पर यह नया प्रकाश मेरे पहलेसे ही व्यवस्था और सफाअीपसद स्वभावको खूब भाया और अुसे पक्का करनेमें सहायक हुआ।

४४

अेक दिन भोपाल राज्यमें काम करनेवाली अेक मिशनरी महिला आयी। शायद अमरीकी थी। बुढियाको भारतमें सेवाकार्य करते कयी साल हो गये थे। अुसने देहाती जनताकी दरिद्रताको दूर करनेके सवाल पर चर्चा छेडी। चरखेकी आलोचना करके सिंचाअीके साधनोंको बढाकर खेतीकी हालत सुधारनेका अुपाय सुझाया। मैं देख रहा था कि बापूके चेहरे पर अुतार चढाव आ रहे हैं। पहले तो वे मुस्कराकर सुनते रहे, फिर गंभीर हुअे और अन्तमें अुनके माथे पर सल पड गये। वे बोले, 'बहन, मेरे दिलमें स्त्री-जातिकी अितनी अिज्जत है कि मैं कभी अुन्हें कडवी बात नहीं कहता। विदेशियोंको तो पुरुष होने पर भी नहीं कहता। परन्तु आपको अितने दिन काम करते हो गये, फिर भी आपका अज्ञान अितना भारी है कि मुझे यह कहना पडेगा कि आपने समस्याको कुछ भी नहीं समझा। मुझे चरखेसे कोअी मोह नहीं है। परन्तु भारतके गावोंकी वर्तमान स्थितिमें वहाकी बेकारी दूर करनेका अिसके सिवा कोअी और अुपाय नहीं है। यह सर्वत्र सुलभ है, पुराने सस्कारोके कारण सरल है और घर पर रहकर काम करनेके लिअे सबसे अनुकूल साधन है। बेशक, अिससे आमदनी बहुत कम होती है, परन्तु देहातियोंकी औसत आमदनी अितनी थोडी है कि यह जरा-सी वृद्धि भी अुनके लिअे नेमत है। और चरखेको आबाल-वृद्ध सभी चला सकते हैं। अिसलिअे थोडी थोडी करके भी सबकी सम्मिलित सहायता काफी हो जाती है। स्त्रिया अपनी लाजको बचाती हुअी अिस पर काम कर सकती हैं। यदि कोअी मुझे दूसरा अुपाय अिससे अच्छा बता दे, जिसमें अिन गुणोंसे ज्यादा गुण हों, तो मैं सारे चरखे अिकट्ठे करके विदेशी कपडेकी तरह ही जला दूगा और अेक भी आसू नहीं बहाअूगा।' वृद्धाका मुखमडल पहले तो कुछ तमतमाया-सा दिखायी दिया, परन्तु बापूने जब अपना लम्बा प्रवचन समाप्त किया तब पादरिन सतुष्ट हो गअी थी। दोनों हाथ जोडकर वह अुठी, तो बापू भी अुठे और कमरेके दरवाजे तक पहुचा कर लौट आये। मैंने बापूको दूसरोंके लिअे अुठते तो देखा था, मगर अितना शिष्टाचार करते पहली ही बार देखा। मेरा अनुमान है कि बुढियाको कडवी घूट पिलाने पर अुनकी मानवता अुमड आयी थी। मेरे लिअे वृद्धिपूर्वक खादीका महत्त्व समझनेको यह प्रवचन काफी था। अिससे पहले मेरा खादी-प्रेम भावनाप्रधान था। अब अुसमें ज्ञानका भी पुट लग गया।

४५

अुन दिनों अहमदाबादके मिल-मालिकों और मजदूरोंमें मजदूरी वगैराके मामलेमें मतभेद था। बापू मजदूरोंकी और मिल-मालिक सघके अध्यक्ष सेठ मगलदास मालिकोंकी तरफसे पच थे। अेक दिन सेठजी बापूसे अुस विषय पर परामर्श करने आये। मजदूरोंका न्यूनतम जीवन-स्तर तय करने और अुसके अनुसार मजदूरीकी दरें निश्चित करनेकी चर्चा हुअी। बापूने मजदूरोंकी आवश्यकताओंमें बीडी-तम्बाकूका खर्च भी

शामिल करनेका प्रस्ताव किया। मुझे आश्चर्य हुआ और सेठ मगलदासने अुसका विरोध करते हुअे कहा, "फिर तो शराबका खर्च भी क्यों न गिना जाय?" बापूने झटसे अुत्तर दिया, "अिसमें अुनमे बहुत फर्क है। तम्बाकू किसान-मजदूरके लिअे दैनिक आवश्यकताकी वस्तु बन गअी है। मैं तो चाहता हू कि कोअी तम्बाकू अिस्तेमाल न करे। अपने डगने यह प्रचार मजदूरोमें कर भी रहा हू। परन्तु अुसकी मद्यपानसे तुलना करना न हमारा विवेक होगा और न मजदूरोंके साथ न्याय। भारतमें मदिरा किसी भी वर्गकी रोजमर्राकी जरूरत नही बनी है और न अिस व्यसनको मजदूर ही अुचित या आवश्यक मानते है। अिसकी अुन्होने माग भी नहीं की। पर तम्बाकूके खर्चके लिअे तो अुनका आग्रह है। हमें अुसे स्वीकार कर लेना ही चाहिये। अच्छी बात भी हम किसी पर थोप नही सकते।" बूढा सेठ अिस तर्कसे कायल हो गया। मुझे दूसरोका सुधार करनेमें विवेकसे काम लेनेका पदार्थपाठ मिल गया। मगर बापूकी श्रम और पूजी सबधी नीतिका ज्ञान नहीं हुआ। वह अुन्होने स्वय सेठके चले जाने पर यू कराया .

"मैं श्रम और पूजीमें जन्मजात वैर नही मानता। वे दोनो बराबरके हिस्सेदार है। दोनो ही अुद्योगके मालिक है। कारखानेदार स्वामी और मजदूर नौकर नहीं है। श्रम ही असली पूजी है, अिसलिअे मजदूरका दर्जा ऊचा है। मगर पूजीपतियोमें जो बुद्धि और व्यवस्थाशक्ति है, अुसका भी अुपयोग अुद्योगकी सफलताके लिअे आवश्यक है। वह अुपयोग धनिक वर्ग सम्पत्तिका मालिक न बनकर सरक्षक (ट्रस्टी) होकर ही अुत्तम रूपमें दे सकता है। मेरा सिद्धान्त डार्विनके जीवन-सघर्षके मतसे अुलटा है। मैं सहयोगको ही प्राणियोका धर्म और स्वभाव मानता हू। श्रममें अधिकार और पूजीमें कर्तव्यभाव अधिक जाग्रत हो, मेरी यही सामजस्यकी नीति है। वर्गयुद्धको मैं अस्वाभाविक, अनावश्यक और अहितकर मानता ह। अिसे टालनेके लिअे मैंने सभी झगडोकी तरह श्रम और पूजीके बीच पच फैसलेकी प्रणाली जारी की है। मेरा विश्वास है कि विवादग्रस्त मामलोको निपटानेके लिअे यही सर्वोत्तम मार्ग है और भारतको ही नहीं, ससार भरको किसी दिन अिस भद्रोचित अुपायका ही आश्रय लेना होगा।"

बापूने यह आखिरी बात अितने आत्मविश्वासके साथ कही कि मेरे मनमें अुसी दिन सुबहकी प्रार्थनामें गाअी गअी कबीरकी यह वाणी गूजने लगी

सो चादर सुर नर मुनि ओढी,
ओढिके मैली कीन्ही चदरिया।
दास कबीर जतनसो ओढी,
ज्यूकी त्यू धर दीन्ही चदरिया।'

४६

अेक रोज मैंने अपने शका-समाधानके सिलसिलेमें बापूसे प्रश्न किया, 'मेरी बडी आकाक्षा है कि मेरे हाथसे कोअी बडा काम हो। यह अुचित है या नही? है तो अिसकी पूर्ति कैसे हो?' 'आकाक्षा तो अच्छे कामकी कभी बुरी नही होती,' बापूने कहा, 'परन्तु अिसमें कभी कभी होता यह है कि मनुष्य छोटे छोटे स्वाभाविक कर्मोकी अुपेक्षा करके जिन्हे वह बडे काम समझता या मान बैठता है, अुनके लिअे कृत्रिम प्रयत्न करने लगता है और फिर अुन्हे सफल करनेकी आसक्तिमें दूषित अुपायोका आश्रय लेनेमे भी सकोच नही करता। परन्तु यह तो बताओ, तुम्हे सगीतका कुछ ज्ञान है?' मुझे बीचमें ही अैसा प्रश्न किये जाने पर आश्चर्य हुआ। मै बोला, 'ज्ञान तो खास नही, पर रुचि जरूर है।' 'तो तुमने देखा होगा कि जो अच्छे गवैये होते है, वे स्वर तो अूचा या नीचा वही पकडते है जिसको वे अच्छी तरह निभा सकें, मगर अुस पर अपना सारा जोर लगा देते है। तभी अुनके गानेमें पूरी मिठास और लोच आती है। यही हाल कर्मकलाका है। कर्म छोटा किया जाय या बडा, यह तो अपनी अपनी शक्ति पर निर्भर है, पर जिस कार्यको अगीकृत किया जाय, अुस पर मन, बुद्धि और शरीरकी पूरी ताकत लगा देनेसे ही वह अच्छा होता है।' मै यह तो नही कह सकता कि मेरी मूल शकाका पूरी तरह समाधान हो गया, मगर सगीतवाली दलील जितनी अनूठी थी अुतनी ही पटती हुअी लगी।

४७

रियासतो सम्बन्धी चर्चाके दौरानमें अेक दिन मैंने बापूको यह बतलाया कि महाराजा बीकानेरने अपने राज्यमें 'हिन्द स्वराज्य' का निषेध कर दिया है, तो अुन्हे आश्चर्य-सा हुआ। परन्तु मैंने कारण पूछा तो कुछ याद करके कहने लगे, "हा, अुसमें राजाओके शासनकी कडी टीका है।" अितना कह कर 'हिन्द स्वराज्य' की अग्रेजी प्रति मगवाअी और अिधर अुधर कुछ पन्ने पलट कर बोले, "लो, यह अश देख लो। अैसे अशोंके होते हुअे 'हिन्द स्वराज्य'का वर्जित करार देना अचभेकी बात नही है, बल्कि वर्तमान स्थितिमें अचभेकी बात तो यह है कि अितने दिन तक निषेधाज्ञा क्यो नही निकाली गअी?" वह अश यह था

"You will admit that people under several Indian Princes are being ground down The latter mercilessly crush them Their tyranny is greater than that of the English and if you want such tyranny in India, then we shall never agree My patriotism does not teach me that I am to allow people to be crushed under the heel of the Indian Princes, if only the English retire If I had the power, I should resist the tyranny of Indian Princes just as much as that of the English."

("आप स्वीकार करेंगे कि कभी भारतीय राजाओंकी प्रजाको कुचला जा रहा है। राजा अपना निर्दय दमन करते हैं। अपना जुल्म अंग्रेजोंके जुल्मसे ज्यादा है और अगर आप इस तरहका जुल्म हिन्दुस्तानमें चाहते हों तो हम कभी सहमत नहीं होंगे। मेरा देशप्रेम मुझे यह नहीं सिखाता कि केवल अंग्रेज चले जायें तो मैं लोगोंको राजाओंके पैरों तले कुचला जाने दूं। मुझमें शक्ति हो तो मैं राजाओंके अत्याचारका उतना ही विरोध करूंगा जितना अंग्रेजोंका।")

इससे भी बड़ा आश्चर्य बापूको तब हुआ जब मैंने कहा, "बापू, महाराजा साहब हिन्दी नहीं पढ़ते। हिन्दी अखबारोंकी संपादित खबरोंका भी अंग्रेजीमें अनुवाद कराकर पढ़ते हैं।" लेकिन जब मैंने यह बतलाया कि महाराजा अपने आदमियोंसे राजस्थानीमें ही बातचीत करते हैं, तब राष्ट्रभाषाकी अपेक्षासे जो दुःख बापूको हुआ था, वह मातृभाषाके प्रेमसे कुछ कम हुआ दिखाई दिया।

४८

बापूजीका भोजनके प्रयोग करनेका शौक मशहूर था। वे किसका कोई अवसर हाथसे नहीं जाने देते थे। जब अुन्हें पता लगा कि मद्रास प्रान्तके कोई राजगोपालन नामक सज्जन वर्षोंसे कच्चे अन्नका प्रयोग कर रहे हैं, तो अुन्हें साबरमती आश्रम बुलाकर कुछ दिन रखा और स्वयं प्रयोग करने लगे। अुनकी आदत थी कि किसी भी नयी चीजको पहले अपने पर आजमाते, फिर किसीसे कहते। कहते भी क्या, अुनके अुदाहरणका अनुकरण दूसरे लोग अपने आप ही करने लगते। अैसी थी साथियोंकी अुनके प्रति श्रद्धा! कच्चे अन्नके प्रयोगके मामलेमें भी यही हुआ। मैं भी शरीक हुआ। जहां तक मुझे याद है प्रयोग बहुत सफल नहीं हुआ था। परन्तु इस सम्बन्धमें अेक मजेदार घटना याद आती है। अेक दिन बापू शामको सैरसे लौटे थे और लेटे हुअे थे। राजगोपालन अुनकी चारपाअीके अेक तरफ बैठे थे और मैं दूसरी तरफ। राजगोपालनने कच्चे अन्नके गुणोंका बखान करते करते दूधको पाशविक आहार बता दिया और यहां तक कह डाला कि अुससे बुद्धि भी जानवरोंकी-सी हो जाती है। बापूने अपने माथे पर अुंगली रख कर तुरत कहा, 'यह देखो, मेरे तो सींग भी अुगने लगे हैं!' सब लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। बेचारे राजगोपालन बड़े झेंपे। बापूने अपने विनोद-सामर्थ्यसे अेक मीठीसी चुटकीमें ही अुनके आत्यंतिक वक्तव्यको समाप्त कर दिया। मुझे मन बनाने और प्रगट करनेकी मर्यादाका अच्छा सबक मिल गया।

४९

शायद कच्चे अन्नके प्रयोगसे या अन्य किसी कारणसे बापूको अन्हीं दिनों जोरकी पेचिश हो गई थी। मीराबहन अुनकी मुख्य सेविका थी। अुनसे मेरा पहला ही परिचय हुआ था। बीमारीके बावजूद बापूको अलाहाबाद जाना पडा था। मगर अतिवृष्टिके कारण रेलमार्ग बिगड जानेसे वे स्टेशनसे ही लौट आये। मीराबहनको जब अिसका पता लगा तो वे दौडी दौडी आअी और बापूके पैरोंको पकड कर अुन पर सिर रखकर गद्गद हो गअी और बोली, 'ओ बापू, आप आ गये?' अुनकी यह भावनामयी स्थिति देखकर बापूने कहा, 'मीरा, तू पूर्वजन्ममें मेरी मा थी या बेटी?' भक्ति और पवित्र प्रेमके अिस अलौकिक दृश्यको देखकर मैं दंग रह गया!

५०

अिन्हीं दिनों मेरे मित्र सरदार दिवानसिंह, सम्पादक, 'रियासत' का दिल्लीसे खत आया। वे नवाब साहब भोपालके बडे खिलाफ थे। अुन्होंने लिखा कि महात्माजीने अैसे आदमीकी तारीफ कैसे की। आप अुनसे दर्याफ्त करके असली बात लिखिये। अखबारोंमें भी आलोचना हुअी थी। मैंने बापूसे पूछा तो कहा कि "बात यू है कि मैं खादी कार्यसे भोपाल गया था। वहा १० सितंबरको आम सभा हुअी। अुसमें मैंने जिस सरकारी स्थान पर मैं ठहराया गया था अुसकी सादगीकी तारीफ करके खलीफा अुमरका स्मरण किया था और यह कहा था कि रामराज्यके आदर्श पर चल कर देशी राजा बढिया लोकतंत्रका नमूना पेश कर सकते हैं। मैंने न तो नवाब साहबके जीवनको सादा बताया, न अुनके शासनकी तारीफ की। मैं जानता हू कि रियासतोंकी क्या हालत है और राजाओंका जीवन कैसा है। मैं काठियावाडी हू, अितना बुद्धू नहीं हू जितना कुछ लोग समझते हैं। मगर मेरा विश्वास है कि देशी राज्य संस्थाका सच्चे लोकतंत्रसे विरोध नहीं है, अगर राजा लोग रामराज्यकी मेरी कल्पनाके अनुसार शासनको अुस सांचेमें ढाल लें। मेरा अभिप्राय यह है कि शासन न केवल प्रजाके चुने हुअे प्रतिनिधियोंके हाथमें हो, बल्कि वे प्रतिनिधि भले आदमी भी होने चाहिये। मेरी रायमें अैसा शासन आधुनिक अर्थमें लोकतंत्रसे कहीं अच्छा होगा, क्योंकि लोकतंत्रमें जहा चुनावके सिद्धांतका प्रभुत्व है, वहा अच्छे मनुष्योंकी प्रधानता होना आवश्यक नहीं है।" मुझे याद है बापूने मेरे निवेदन पर 'नवजीवन' में स्थितिकी विस्तृत सफाअी दी थी। अुसका सार यह है

"मेरे विचारसे स्वराज्यका अर्थ अंग्रेजोंके हाथसे सत्ताका हिन्दुस्तानियोंके हाथमें आ जाना नहीं है। मेरे सपनोंके स्वराज्यमें सत्ता अुचित संयमके साथ तीस करोड आदमियोंके हाथमें होगी। अैसी सरकारमें निर्णय पदासीन व्यक्तियोंके हाथमें नहीं रहेगा, परन्तु न्याय और सत्य पर निर्भर होगा। मैंने अुसे रामराज्य या स्वर्गीय राज्य कहा है। अिसमें राजाकी गुंजाअिश है। परन्तु राजाका अर्थ है रक्षक, संरक्षक, अुत्तम

सेवक, अदनासे अदना नौकर। स्वराज्यमें राजा वही होगा जो लोगोंकी जूठन खावेगा। दूसरे शब्दोंमें, वह प्रजाको सुलाकर सोयेगा, खिलाकर खायेगा और जिलाकर जियेगा। ओ्श्वर ऐसे राजाओंको चिरजीवी करे! अगर ऐसे युगमें ऐसे राजा असंभव हैं तो मुझे कोई सन्देह नहीं कि वे मिटकर रहेंगे।

"नवाब साहब भोपालकी मेरी तारीफका यह मतलब नहीं लगाना चाहिये कि मैंने उनके महलकी सादगीकी तुलना हजरत उमरके झोपड़ेसे की है। मेरा मतलब इतना ही था कि जहां मैंने कीमती सजावटवाले महलकी आशा रखी थी, वहां मैंने किसी साधारण लखपतिकी कोठी जैसी भी कोई चीज नहीं पाई।

"मुझे कोई इतना भला या सीधा न समझे कि मैं दो चार सौ रुपयेकी खादी मुझसे खरीद लेनेवाले हरएकको अच्छाईका आम प्रमाणपत्र दे डालूंगा। अधिकतर तो मैं उन धोखेबाजोंको पहचान लेता हूं, जो खादी पहनकर या खादी खरीदकर मुझसे अनुचित लाभ उठाना चाहते हैं। राजाओं द्वारा जहर देकर मार देनेकी शिकायतोंमें थोड़ी बहुत अतिशयोक्ति रहती है। जिनके पास ऐसे अत्याचारोंके अकाट्य प्रमाण हों वे मेरे पास भेज दें। मेरा यह अभिप्राय हरगिज नहीं है कि कोई भी भारतीय राजा ऐसी गंदी हत्याएं नहीं करता। रियासतोंमें जो सड़ी हुई हालत है उससे मैं अनभिज्ञ भी नहीं हूं। परन्तु इन बुराइयोंकी जानकारी होने पर भी मेरा विश्वास है कि रियासतें सुधारी जा सकती हैं और कानूनमें लाई जा सकती हैं। अगर वे नष्ट होनेके योग्य हैं तो वे अपने ही कर्मोंसे नष्ट हो जायेंगी, बशर्ते कि उन्हें बुरा समझते हुये भी हम उनकी मदद न करें। जो उन्हें बुरा समझते हैं और फिर भी उनकी नौकरी करते हैं, वे उन्हें सहन करते, उनका पोषण करते हैं। जो बुरे उपायोंसे उनका नाश करना चाहते हैं, वे भी उनको सहायता पहुंचाते हैं। बुराईसे बुराईका कभी नाश नहीं हो सका है। लेकिन जो मेरी तरहसे शुद्ध हेतुसे—शायद गुमराह होकर ही—उनमें भलाई देखनेकी कोशिश करते हैं, और जहां तक वे पात्र हैं, उनकी प्रशंसा करते हैं, वे या तो रियासतोंको सुधारते हैं या उनके साथ असहयोग करने या उनकी सविनय आज्ञा भंग करनेका अपना हक साबित करते हैं।

"मुझे पक्का विश्वास है कि रियासतोंमें ऐसे लोग अंगुलियों पर गिनने लायक भी नहीं हैं, जो जेल जानेको तैयार हों, मृत्युका आवाहन करनेकी तो बात ही क्या? अगर रियासती प्रजा निडर होकर जेलके कष्ट भोगनेको तैयार हो, तो वहां जुल्म होना असंभव हो जाय। याद रहे कि चाहे ब्रिटिश भारत हो या देशी राज्य, जो जेलके कष्ट सहने पर तुले हुये हैं उन्हें कोई नहीं रोक सकता। जब देशके कोने कोनेमें निःस्वार्थ बलिदान करनेकी शक्तिका विकास हो जायगा, तब नारी बुराई गायब हो जायगी।"

जिस प्रसंग पर मुझे बापूकी रामराज्य सम्बन्धी कल्पना और भावनाकी पहली झांकी मिली और यह भी पता चला कि सच्ची शंकाओंका समाधान व्यक्तिगतकी

भाति सार्वजनिक रूपमें भी करनेको वे सदा तैयार रहते थे। वे वास्तवमें लोकतंत्री स्वभावके थे।

५१

परन्तु अिन विचारोका प्रत्यक्ष प्रभाव मुझे देखनेको मिला राजकोटमें। अुन्ही दिनो प० जवाहरलाल नेहरूकी अध्यक्षतामे वहा काठियावाड युवक परिषदका अधिवेशन हुआ। राजकोटके ठाकुर साहबने पडितजीको अपना मेहमान बनाया और अपनी राजधानीमें परिषदका खुला अधिवेशन होने दिया। यह मेरे लिअे सहर्ष आश्चर्यकी बात थी। अुस जमानेमें रियासती प्रजाका राजनीतिक आन्दोलन प्राय रियासतोकी सीमाके बाहर ही होता था, अुसके सभा-सम्मेलन अधिकतर ब्रिटिश भारतमें करने पडते थे और राजाओका आम तौर पर विरोधी रुख रहा करता था। राजकोटमें मैंने बिलकुल दूसरी ही चीज पाअी। बात यह थी कि काठियावाडके कार्यकर्ता बापूकी सलाहसे काम करते थे, जवाहरलालजी भी अुनसे परामर्श लेकर वहा गये थे और लाखाजीराज तो बापूको पिता और गुरुतुल्य ही मानते थे। अिसलिअे सौराष्ट्रमें जो सहयोग और स्वतत्रता थी अुसमें बापूका बहुत बडा हाथ था। परिषदने रचनात्मक कार्यक्रम और राजनीतिक समस्याअें, दोनो पर प्रस्ताव पास किये। वहा मैंने नपुसक आवेशका प्रदर्शन नही देखा, सयमका सात्त्विक बल पाया।

५२

प० बनारसीदास चतुर्वेदी अुस समय आश्रममें ही रहकर बापूकी देखरेखमें प्रवासी भारतीयोकी सेवा कर रहे थे। अुनका काम मुख्यत अखबारोंमें लेख लिखना और पत्रव्यवहार करना था। वे न सूत कातते थे, न प्रार्थनामें जाते थे। बापू भी अुनकी सचाअी, भलाअी और स्वतत्र मानसका लिहाज और अुपयोगिताका खयाल करके सहन करते थे। मेरा अुनसे शान्तिनिकेतनमें पहले परिचय हो चुका था। मिला तो कहने लगे, "महात्माजीको मै सबसे बडा प्रचारक (Propagandist) मानता हू। दूसरे नम्बर पर अपनेको समझता था, परन्तु अब वह दर्जा आपको देना पडेगा।" मुझे अिस रायसे शका-समाधानका अेक सूत्र मिल गया। मैंने तीसरे पहर बापूजीसे पूछा, 'लोग आपको सबसे बडा प्रचारक समझते है, फिर आप विदेशोमें भारतके पक्षका प्रचार क्यो नही करते और कराते?' अुन्होने अुत्तर दिया, "साधारण अर्थमें तो मै प्रचारक नही हू। परन्तु अपने ढगका जरूर हू। मेरे और दूसरोके प्रचारमें भी कार्यके अन्य अगोकी भाति बडा अन्तर यह है कि मै विपक्षीको गिरानेके लिअे अनृत्यका आश्रय नही लेता, बल्कि अुसके पक्षका खडन करनेमे भी अुसकी सचाअी और गुणोका अुल्लेख कर देता हू। सत्य और न्यायकी खातिर तो यह जरूरी है ही, व्यावहारिक दृष्टिसे भी लाभदायक है। अिससे विरोधीके विरोधकी तीव्रता कम होती है और

शालीन और निष्पक्ष लोकमतकी नजरोंमें हम ऊंचे उठते हैं। रही बात विदेशोंमें प्रचारकी, सो प्रथम तो मैं यह मानता हू कि उसके लिअे जितना खर्च जरूरी है उतना फलदायक नही होता। दूसरे, कारगर प्रचार घटनाओंका होता है, किसी पक्षका उतना नही होता। यदि हम कोअी ठोस काम करते है या घटनापूर्ण परिस्थितिया पैदा कर देते हैं, तो विदेशोंमें स्वभावत दिलचस्पी जाग्रत होती है और वहांके लोग और अखबार अपने आप प्रचार करने लगते है, भले ही वह विरोधमें हो या पक्षमें। तुमने देखा होगा कि असहयोग आन्दोलनके दिनोंमें जितना प्रकाशन भारतको दूसरे मुल्कोंमें मिला उतना पहले कभी नही मिला।" मुझे उसी समय यकीन हो गया कि प्रचारका सबसे सफल तरीका यही है। अनुभवने बादमें इस प्रतीतिको दृढ कर दिया।

५३

काठियावाडसे लौटकर मैंने बापूको वहांके अपने संस्मरण सुनाये और पूछा· "आप जिस ढगसे काठियावाडके राज्योंमें काम कर रहे हैं, उस ढगसे भारतके तमाम राज्योंमें क्यो नहीं करते?" "कर सकता हू और करना भी चाहता हू। देशी राज्योंमें कार्य करनेके सम्बन्धमें मेरे कुछ निश्चित विचार और तरीके हैं। लेकिन मेरी सेवाकार्यकी पद्धतिमें अेक अनिवार्य शर्त रहती है और वह यह है कि किसी विशेष कामको करनेके लिअे अेक संस्था हो और कमसे कम अेक योग्य आदमी संस्थाको पूरा समय देनेवाला हो।" क्षण भर रुककर मेरी ओर देखने लगे और पूछा, "तुम समय दे सकते हो तो मैं अैसी संस्था खडी करनेको तैयार हूं।" मुझे और क्या चाहिये था? मेरे लिअे 'चूपडी और दो दो' वाली बात थी। अपना प्रिय कार्य और बापूकी सीधी छत्रछायामें हो, जिससे बडा सौभाग्य और सुख और क्या हो सकता था? तुरन्त उत्तर दिया, "शौकसे दे सकता हू।" मैंने देखा कि बापू निर्णय बहुत सोच-विचारके बाद करते हैं, परन्तु अुस पर अमल करनेमें देर नही लगाते। अुन्होंने कागज कलम अुठाया और आध घटेमें अेक विधान अंग्रेजीमें तैयार करके दे दिया। वह यह था:

The Princes & People's Service Society

Object

The object of the Society shall be the service of the Princes and people of Indian States

Means

(1) Where there is no prohibition from the State concerned, to undertake constructive work such as promoting Khadi, prohibition, social reform removing untouchability and communalism etc

(2) Where there is no prohibition from the State concerned, to make courteous submission to the Princes regarding the people's grievances.

(3) To conduct in a friendly spirit newspapers or magazines for the promotion of the objects of the society

(4) To discover the best basis of relations between the Princes and their people and the best system of government in accordance thereto and to cultivate public opinion on it.

Note : This Society does not share the opinion that the existence of the States is by their very nature contrary to the growth of the spirit of full democracy The society believes that their existence need not be inconsistent with the growth of such spirit

Limitations

(1) To refrain from criticising the acts and policy of one Prince in the territories of another.

(2) To refrain from desiring or seeking the interference of the British Power in the affairs of the Indian States on any occasion whatsoever

(3) No member of the Society shall ever depart from the path of truth and non-violence

(4) In all matters of difference and doubts and in the determination of new policies, reference shall be made to Mahatma Gandhi for his final decision

[राजा प्रजा सेवक समिति

अुद्देश्य

भारतके देशी राज्योके राजा-प्रजाकी सेवा करना जिस समितिका अुद्देश्य होगा।

साधन

(१) जहा राज्यकी ओरसे निषेध न हो, वहा खादी-प्रसार, नशा-निषेध, समाज-सुधार, अस्पृश्यता और साम्प्रदायिकता-निवारण आदि रचनात्मक काम करना।

(२) जहा राज्यकी ओरसे निषेध न हो, वहा प्रजाके कष्टोको विनयपूर्वक राजाके सामने रखना।

(३) समितिके अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे मित्रभावसे पत्र-पत्रिकाअें चलाना।

(४) राजा-प्रजाके पारस्परिक सम्बन्धोका सर्वोत्तम आधार और अुसके अनुसार शासनकी सर्वोत्तम प्रणालीकी खोज करना और अुसके पक्षमें लोकमत तैयार करना।

नोट यह समिति अिस रायसे सहमत नही है कि राज्योका अस्तित्व लोक-सत्ताकी भावनाके विकासके विरुद्ध है। समितिकी मान्यता है कि अुनका अस्तित्व अिस प्रकारकी भावनाके विरुद्ध ही हो, यह आवश्यक नही है।

मर्यादायें

(१) अेक राज्यकी सीमामें दूसरे राज्योके कार्यों और नीतिकी आलोचना न की जायगी।

(२) किसी भी अवस्थामें राज्योंके मामलोमें ब्रिटिश सरकारका हस्तक्षेप न चाहा और न मागा जायगा।

(३) समितिका कोअी सदस्य सत्य और अहिंसाके मार्गसे कभी नही हटेगा।

(४) मतभेद और शकाके सब मामलोमें और नअी नीतिया निश्चित करनेमें गाधीजीसे पूछकर अुनका अतिम निर्णय लिया जायगा।]

५४.

अिस पर जिज्ञासाके तौर पर मैंने बापूसे लम्बी चर्चा की। मेरा पहला प्रश्न तो सस्थाके नाम और अुद्देश्य पर ही था। राजाओंके स्वार्थ प्रजाके स्वार्थोंके विरुद्ध समझनेके मेरे सस्कार दीर्घकालीन और प्रबल थे। बापूने समझाया कि "सामंजस्यके दृष्टिकोणमें अिन दोनोके बीच मौलिक हित-विरोध नही माना जाना चाहिये। पूजीपतियो और भूस्वामियोकी तरह मेरे सरक्षकता (ट्रस्टीशिप) के विचार राजाओ पर भी लागू हो सकते है और होने चाहिये। मैं अुन्हे प्रजाका प्रथम सेवक बनाना चाहता हू और यह दिखा देना चाहता हू कि राजा-प्रजा दोनो मेरी बात मान ले, तो अुनके स्वार्थ भिन्न नही, अेक ही हैं। यह स्थिति मैं अुनका सम्मान करके, अुनका विश्वास प्राप्त करके और अुनके प्रति प्रजाका अधिकसे अधिक सद्भाव दिखलाकर ही ला सकता हू। वैसे, सावनोमें मैंने आत्यतिक सत्याग्रह तककी गुजाअिश सदा ही रखी है और यदि हमारे अिस सारे अुदार रवैयेके बावजूद राजाओका हृदय-परिवर्तन नही होगा, तो तीव्रसे तीव्र अहिंसक कार्रवाअीके लिअे हमारे हाथ खुले ही है।"

मैंने कहा, "राजाओकी सेवाकी बात प्रजाको, जो अुनसे पीडित और क्षुब्ध है, पसन्द नही आ सकती। अिसलिअे शुरूसे ही अुसका सहयोग हमें नहीं मिलेगा।"

"तुम्हारे अिस अदेशेमें मुझे अनावश्यक भीरुता नजर आती है। मेरा अनुभव यह बताता है कि जनताके सच्चे हितको विचारपूर्वक समझकर अुसके अनुसार हम अुसके सामने शुरूमें अप्रिय लगनेवाली बात भी रखते है, तो धीरे धीरे वह असलियतको समझकर हमारे साथ हो जाती है। जनता तो अुसके विश्वासपात्र कार्यकर्ता जो रास्ता बताते है अुस पर चलती है। जब हमारी नीतिसे लोगोको राहत मिलने लगेगी और जब अुनकी प्रगति होने लगेगी—और अिसमें तो कोअी सन्देह नही कि अिस नीतिसे ये दोनो काम जल्दी और ज्यादा मात्रामें होते है—तो जनता वास्तविक रहस्यको समझकर हमसे हार्दिक सहयोग करने लगेगी।"

अपनी योजनाके दूसरे अगो पर बापूने अपने आप ही प्रकाश डालना शुरू कर दिया। वे बोले "राजाओके अग्रेजोके साथ जैसे सम्बन्ध है अुन्हे देखते हुअे रियासतोमें ब्रिटिश हस्तक्षेप कराना राजाओको अुनके अधिक पराधीन और प्रजाका विरोधी बनाना है। अग्रेज शासक अपनी साम्राज्यवादी नीतिके अनुसार प्रजाका बलवान होना कभी पसन्द नही कर सकते। अिसलिअे वे आम तौर पर राजाओको नाराज करके प्रजाका पक्ष न्याय्य होने पर भी नहीं लेते।

"अिसी प्रकार रियासतोके आपसी ताल्लुकातको देखते हुअे अेक रियासतकी आलोचना दूसरी रियासतमें बैठकर करनेसे अुनको परेशानी होती है और जनताकी दृष्टिसे कोअी लाभ नही होता। काम तो शेरका सामना अुसकी मादमें ही करनेसे चलेगा। कितनी ही मर्यादित आलोचना क्यो न हो, वह अुसी रियासतके भीतर करनेसे प्रजाका बल, थोडा ही सही, बढता है।

"जनताके कष्ट-निवारणका काम भी राजाओके सद्भावसे ही अच्छा हो सकता है। कमसे कम जब तक जनतामें जाग्रति और सगठनका बल न आ जाय, तब तक तो अेकमात्र मार्ग यही है। अिसलिअे अुन्हे पहले ही निश्चिन्त कर देना कमसे कम दूरदर्शिता तो है ही।

"सस्थाका सलाहकार रखनेकी बात मेरी कार्यपद्धतिका अेक खास अग है। अिस सम्बन्धमें अेक दो जरूरी बातें तुम्हे समझा देना जरूरी है। पहली तो यह है कि काम करनेवाली सस्थाओमें साधारण निर्वाचन प्रणाली ठीक साबित नही होती। अैसे मडल समान गुणशील, स्वभाव और आदर्शोंवाले व्यक्ति मिल-जुलकर बना ले, यही अच्छा रहता है। अवश्य ही विचार करते समय सब सदस्योको पूर्ण स्वतत्रता होनी चाहिये, परन्तु काममें पूरा अनुशासन रहना चाहिये। फिर भी मतभेद होने स्वाभाविक है। अुन्हे झगडेकी हद तक न बढने देनेके लिअे यह वाछनीय है कि जिस पर सब सदस्योकी श्रद्धा हो, अैसे व्यक्तिको सलाहकार बना लिया जाय और वह जो राय दे अुसे सब मान लें।"

फिर कहने लगे, "सस्थाका दफ्तर फिलहाल मैं साबरमती ही रखना चाहता हू और वह अिसलिअे कि सस्था भी अपने ढगकी नअी होगी और तुम भी मेरे लिअे नये हो। अिसलिअे मेरी सीधी देखरेखमें काम होना आवश्यक है।"

चर्चाके अन्तमें बापूने बताया कि अुनका अिरादा सेठ जमनालालजीको समितिका अध्यक्ष, मणिलालजी कोठारीको अुपाध्यक्ष और मुझे मत्री बनानेका था। वे मेरे अग्रेजी साप्ताहिक 'यग राजस्थान' और राजस्थान-सेवा-सघ द्वारा मणिलालजी कोठारीके सुपुर्द किये गये हिन्दी साप्ताहिक 'तरुण राजस्थान' को अेक करके दोनों भाषाओमें चलाना चाहते थे और सम्पादकका काम भी मुझीसे लेना चाहते थे। परन्तु दुर्भाग्यवश जमनालालजी और मणिलालभाअीमें मतभेद रहा और वह योजना

कागज पर ही धरी रही। मुझे अिस घटनासे दुःख तो बहुत हुआ, परन्तु देशी राज्योंके कामके बारेमें मेरा दिमाग साफ हो गया। बापूके बनाये हुअे अिस विधानका अुपयोग मुझे आगे चलकर हरिजन-सेवक-संघके काममें खूब लाभदायक सिद्ध हुआ। हमारी नअी संस्था राजस्थान-सेवक-मंडलमें तो हमने अुस विधानको ज्योंका त्यों ही अपना लिया।

५६

यंग राजस्थान प्रेसमें सिन्दौरके अेक राजनीतिक कार्यकर्ताका वहांके शासनके विरुद्ध हिन्दीका अेक गुमनाम पर्चा छपा था। अुस पर छापखानेका नाम नहीं दिया गया। शक होनेके बावजूद सिन्दौरवालोंको अजमेर पुलिसकी सहायतासे भी प्रेसका पता नहीं चला। हमारे यहां तलाशी हुअी, परन्तु अुनको कोअी सबूत हाथ नहीं लगा। मैं बापूके तत्त्वज्ञानको मानने लगा था। अिसलिअे यह रहस्य मेरे मनमें खटक रहा था। अिसे अुन पर प्रगट करके मैंने प्रस्ताव किया कि अधिकारियोंको सही बात बता दी जाय। बापूको यह तजवीज बहुत पसन्द आअी और तय हुआ कि व्यावर लौटते ही अजमेरके कमिश्नरको सूचना दे दी जाय कि वह पर्चा मैंने छापा था और अुसके कारण सरकार कानूनी कार्रवाअी करना चाहे तो अुसे भुगतनेको मैं तैयार हूं। पत्रका मसौदा भी बापूने ही बनाया और पत्र व्यावर पहुंचकर भेज दिया गया। पत्र यह था

Young Rajasthan Office

Beawar, 8th Sept 1929

To

The District Magistrate,
Ajmer-Merwara,
Ajmer

Dear Sir,

I write this to inform you that as printer of the Young Rajasthan Press at Beawar, I printed in June last a Hindi pamphlet, entitled 'Indore Ka Kalankit Kushasan' (Scandalous mal-administration in Indore) in 1000 copies, at the instance of a gentleman who then chose to remain anonymous, but who has since disclosed his name before the Indore court which is Mr Raghunath Prasad Parsai The pamphlet does not bear the name of the press and the printer I was aware that by making this omission I was infringing the law

Since I have definitely changed my policy of work, which will now be strictly in conformity with the principles of truth

and non-violence, I take this the earliest opportunity of making a clean confession of my guilt I shall be pleased and prepared to take the consequences of my act and to present myself before you, if called upon to do so

Yours truly,
Ramnarayan Chaudhry

[यंग राजस्थान कार्यालय

ब्यावर, ८ सितम्बर, १९२९

श्री जिला मजिस्ट्रेट,
अजमेर-मेरवाडा, अजमेर

प्रिय महाशय,

अिस पत्र द्वारा मै आपको सूचना देता हू कि 'यग राजस्थान' प्रेस, ब्यावरके मुद्रकके नाते मैने पिछले जूनमें 'अिन्दौरका कलकित कुशासन' शीर्षकसे अेक हिन्दी पुस्तिका छापी थी। अुसकी १००० प्रतिया छपी थी और वे अेक अैसे सज्जनके कहनेसे छापी गअी थी जिन्होने अुस समय तो गुमनाम रहना ही पसन्द किया था, मगर अुसके बाद अुन्होने अिन्दौरकी अदालतमें अपना नाम श्री रघुनाथप्रसाद परसाअी प्रगट कर दिया है। पुस्तिका पर प्रेस और मुद्रकका नाम नही है। मै जानता था कि नाम न देकर मै कानूनका भंग कर रहा हू।

चूकि मैने अपनी कार्यनीति निश्चित रूपमें बदल ली है और वह कडाअीके साथ सत्य और अहिंसाके सिद्धान्तोंके अनुसार होगी, अिसलिअे जल्दसे जल्द अवसर पाते ही मै अिस पत्र द्वारा अपना अपराध साफ तौर पर स्वीकार कर रहा हू। मैने जो कृत्य किया है अुसका नतीजा भुगतने और मुझे बुलाया जायगा तो आपके सामने हाजिर होनेमे मुझे खुशी होगी और मै अुसके लिअे तैयार हू।

आपका
रामनारायण चौधरी]

जहा तक मुझे खयाल है अिस अपराध पर अुस समयके कानूनमें लम्बी कैद और भारी जुर्मानेकी सजा थी। मगर गिब्सन साहबके लिअे और कुछ भी कहा जाय, वे मेरे जैसे अंग्रेजी राज्यके शत्रुको दड देनेके अिस अवसरको सफा पचा गये और मेरे विरुद्ध कोअी कदम नही अुठाया। पुलिसने काफी जोर दिया और अेकसे अधिक बार गिब्सन साहबसे मेरे विरुद्ध मुकदमा चलानेकी मजूरी मागी, मगर अुनका जवाब यही रहा कि जिस आदमीने अपना दोष स्वीकार कर लिया अुसके खिलाफ कार्रवाअी करनेकी मेरा दिल गवाही नही देता। अिस घटनाका अुन पर अितना असर पडा कि जब १९३४में बडी धारासभाका चुनाव हुआ और मि० गिब्सन अुडीसाकी रियासतोके रेजीडेंट थे, तब हम दोनोके मित्र और अजमेरके प्रमुख काग्रेसी

नेता प० गौरीशकर भार्गवके मिलने पर मुझ जैसे 'योग्य आदमी' को कांग्रेसी उम्मीदवार न बनाने पर उन्होंने आश्चर्य प्रगट किया। जिस घटनाने मुझे बापूने 'बहादुर' की पदवी तो दिलवाली ही, साथ ही सचाजी प्रगट करनेके नुपरिणामका भी मुझे पहला अनुभव हुआ।

जिसके पहले मि० गिल्सन 'यंग राजस्थान' के लेख और मामलेमें पुलिसकी गलत रिपोर्ट पर मुझ पर नोटिस जारी कर चुके थे। लेकिन भूल मालूम होने पर खुली अदालतमें मुझसे माफी मागनेमें नहीं हिचकिचाये थे। जैसे शरीफ अंग्रेजके हाथो काठियावाड पहुच कर राजकोटमें बापू जैसी महान आत्माके साथ कुटिल व्यवहार होने पर बादमें मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ था। मालूम होता है कि यह परिवर्तन अनमें १९३३-३४की अेक घटनाके बाद हुआ। जिस घटनामें अजमेरके बापट नामक क्रान्तिकारीने उन पर असफल गोली चलाई थी।

५७

राजा प्रजा सेवक समितिकी योजना पार नहीं पड़ी, तो बापूने मुझे साफ राय दे दी कि "कोरा अखबार चलाकर तुम अपनी शक्ति व्यर्थ न गवाओ। अखबार किसी कार्यका साधन हो सकता है, स्वय कोई कार्य या साध्य नहीं है। 'यंग राजस्थान' बन्द करके मेरे पास चले आओ।" मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य की और अखबार बन्द करनेकी सूचना देनेवाला लेख लिखकर उन्हें बताया। वह उन्हें पसन्द नहीं आया। वे बम्बई जा रहे थे। दिनकी गाडी थी। मुझे बडौदे तक साथ ले गये और स्वयं लिख कर दूसरा लेख मुझे दे दिया। वह लेख यह था:

Farewell

With this issue the 'Young Rajasthan' ceases publication. While making this announcement, I cannot feel entirely happy and I believe my sorrow will be shared by many readers. But it is a decision born of considerable thought and valuable advice.

I must admit that the paper has not become self-supporting My views about work in Indian States have undergone a substantial change Perhaps a paper for doing work in accordance with the revised ideas is not absolutely necessary. I feel that much more substantial work is possible by greater restraint and even silence What is needed is constructive work This requires constant labour rather than newspaper propaganda Moreover, I have realized that there are too many papers in the limited area and for the one subject of Indian States I, therefore, feel that I shall better advance the goal by disappearing from journalism at least for one year. (Mahatma) Gandhiji's method has for some

time attracted me In order to study it more fully and at closer quarters, I have decided with his permission to pass one year at least in the Sabarmati Ashram doing such work as he may entrust me with I assure the readers and my many friends that I hope by this renunciation to become a better instrument of service.

My deep thanks are due to the patient readers Those who have paid their subscriptions in advance are entitled to a proportionate refund, if they desire

26-12-1929 Ramnarayan Chaudhry

[अलविदा

अिस अकके साथ 'यंग राजस्थान' का प्रकाशन बन्द होता है। यह घोषणा करते समय मुझे प्रसन्नता तो नही हो रही है और मेरा विश्वास है कि बहुतसे पाठक मेरे अिस दुःखमें शरीक होंगे। परन्तु यह निर्णय काफी विचार और कीमती सलाहका परिणाम है।

मुझे स्वीकार करना चाहिये कि अखबार स्वावलम्बी नही बन पाया है। देशी राज्योंके कार्य-संबंधी मेरे विचारोंमें बहुत परिवर्तन हो गया है। शायद बदले हुअे विचारोंके अनुसार काम करनेके लिअे अखबारकी अत्यंत आवश्यकता भी नही है। मैं अनुभव करता हूं कि अधिक संयम और मौनसे भी कही अधिक ठोस काम हो सकता है। आवश्यकता रचनात्मक कार्यकी है। अिसलिअे प्रचारके बजाय सतत परिश्रमकी ज्यादा जरूरत है। अिसके सिवा मैंने समझ लिया है कि देशी राज्योंके मर्यादित क्षेत्रमें और अेक ही विषयके लिअे बहुत अधिक पत्र पहले ही मौजूद हैं। अिसलिअे मुझे महसूस होता है कि कमसे कम अेक सालके लिअे पत्रकार जगतसे ओझल होकर मैं अुद्देश्यकी अधिक अच्छी पूर्ति करूंगा। कुछ समयसे मुझे महात्मा गांधीके तरीकेने आकर्षित किया है। अुसका अधिक पूरी तरह और निकटसे अध्ययन करनेके लिअे मैंने अुनकी अनुमतिसे कमसे कम अेक वर्ष सत्याग्रह आश्रममें अुनका बताया हुआ काम करनेमें बिताना निश्चय किया है। मैं पाठकों और अपने अनेक मित्रोंको विश्वास दिलाता हूं कि मुझे अिस त्यागसे सेवाका अेक बेहतर साधन बन जानेकी आशा है।

मैं धैर्यशाली पाठकोंका बडा कृतज्ञ हूं। जिन्होंने अपना चन्दा पेशगी चुकाया है, वे चाहें तो अुन्हें अपना बाकी रुपया वापस लेनेका हक होगा।

२६-१२-'२९ रामनारायण चौधरी]

बापूकी सलाहके अनुसार सब ग्राहकोंको लिखा गया कि वे चाहें तो अुनका बचा हुआ चन्देका रुपया अुनको लौटा दिया जायगा, और जिन्होंने मांग की अुन्हें भेज भी दिया गया।

५८

इस अवसर पर बापूने मुझे पत्रकार-सम्बन्धी अपने जो विचार बताये, वे कभी भुलाये नहीं जा सकते। उनका सार यह था "आजकल अखबारोंमें जैसी व्यापारिकता आ गयी है वह इस पवित्र धन्धेके लिअे लज्जाजनक है। झूठी झूठी मनगढन्त बातें, निर्मूल खबरें अपने दिमागसे घडकर केवल विरोधियोको गिरानेके लिअे लिखी जाती है। सिर्फ सनसनी फैलानेवाले समाचार, जिनसे समाजका कोअी हित नहीं होना, महज बिक्री बढानेके लिअे दिये जाते है। राजनीतिको ही सब कुछ मान लिया गया है। समाज-सुधार, सेवाकार्य और मानव-जीवनको सदाचारी और सुखी बनानेकी प्रवृत्तियो पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। विज्ञापनोका यह हाल है कि सिनेमा, भोगविलासकी सामग्री और कामोत्तेजक दवाओंसे अखबार भरे रहते है। ये सब बातें देखकर मेरे तो जीमें आता है कि मेरा बस चले तो 'यग अिंडिया' और 'नवजीवन' (फिर कुछ देर ठहर कर बोले, 'कुछ और पत्रो') के सिवा और सब अखबारोको बन्द कर दू। अखबारोमें अच्छे साहित्यके अलावा कोअी विज्ञापन होने ही नहीं चाहिये। अुनका मूल्य ही अितना होना चाहियें कि वे स्वावलबी हो। अगर जनताको अखबार पसन्द होगा और अुसे अुसकी जरूरत महसूस होगी तो ग्राहक खुशीसे पूरे दाम देंगे। जिस अखबारको आवश्यकता न हो अुसे कृत्रिम और आपत्तिजनक अुपायोंसे जिन्दा रहनेका कोअी अधिकार नहीं। देशभक्त लोगोको भी पत्र निकालनेका अितना मोह है कि वे स्वाभिमान खोकर, जमानतें देकर भी निकालते है।"

बापूने अपने अखबार अिन्हीं आदर्शो पर चलाये और जब कभी अुन पर आच आते देखी तो अपने पत्रोका प्रकाशन स्थगित या बन्द कर दिया, परन्तु अपने सिद्धातो और विचार-स्वातत्र्यका स्तर नीचा नहीं होने दिया। मुझे याद है जब मैंने १९४६ में बापूकी राजनीतिके अनुसार भी 'नया राजस्थान' नामक हिन्दी दैनिक निकालना चाहा तो अुन्होने मेरे अनुनय-विनय करने पर भी अपना आशीर्वाद नहीं दिया सो नहीं दिया।

५९

१९२९ तथा १९३० के सगम पर लाहौरकी काग्रेस हुअी। मैं भी गया था। पंजाबकी सर्दी और अूपरसे वर्षा—जानेवालोके कष्टका कोअी ठिकाना नहीं रहा। अेक रोज मैं बापूके डेरे पर चला गया तो तुरन्त अन्दर बुला लिया गया। वे अकेले ही थे। मैंने सहज भावसे पूछा " . कहा है?" "बेचारा बहुत दुःखी हो रहा है। बहुत समझाया परन्तु मानता ही नहीं। रोये ही चला जा रहा है। भूल गभीर रूप धारण कर लेती, परन्तु जल्दी ही सभल गया। कहता है 'भारी प्रायश्चित्त करूगा'। यहासे लौटकर जो कुछ करना हो करने पर राजी करनेकी कोशिश

कर रहा हू।" फिर मुझे सारा किस्सा सुनाया। मुझे अुस समय तो आश्चर्य हुआ कि मुझे यह सब किस लिअे कह रहे हैं। परन्तु बादमें मैंने सोचा कि बापूका कोमल हृदय अपराधीके हार्दिक पश्चात्तापसे कितना द्रवित हो जाता है और अैकके अुदाहरणसे कैसे सुसस्कृत ढगसे वे दूसरोको शिक्षा देते है।

६०

लाहौर काग्रेसमें बापूकी लोकतत्री भावनाका प्रथम परिचय मिला। वे स्वय ब्रिटिश सत्ताके साथ औपनिवेशिक सम्बन्ध रखनेके प्रबल समर्थक थे। फिर भी चूकि काग्रेसजनोका भारी बहुमत अिस सम्बन्धका विच्छेद करनेके पक्षमे प्रगट हुआ, अिसलिअे अुन्होने पूर्ण स्वाधीनताका ध्येय स्वीकार कर लिया।

६१

अिस अधिवेशनमें आगन्तुकोको जो कष्ट हुआ और आम तौर पर गरीब देशके निवासियोको सरदीके मौसममे यात्रा और आतिथ्य-सम्बन्धी जो शारीरिक और आर्थिक असुविधाअें होती हैं अुन्हे देखते हुअे बापूके सुझाव पर यह भी तय किया गया कि आयदा काग्रेसके अधिवेशन दिसबर-जनवरीके बजाय फरवरी-मार्चमें हुआ करे, ताकि अृतु भी अनुकूल रहे और पडाल तथा ठहराने आदिका अितजाम भी बहुत खर्चीला न करना पडे।

६२

'यग राजस्थान' हम लोगोने बापूके आदेशानुसार बन्द कर ही दिया था। लाहौरमें यह भी तय हुआ कि अधिवेशनके बाद हम साबरमती पहुच जाय। तदनुसार १० जनवरी १९३० को मैं और माअी शोभालालजी गुप्त सपरिवार साबरमती आश्रममें पहुच गये।

अुस समय वहा लगभग दो सौ स्त्री-पुरुष थे। अिनमें से कुछ तो वे थे जो आगामी सत्याग्रहके सम्बन्धमे बापूसे सलाह-मशविरा करने और साथ ही आश्रम-जीवनका कुछ अनुभव प्राप्त करनेके लिअे कुछ दिनके वास्ते आने जानेवाले थे और बाकी स्थायी आश्रमवासी थे। नियम पालन अितनी सख्तीसे होता था कि जिससे महीने भरमें तीन गलतिया हो जाती अुसे आश्रम छोडना पडता था। अितने बडे समुदायमे स्वतत्रता, सयम, सफाअी, कार्यतत्परता, व्यवस्था, अनुशासन और सहयोग मेरे लिअे अेक मूल्यवान पदार्थपाठ था। शरीरश्रममें झाड़ लगानेका मुझे हमेशासे शौक था। साबरमतीमें वही काम मिल गया और वह भी गाधीजीके सैर पर जानेके रास्तेकी सफाअीका। अिसके अलावा मुझे कताअी-बुनाअी सीखने, बहनो व बच्चोको हिन्दी पढाने और बापूके दफ्तरका कुछ काम दिया गया। मैं लगभग पाच महीने वहा रहा।

६३

बापू दिन रातके चौबीस घटोका यह विभाजन मानते थे कि ८ घटे आराम अर्थात् मौनमें, ८ घटे शौच-स्नान, भोजन, व्यायाम, अुपासना, स्वाध्याय आदि शरीर व मनके स्वास्थ्यके खातिर निजी काममें और ८ घटे सेवाकार्यमें लगाने चाहिये। आश्रमका कार्यक्रम अिसी बटवारेके अनुसार निश्चित होता था। सेवाकार्यका कमसे कम आधा भाग वे शरीरश्रम द्वारा सपन्न कराते थे। आश्रमके कार्यक्रममें सुबह शामकी प्रार्थना, कताअी-बुनाअी और अपने बर्तन, कपडे और स्थानकी सफाअी आप करना अनिवार्य था। अिन कामोके लिअे नौकर नही रखे जाते थे। सफाअीमें पाखाना-सफाअी शामिल थी। प्रार्थना सामूहिक और सर्वधर्म-समभावके अनुरूप होती थी तथा भोजन सम्मिलित भोजनालयमें और मसाले, शक्कर और तली हुअी चीजोसे रहित होता था। आश्रममें ब्रह्मचर्य, सत्य और अहिंसाका पालन, छुआछूत न मानना, खादी ही धारण करना, जेवर न पहनना और रोजनामचा लिखना सबके लिअे लाजिमी था।

६४

मैंने भी अिन पाच महीनोका रोजनामचा लिखा था। अुसके कुछ अुद्धरण बापूके व्यक्तित्व, विचारो, प्रभाव और कार्य पर प्रकाश डालनेवाले होनेके कारण यहा दिये जाते है

११–१–'३० कअी वर्ष बाद जाडेमें आज प्रथम बार ठडे पानीसे स्नान किया। सर्दी लगनेके भयसे ठडे पानी जैसी बल अैव आह्लाददायक वस्तुसे दूर भागनेकी प्रवृत्ति आज छूट गअी।

पौने आठ बजे विद्यापीठके पदवीदान-समारभमें शामिल होनेको गया। रास्तेमें बापूजीका साथ हो गया। अुन्होंने हम लोगोके प्रकरणमें छगनलालजी जोशीसे व्यवस्था सबधी वार्तालाप किया, वह सुना। अुसी समय अेक छोटे बच्चेके प्रति अुनका व्यवहार देखकर नतीजा निकाला कि गाभीर्यके साथ जिन्दादिली भी होनी चाहिये।

६५

१२–१–'३० भोजनके बाद सवा बजे तक बापूजीके पास बैठा तकली कातता रहा और अेक अंग्रेज महिलाकी अुनसे बातचीत सुनी। महिलाकी जिनेवा (स्विट्जरलैंड) में पुस्तकोकी दुकान है। वह वहा पूर्वी और पश्चिमी युवक-युवतियोके परस्पर सम्मेलन और अन्तर्राष्ट्रीय विषयोके अध्ययनके लिअे अेक छात्रावासके प्रश्न पर बापूजीका मत जानना चाहती थी। बापूजीने अत्यत स्पष्ट किन्तु अुनने ही शिष्ट शब्दोमें अिस विचारको नापसन्द किया। अुनकी रायमें हमारे युवक अपनी सस्कृति जाने बिना यूरोप जाकर unhinged (डावाडोल) हो जाते है।

६६

१३–१–'३० विद्यापीठमे पहुचनेके कुछ क्षण बाद ही बापूजी वहा आ पहुचे। उनसे काशी विद्यापीठके आचार्य नरेन्द्रदेवजीने प्रश्न किया कि काग्रेस कार्यमें राष्ट्रीय शिक्षण सस्थाओका क्या हिस्सा होना चाहिये? गाधीजीने उत्तरमें बडा ओजस्वी भाषण दिया। यदि अहिंसात्मक युद्धके लिये मर्मस्पर्शी अपील करना भडकाना हो, तो आज बापूने युवकोको खूब भडकाया। मूलमत्र यह था कि 'युवको, भारतके उद्धारके लिअे मरनेकी तैयारी कर लो, पर मारनेका विचार तक न करना।'

६७

प्रार्थनामे बापूने आज शीतला रोग सम्बन्धी बातें बताअी। यह रोग शरीरकी गरमी निकालनेको होता है। अिसमें सिवाय छाछ या फलोके रसके कुछ न खाना चाहिये। कपडे रोज धोये बल्कि अुबाले जाय। लाल कपडा पहनाया जाय। सेवा करनेवालेके सिवा कोअी रोगीके कमरेमें न जावे। बच्चे सर्वथा अलग रखे जावें। धूपमे लिटाकर लाल काचमें से किरणें रोगीके शरीर पर डाली जावें या ठडे पानीमे भिगोकर निचोडे हुअे कपडेमें रोगीको लपेटकर अूपरसे अूनी कम्बलमें अुसे सुलावें।

६८

१४–१–'३० ३ बजेसे ४ बजे तक बापूजीके कमरेमें बैठा और तकली काती। भाअी शोभालालजीके टाअिप करनेके सम्बन्धमे जो राय जाहिर की गअी, अुसमे सतोष हुआ और स्वच्छ काम करनेकी प्रेरणा मिली।

[यहा ११ मागोवाले अुस सुप्रसिद्ध पत्रके टाअिप करनेका हवाला है, जो बापूने नमक-सत्याग्रह आरभ करनेसे पहले वायसराय लार्ड अिर्विनको लिखा था और बादमें अगद नामसे प्रसिद्ध हुअे श्री रेनाल्ड्स नामक अंग्रेज नौजवानके साथ भेजा था। अेक हाथ लगभग बेकार होने पर भी शोभालालजीने टाअिप अितना सुन्दर और शुद्ध किया था कि कही काट-छाट या विराम-चिह्नकी भी भूल नहीं थी। अिसीकी बापूने तारीफ की थी।]

६९

१६–१–'३० बापूजीकी अनुमतिसे पढने आअी हुअी कुसुम बहन (त्रिवेदी) को हिन्दी सिखाअी। यह बहन बडी जिज्ञासु और ज्ञानपिपासु होनेके साथ साथ समझदार और तत्पर प्रतीत होती है।

६ बजे अजनाके कपडे धोये। झूठी शर्म कहती थी, 'कोअी स्त्रीके कपड धोते देखेगा तो क्या कहेगा?' पर कर्तव्यने अुत्तर दिया, 'सेवामें लज्जाका क्या काम?'

न्यायने और पुष्टि की, 'जो तुम्हारे लिअे सर्वस्व दे चुकी हो अुसको जरासा बदला देनेका पुण्य क्यो छोडते हो?'

६-२० पर सफाअीमें पहुच गया। ठडके समय मेहनतका काम और कृष्ण नायरजी जैसे सजीव सज्जनका साथ, क्या कहने?

७। से ८। तक प्रार्थनामें रहा। वापूजीने मेरे रोजनामचेके सम्बन्धमे अच्छे शब्द कह कर अच्छा नही किया। अुसे कअी लोग देखेंगे और अुसमे है कअी निजी बातें। अितनी जल्दी लोगोकी दृष्टिमें आना मेरे जैसे नये और छोटे आदमीके लिअे हानिकर भी हो सकता है।

[बात यह हुअी कि वापूने सबके लिअे डायरी लिखना अनिवार्य करके अेक बार सबको देख जाना जरूरी समझा। देख लेनेके बाद प्रार्थनामें अुन्होने मेरी डायरीको नमूनेदार बताया और अुसे देख लेनेकी सबको सूचना दी। फिर तो कअी भाअी-बहन मेरी डायरी पढने आने लगे। अिसीसे मुझे सकोच हुआ।]

७०

१७-१-'३० विद्यापीठमें वापूजीका छात्रालय-सम्मेलनमें भाषण था। यह आन्दोलन गुजरातकी अेक विशेष प्रवृत्ति प्रतीत हुअी। अिसमें राष्ट्रीय सस्थाओके अलावा दूसरे छात्रालयोके प्रतिनिधि भी खासी सख्यामें थे। अिससे अिस प्रान्तमें राष्ट्रीयताका प्रभाव काफी मालूम होता है। वापूजीने छात्रालयो, छात्रो और गृहपतियोके कर्तव्य बताये। सक्षेपमें अुन्होने कहा कि छात्रालयोके छात्रोमें जो अनीति, अराजकता और शौकीनी फैल रही है, अुसे कडे अनुशासन और सुव्यवस्था द्वारा दूर करके अुन्हें सच्चरित्रता और राष्ट्रसेवाके केन्द्र बनाना चाहिये और छात्रो और गृहपतियोके बीच पुत्र-पिता जैसे सम्बन्ध होने चाहिये।

दो विनोद भी वापूने मजेके किये। छात्रालयोमें सजाके प्रश्न पर अुन्होने कहा कि लडकोको सोटी (लाठी) लेकर गृहपतियोको पीटना चाहिये और यह कि, 'बाल वे ही लडके रखें जिन्हे लडकियोको मोहित करना हो। मैं तो किसी लडकीको अिसी कारण मोहित नही कर सका'। अवाछनीय प्रश्नोको अुडा देने और अप्रिय सीखको प्रिय बनानेका यह अच्छा ढग है।

७१

(आज प्रार्थनामें) वापूजीने आगतुकोके लिअे प्रार्थनाका महत्त्व समझाया। सार यह था कि किसी भी रूपमें साधारणत हर समय और नियमके तौर पर रात्रि और दिनके अन्तमें प्रार्थना अवश्य करनी चाहिये, क्योकि अिससे जीवन धर्ममय और शान्तिमय रहता है। बात बिलकुल ठीक है।

* * *

(अुपवासके कारण) अजनाको अधिक घबराहट होनेसे बापूके पास ८॥ बजे जाना पडा। अुन्होने कहा, 'अुपवासके पहले तीन दिन कष्टके होते है, घबराना नही चाहिये। अेक औस पानीमें ५ ग्रेन सोडा डालकर चम्मचसे पिलानेसे घबराहट मिटेगी। पसीना आना अच्छा लक्षण है। धूपमें खूब रहना चाहिये।' वे खुद ही देखने आना चाहते थे।

७२

१८-१-'३० अजनाके स्वास्थ्यके सबधमें बापूजीके पास गया तो देखा कि वे किसीके अग्रेजी पत्रका हिन्दीमें शोभालालजीसे अुत्तर लिखवा रहे थे। बीमारकी बात सुननेको वे तुरत रुक गये। आजसे मैंने भी निश्चय किया कि हिन्दी समझनेवाले भारतीयोसे हिन्दीमे ही पत्रव्यवहार करूगा और बीमारकी सेवाका अधिक ध्यान रखूगा।

७३

५ बजे डॉक्टर (कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर) प्रार्थना-स्थानमें आये। बापू और अुनकी जोडी भली मालूम होती थी। भारतकी अिन दो विभूतियोने देशका सिर अिस पराधीन अवस्थामें भी अूचा कर दिया। कवीन्द्र दो तीन ही मिनट बोले। परन्तु जो बात कही वह सोलह आने सही थी। अुनका सन्देश यह था कि अब हमे बकवास करना छोडकर अनुशासन-पूर्वक सत्यके लिअे त्याग अेव परिश्रम करना चाहिये, क्योकि अैसे ठोस कामसे ही देश स्वाधीन होगा।

* * *

८। बजे घर आये। रास्तेमें विचार आया कि गाधीजी जैसा कामवाला आदमी जब नये-नय और छोटे-छोटे कर्तव्य तक पूरे कर लेता है, तब हमारी कर्तव्य-विमुखता और सुस्तीके लिअे क्या औचित्य है?

७४

१९-१-'३० ९ से ९॥ तक जेठालालभाअीके साथ टट्टिया साफ की। अिस सर्वोच्च समाज-सेवाके कार्यमें मेरा यह पहला दिन था। लोग व्यर्थ ही अिससे घबराते है। काम तो बडा रोचक है। हा, यह अवश्य खयाल हुआ कि शौच जानेवाले अधिक सावधानीसे काम लें तो सफाअी अधिक अच्छी और सुनीतिमे हो सकती है।

* * *

आज प्रार्थनाके पहले पू० बा अजनाकी तबीयत देखने आअी थी। अुनकी सज्जनता और विनय देखकर अीर्षा और अपने पर लज्जा होती थी।

७५

२०–१–'३० . १२॥ बजे बापू अजनाको देखने आये। मौन होने पर भी रोगियो और दुर्बलोकी अितनी चिन्ता! अवश्य ही अुनके जीवनकी भित्ति मनुष्यत्व और कर्त्तव्यनिष्ठा पर है।

७६

२१–१–'३० हा, आज १२॥ बजे बापू आये और वे नीबू और शहद भी बन्द कर देनेकी सलाह अजनाको दे गये। अैसा किये बिना सच्चा अुपवास नहीं होता। वे जीभकी परीक्षा करना भी बता गये। गुलाबके-से रंगसे स्वास्थ्य प्रगट होता है, सफेदसे कुछ खराबी और काली पीलीसे बहुत रोग जाहिर होता है।

७७

२२–१–'३० : ५। बजे (सुबह) प्रार्थनासे लौट कर लेटा ही था कि काशी-नाथजी आ गये। बापूकी अिच्छा और अिनका आग्रह है कि 'हिन्दी नवजीवन' की भाषा अच्छी बनानेमें मैं भी हाथ बटाअू। आज मुख्य लेखका 'यंग अिंडिया' से अनुवाद मैंने ही किया। मेरी रायमें हिन्दी अच्छी और लोकप्रिय तभी बन सकती है जब अुर्दूका अुसमें सम्मिश्रण रोका न जावे। .. विदेशी भाषामें भी अितनी अच्छी महारत वस्तुत अेक बडी बात है। पर बापूके लेखोमें प्राण और मौलिकता ही मुख्य गुण हैं। शब्दोका माधुर्य, लाघव और ठीक ठीक प्रयोग गौण बात है। क्रान्तिकारी दलकी प्रशसा और अुन्हें मूडनेका ढग बहुत पसद आया।

७८

९॥ बजे नारायणदासजी गावी और पं० तोतारामजीके साथ पाखाने साफ किये। पहले सज्जनकी बापूजीने अेक दिन तारीफ भी की थी। अुनके त्याग, परिश्रम और नियमितताका अुल्लेख किया था। अुनकी सज्जनता, गर्वहीनता, शात और गंभीर स्वभावका तो मुझे भी आज परिचय मिल गया। पडितजी दूसरी किस्मके आदमी हैं। ये अफ्रीकाके मंजे हुअे हैं और मेहनतसे कमाअी और बनाअी हुअी शरीर-सम्पत्ति बुढापेमें भी रखते हैं।

७९

७। वजे तक वासे वातें की। बाकी मृदुलता देखकर आज माताकी याद आयी। थोडी आन्तरिक पीडा भी हुअी। ८। बजे तक प्रार्थनामें रहा। आज वहाका दृश्य गमीर था। बापूकी गिरफ्तारीकी कुछ जोरकी सी अफवाहे है। अत अुनके सम्बन्धमें अुन्होने कहा, 'गिरफ्तारी हुअी तो अच्छी ही बात होगी। अिस सम्बन्धमें दु ख या चर्चा न होनी चाहिये।' परन्तु हुअे दोनो ही। मन ही मन भावी वियोगकी कल्पना हुअी। गला भी भर आया। अुसके बाद बापूने छगनभाअी और रमणीकलालजीके आश्रमसे अलग रहनेकी घोषणा की। पहले अपने आपको सारे नियमो और अुनके पालनकी कडाअीमे पार अुतरनेमें असमर्थ पाते है और दूसरे अिनसे सहमत नही हैं। बापूने ममता और अनासक्तिके अद्‌भुत समिश्रणको प्रदर्शित करते हुअे अिन्हे अनुमति दी। तीसरा विषय था २६ जनवरीका। अुस दिन अेक समय फलाहार करने, आत्मशुद्धि करने और खूब कातनेका आदेश दिया गया। अेक डायरीमें वाल गगाधरके प्रसगमे बापूकी टीकाका समाधान किया गया था। बापूने अपनी भूल सदा स्वीकार करने और भूल न हो वहा किसीकी परवाह न करने पर जोर दिया।

८०

२३-१-'३० (प्रात) ५। बजे तक काशीनाथजीके साथ बापूकी प्रतीक्षा करता रहा। अिस बीचमें मौलवी सुरेन्द्रजी (वे रहते अिसी भेषमें जो है।) की मस्त गीत रटन, जो साबरमतीके किनारे अुनके 'कल्पवृक्ष' के नीचे चल रही थी, सुनी। वे बडे विनोदी, तत्त्वज्ञानी और फक्कड जीव हैं। जब बापू अपने 'पुस्तकालय' से — हुजूरने अपनी टट्टीको कुतुबखाना बना रखा है — निकल कर आये, तो ५॥ बजे तक अुनसे 'हिन्दी नवजीवन' के सम्बन्धमें बातें हुअी। वे मानते है कि सुन्दरताकी ही नही, लोकप्रिय बनाने — मुसलमानो और अुर्दू-भाषी लोगोमें प्रचारकी दृष्टिसे भी 'हिन्दी नवजीवन' की भाषामें अुर्दूका समावेश होना चाहिये।

५। बजे परोसा लाने पहुचा। पडित खरेजीकी धर्मपत्नी लक्ष्मी बहनका स्वभाव बडा अुग्र सुना था। पर वे तो बडे सौजन्यसे पेश आयी। बात यह है कि लोग अपनी छोटी-छोटी सुविधाओके सामने व्यवस्थाकी अनेक और बडी कठिनाअियोका भी लिहाज नही करते। अिसी कारण कुछ बहनोमें गगा बहन जैसी कुशल, कर्तव्य-परायण और योग्य नेत्रीके प्रति भी थोड़ा असतोष है। अजनाने तो अुनमें बडी मुरव्वत देखी। . . अिस बीचमें मीरावहन और वा आअी। मीरा तो वास्तवमें 'यथा नाम तथा गुणा' वाली कहावतको चरितार्थ करती हैं। यह बहन कितनी सरल-चित्ता, सेवाव्रती, हसमुख और तपस्विनी तथा त्यागिनी है?

८१

८। बजे तक प्रार्थनामें रहा। आज नारायणदासजी गांधीके मन्त्री बनाये जानेकी सूचना दी गयी। बापूने बताया कि जिस व्यक्तिके धन और अलग भोजन-व्यवस्था रखते हुये भी यह पद जिस कारण दिया गया है कि जिनमें अन्य गुण विद्यमान हैं। ये दो त्रुटियां भी उनके अपने कारण नहीं हैं। धनके वे ट्रस्टी मात्र हैं और चौका वे अपने वृद्ध पिताके कारण रखनेको बाध्य हैं। ये पिता अपने चार पुत्र आश्रमको अर्पण कर चुके हैं। वैसे अपकारका लिहाज करना ही चाहिये। दूसरोंके प्रति उदारता और अपने साथ कठोरता, यह गांधीजीके व्यवहार-शास्त्रका एक खास सूत्र मालूम होता है।

८२

२४–१–'३० ७। तक सडक सफाओ की। आज कप्तान मथुरादास भाओ थे। ये अपने ढगके एक ही आदमी हैं। सिपाहीकी भावना, अविश्रान्त परिश्रम और कडा अनुशासन, ये सीखना हो तो जिनसे सीखें।

३ बजे तक बापूजीका प्रवचन सुना। पूर्ण स्वराज्य दिवस मनानेकी तैयारियोंके सम्बन्धमें बोलते हुअे उन्होने बताया कि स्वर्गीय मगनलालजी गांधी केवल आश्रममें उत्पन्न हुओ चीजें ही खाते थे। हमें कमसे कम उपवासके दिन तो यह नियम पालना चाहिये। झडेके बारेमें कहा कि, "देशमें अन्यत्र तो झडा फहरानेकी मैंने अनुमति जिसलिअे दी है कि उससे वातावरण पैदा करना अभीष्ट है, परन्तु आश्रममें तो वह है ही। यहा झडा गाडनेका अर्थ यह है कि सरकार हमें और आश्रमको 'जमीदोज' करे तो भी झडे पर हम उसे कब्जा नही करने देंगे। जितनी तैयारी अभी नही है।" पडोसके गावोंमें सेवाकार्यके लिअे जानेका प्रस्ताव उन्हे पसन्द आया, परन्तु जिस शर्त पर कि कुछ लोग उसे ले लें और दूसरे समय समय पर सहायता दें। मेरे प्रश्नो पर जेल-जीवनके विषयमें बापूने उत्तर दिया कि मुख्यत तो वहा हमारा व्यवहार विवेक पर निर्भर रहना चाहिये। वैसे गाली-गलौज, मारपीट, अमानुषिक व्यवहार, अखाद्य भोजन, अत्यधिक काम और सरकारी सत्ता मनवानेके विषयो पर सत्याग्रह किया जा सकता है। अध्यक्ष पटेलके त्यागपत्र न देनेको उन्होने पसद नही किया, परन्तु वे जिसमें रुपये या पदका लोभ नही मानते।

८३

२५–१–'३० ८॥ तक प्रार्थनामें रहा। वहा बापूने भगवानभाओकी पुत्री गीताके प्रातःकालीन देहावसानके प्रसगको लेकर मृत्यु पर प्रवचन किया। सार यह था कि जन्म और मृत्यु समान घटनाअें है। न अेक पर हर्ष और न दूसरे पर विषाद होना चाहिये। दोनो ही अवसरो पर साधारण काम बराबर चलता रहना चाहिये।

२६-१-'३० सुबहकी हाजिरी (प्रार्थनाकी) रावजीभाओी पटेल लेते है। ये अूपरसे बडे रूखे और बेमुरव्वत दिखाओी देते है, मगर हृदय सहानुभूतिसे भरा है।

* * *

९। बजे झडा फहराने और राष्ट्रीय गानके समारभमे शामिल हुआ। बापूजीने नामके बजाय प्रत्येक आश्रमवासीका नम्बर रखनेका अभिप्राय समझाया। भारतके बडे जेलके कैदियो और स्वातन्त्र्य-सग्रामके सिपाहियोकी हैसियतसे नम्बर हमारे लिअे अधिक गौरवास्पद अैव अुपयुक्त चीज है।

* * *

५॥ बजे तक राष्ट्रीय घोषणाकी रस्ममें शामिल हुआ। बापूजीने पहले हिन्दी और फिर गुजरातीमें घोषणा पढकर सुनाओी। अिससे पहले मजदूर बहनोसे दो शब्द कहे। अुनकी सादगीकी प्रशसा और हम लोगोके आडबर पर लज्जा प्रगट करते हुअे अुन्हे अैसे प्रसगोमें भाग लेनेको कहा। घोषणा पर सम्मति लेते हुअे कहा, 'बिना समझे कोओी हाथ न अुठाये। बालक तो राय देनेके लिअे समर्थ ही नही है। यह मजाक नही है, आजादीके लिअे जान देनेकी प्रतिज्ञा है।'

७ बजे तक शोभालालजीसे बातें की। अुनके देरसे काम पर पहुचने पर बापूजीने जो अुपदेश दिया वह ग्राह्य था। सिपाही तो जगह पर मौजूद मिलना ही चाहिये। वे सुनाते थे कि आज जापानी हाओी कमिश्नरके पैबन्द लगे हुअे जूते पर बापूजीने बडा हर्ष प्रगट किया और अुसके १०० रुपये मासिकसे भी कम वेतनके साथ भारतके कलेक्टरकी २५०० मासिक तनख्वाहका मुकाबिला किया। पर कोरियाके साथ जापानकी वेअिन्साफी पर असतोष भी बताया।

* * *

८ से ८॥ छगनभाओी जोशीकी धर्मपत्नी रमा बहन अजनाके पास आओी थी, अुनसे बातें की। यह बहन बहुत क्रियाशील और हसमुख है। पतिदेव अुतने ही शान्त और गभीर है।

८५

२७-१-'३० ८॥ बजे प्रार्थनासे लौटा। आजका भजन बहुत सरस था। 'अजहु न निकसे प्राण कठोर,' दादूने अिसमें आत्माके परमात्मासे वियोगकी पीडा भर दी है। अब भी अिसके भाव हृदयमे खेल रहे है। परन्तु थोडी ही देर बाद जब बापूने डायरियोकी आलोचना आरभ की तब यह आनद शोकमें बदल गया।

मेरा आत्मीय है। परन्तु अुसने यहा अपने व्यवहारमें जिम्मेदारीसे काम नही लिया, नियमोका स्वय पालन नही किया और दूसरोकी टीका करके डायरी द्वारा बापू तक पहुचा दी। अिसकी वाचालता, कोरा बुद्धिवाद और लापरवाही जैसे घरमें सन्तापके कारण है, वैसे ही बाहर अपयशके अुत्पादक भी है।

८६

२८-१-'३० बापूजीने सलाह दी कि अपवासीको नीद न आवे तो अुसे खुलेमें सुलावे और अुलटी पर तो सोडेका पानी देना ही दवा है।

* * *

८। प्रार्थनामें वज गये। आज बापूजीने अिस आक्षेपका अुत्तर दिया कि आश्रममें बौद्धिक विकास नही होता। अुदाहरणमें अुन्होने तुलसीभाअी नेपालीका जिक्र किया। अुनका कहना था कि केवल पुस्तक-ज्ञानसे अेक वाह्य वस्तु दिमागमें भर जाती है, विचारकी अुत्पादक शक्ति नही वढती। यहा जो वातावरण और शिक्षा है अुसमें छोटे-छोटे कामसे वडे तकमें मस्तिष्कका रचनात्मक व्यायाम होता है। हा, अेक दूसरेसे परिचय करने, नये आदमीको सहायता देने आदि सम्वधी त्रुटिया अवश्य यहावालोको दूर करनी चाहिये।

* * *

२९-१-'३० आज धीरू जोशी आदिके अुत्पातोकी शिकायत थी। बापूजीने वडी मिठास और धीरजसे अुन्हे समझाया। लडको पर असर हुआ।

८७

३०-१-'३० आज गगावहन झवेरीसे वातें हुअी। यह महिला अेक सम्पन्न घरानेकी सुसस्कृत विधवा है। कार्यशक्ति और नि सकोचता अिनकी विशेषताअें मालूम हुअी।

* * *

८। तक प्रार्थनामें रहा। आज बापूने अेक डायरी पर आत्म-परिचय लिख रखने और दूसरी कचरा जगह जगह पर न डालनेकी वात कही। अुन्हींकी परिभाषामें कचरेका अर्थ है अेक चीजको अुसके स्थानके अलावा दूसरे स्थान पर रखना। आजका भजन रामनामकी महिमा पर था। अच्छा था। वालकोवाजी यहाके तपस्वियो, मुनियों और ज्ञानियोमें से है।

८८

३१-१-'३० ८ वजे तक पाखानेके खड्डे खोदे। काम परिश्रमका तो है, परन्तु बहुत कठोर भी नही है। शिक्षित लोग आलस्य, भय अथवा झूठे अभिमानसे शारीरिक मेहनतसे बचने और अनेक रोगोमें फसते है।

८९

१२॥ से ४ तक बापूजीके पास रहा। आज अिंग्लैंडके मजदूर दलके अेक नेता और पार्लियामेंटके सदस्य कमाडर केनवर्दीकी बातचीत हुअी। ३॥। बजे तक लगभग सारे भारत-सबधी मामलो पर चर्चा हुअी। आदमी होशियार मालूम हुआ। बापूजीके विचारोका विस्तृत पता अैसे अवसरो पर अच्छा लगता है। राष्ट्रीयताके नाम पर कमाडर बहुत बिगडे। यूरोपमे हिंसावादके आधार पर रची गअी राष्ट्रीय भावनाने वस्तुत बहुत अत्याचार किया है। परतु भारत अेक आदमीका भी खून किये बिना ही स्वराज्य लेना चाहता है। गाधीजी तो राष्ट्रीयताके सिरसे यह कलक दूर कर अेक नअी ही चीज दुनियाको देनेका प्रयास कर रहे है। सोना पहनने और रुपया गाडकर रखनेकी भारतीयोकी आदतके विषयमें बापूने कहा कि असख्य गरीब हिन्दुस्तानियोके पास सोना-चादी तो क्या, लोहा भी नही है। थोडेसे लोगोके पास है, तो अुन्हे हम शिक्षा अथवा कानून द्वारा रास्ते पर ले आयेंगे।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न पर गाधीजीने कहा कि, 'मुझे तो न भीतरी लडाअीका और न बाहरी आक्रमणका डर है। यदि दोनो हो भी तो गुलामीसे भले है। वैसे जनसाधारणमें धार्मिक द्वेष नही है। अुनके हिताहित समान है। झगडा पढे-लिखोमें है। सो मै तो नौकरिया सारीकी सारी मुसलमानोको देनेको तैयार हू। कानून भी हम अैसा नही बनावेंगे जिसका मुसलमान जातीय रूपमें विरोध करे। आपसके झगडोको शान्त करनेमें हम सेनाकी मदद नही लेंगे, भले ही गृहयुद्ध हो जाय।'

राष्ट्रभाषाके बारेमें बापूजीने कहा, "सर्व साधारणके लिअे तो प्रातीय भाषाअे ही रहेगी। किन्तु पढे-लिखे लोगोके लिअे हिन्दी राष्ट्रभाषा होगी।" अनिवार्य और नि शुल्क प्रारभिक शिक्षाके बारेमें गाधीजीकी राय यह थी कि अंग्रेजी ढगकी तालीम तो हानिकर और अितनी खर्चीली है कि सबको दी ही नही जा सकती। परन्तु हम पुराने भारतीय ढगसे देंगे और दे सकते है।

किसानोकी गरीबी दूर करनेके लिअे कमाडरने मुर्गी पालने और वगीचे लगानेके सहायक धधे बताये। बापूजीने कहा, "पहला शिक्षाके अभाव और दूसरा भूमि पर स्वामित्व न होनेके कारण तुरत सभव नही है। चरखे जैसी सुलभ चीज किसानोके लिअे दूसरी नही है।"

राष्ट्रीय अृणके बारेमें कहा, "मैंने सब अृण चुकानेसे अिन्कार नही किया है। मै तो अुसकी निष्पक्ष जाच कराना चाहता हू। हा, मेरे खयालसे यह कर्जा अधिकाशमें भारतके हितके लिअे नही लिया गया है। अिसके रहते स्वराज्य मिलने पर भी हम गरीबोकी भलाअीके लिअे रुपया नही बचा सकते।"

गोलमेज परिषदके प्रसग पर गाधीजी बोले, "बहुतसे अंग्रेज मानते हैं कि अंग्रेजी राज्यने भारतका हित किया है। मै मानता हू और सच्चे अंग्रेज लेखकोके कहनेसे मानता हू कि अिस राज्यने हमारा सत्यानाश किया है। अंग्रेज जब तक यह न मान लें तब तक परिषदसे क्या लाभ? मैंने जो दस मार्गे पेश की है अुनके

मजूर कर लेनेसे अंग्रेजोकी सच्चाईका सबूत मिल जायगा। ये मांगें भी निर्विवाद हैं। सब देशवासी जिन्हे अेकमतसे तलब करेंगे।"

कमाडर साहब १५ वर्षमे सेनाका भारतीयकरण करनेका अेकमात्र रचनात्मक प्रस्ताव लेकर आये थे। अंग्रेजोकी कठिनाअियोका अुन्हे खयाल था, परन्तु भारतीय परिस्थितिको सर्वोपरि स्थान देते नही प्रतीत होते थे। हाजी बिलमें अुन्हे जातीय द्वेषकी बू आती थी। बीकानेरके किसी कृषि-विभागके अफसरने अुन्हे बहका दिया था कि धार्मिक आपत्तिके कारण यहांके किसान आलू नही बोते और खाते।

देशी राज्योके बारेमें कमाडर साहब बहुत दिलचस्पी दिखाते थे। पटियाला, अलवर, बीकानेर और जामनगर जैसे छोटे नरेशोके मेहमान रह चुके है। जिनके परिश्रम, समयका लिहाज और शासन-सुधारकी तारीफ करते थे। बापूजीने कहा, "रियासतोमें अधिकाश बातोमें लोगोकी हालत अंग्रेजी अिलाकेसे खराब है, क्योकि अपने राज्योमे अंग्रेजोकी जिम्मेदारी सीधी होनेसे वे बदनामीसे डरते है और अच्छी हालत दिखानेका प्रयत्न करते है। रियासतोमें वे अप्रत्यक्ष शासन करते है। जो चाहते है, करा लेते है। बुराअी नरेशके सिर होती है। भावी भारतमें राजा रह सकते है, परन्तु प्रजाको अधिकार तो अुन्हे देने ही पडेंगे।" अित्यादि अित्यादि। अिन सारे समयमें से लगभग दो घंटे मैंने तकली पर काता। बल्लभभाअी भी थे। अिनमें विनोद, व्यग और गुस्सा खूब मालूम होते है। जब कमाडर साहबने भारतीयोकी रिश्वतखोरीका जिक्र किया तो सरदार झुझलाये और कहने लगे, 'अंग्रेज सिविलियन भी खूब हाथ रगते है। पोलिटिकल अेजेंट लोग तो अेक साल्में ही बुभ्र भण्का सामान छिकट्ठा कर लेते है।'

* * *

८। बजे तक प्रार्थनामें रहा। वहा बापूजीने अेक अुदाहरण देकर बताया कि पाखानेमें जोर करनेसे गुदाद्वारमें चीरा पड जाता है और वह गभीर रोग है।

९०

१-२-'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने और के अुदाहरण देकर कहा कि पहले दृष्टिदोषके कारण ब्रह्मचर्य और दूसरे अेक मासमें दो बार प्रार्थनामें समय पर आनेका नियम भग होनेके कारण आश्रमसे अन्यत्र चले गये। अिन दोनोने अपना कुभ्र खुद बताकर अच्छा किया। विकार सबको होता है, परतु वह बुरा लगनेके बजाय अच्छा लगने लगे तो रोग न रहकर अपराध बन जाता है। बुखार और कब्जका सबब बताते हुअे बापूने कहा कि कच्ची भाजी खूब लेना चाहिये। भात या तो न खाया जाय या खूब चबाकर खाया जाय। रोटी भी खूब खस्ता होनी चाहिये। दाल और पाकें शाककी जरूरत नही। दूध और दही लिया जा सकता है। सुबह खाली पेट खूब गरम पानी पी लेना चाहिये।

९१

२–२–'३० ४ बजे तक बापूजीके यहा रहा। अेकातमे बातें हुअी। . और . . के वैमनस्यके विषयमें अुन्हे अलग अलग रखनेके पूर्व बापू अुनसे कल बात करेगे। अुन्हे अपनी मेल करानेकी शक्ति पर बहुत विश्वास है। . बीमेको वे अनावश्यक समझते है। . के प्रसगको लेकर ने जब बापूसे कहा कि मुझे पहलेकी तरह विकारमें आनन्द तो नही आता पर विकार तो आते है तो बापू बोले, 'आखें नीची रखकर स्त्रियोसे सपर्क रखना चाहिये। सपर्क अभी कुछ काल तक बन्द रखा जाय तो और अच्छा।' अिस विषयमे बापूने भाअीकी ताजा भूल और अुपवासका और . भाअीके पतनका अुल्लेख करते हुअे कहा कि साधना-कालमें बहुत सावधान रहना चाहिये।

९२

३–२–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने तीन बातें कही। अेक तो सबको अक्षर सुधारनेकी, दूसरी हिंदी शुद्ध करनेकी और तीसरी सस्कृत श्लोकोका हिन्दी अनुवाद करके अुन्हे प्रार्थनाका माध्यम बनानेके सबन्धमें राय मागनेकी।

* * *

४–२–'३० आज (प्रार्थनामें) बापूजीने सफाअी पर जोर दिया। अुनके ख्यालसे प्रत्येक राष्ट्रीय सिपाहीको अपने फटे कपडे सीना जरूर आना चाहिये।

९३

५–२–'३० अिसी बीचमें (१२॥ से १) बापू आये और . और . के वैमनस्यके सबधमें अपना अमूल्य समय लगा गये। मेरे लिअे तो शर्मकी ही बात है कि अिन कामोमें अुन्हे कष्ट हो।

आज (प्रार्थनामें) बापूजीने तीन बातें कही। अेक तो पाखानोकी सफाअी अच्छी होने पर जोर दिया। अिस सबधमें पाखानेकी बाल्टीमें घास डालनेकी विधि बताअी। दूसरी, बापूके लिहाजसे कोअी चेचकका टीका लगानेमे परहेज न करे। तीसरे सरकार अुन्हे गिरफ्तार करके आश्रम जब्त करे तो सब स्त्री-पुरुषोको उठकर चलनेकी तैयारी कर लेनी चाहिये।

९४

६–२–'३० · १०॥ तक पडित खरेजीसे हिन्दी वर्गोके बारेमें बात की। आदमी जितना गुणी है उतना ही सरल है। बीमार बच्चीकी जिस प्रेम और धीरजसे सेवा करते है वह अनुकरणीय है।

आज काशीनाथजीने सुनाया कि बापूजीकी रायमें हम लोगोका अनुवाद रद्दी है। परतु जब मालूम हुआ कि महादेवभाओ जैसे पुराने और योग्य साथीका अनुवाद भी उन्हें पसन्द नही आया तो जरा सतोष हुआ।

* * *

८–२–'३०. बापूने (प्रार्थनामें) पाखानोकी सफाओके नियम पढकर सुनाये। प्रार्थनामें देर करके आनेका अर्थ गैरहाजिरी बताया। चप्पलोकी चोरियोको हमारे परिग्रहके प्रति अुचित अीर्ष्या या क्रोधका कारण बताया। बैलियोंमें जूते रखनेकी सलाह दी।

* * *

९–२–'३०: बापूजीकी भोजन अेव स्वास्थ्य-संबंधी पुस्तकोकी सूची बनाओ। . . . मालूम होता है बापूने शरीर-शास्त्रका खूब अध्ययन किया है।

* * *

१०–२–'३० आज प्रार्थनामें बापूने राष्ट्रपति जवाहरलालजीके परसो आश्रममें आने पर सम्मानपूर्वक नही, प्रेमपूर्वक स्वागत करनेकी सूचना दी। दूसरी बात नित्य डायरी लिखने और शिक्षकको दिखाने पर की गओ विद्यार्थियोकी ओरकी आपत्तिके सबधमें कही। जो नियम पालन न कर सकें वे आश्रमसे जानेको स्वतत्र हैं। . . के जिस कथनमें कितनी अवभक्ति थी कि जिस पुस्तक पर बापूके हस्ताक्षर हो अुनीमें अेक साधारण शिक्षकके भी दस्तखत वे सहन नही कर सकते।

९५

११–२–'३० ४ बजे तक बालवर्गमें रहा। आज वहा अेक दुखद घटना हो गओ। अुनकी पीडा अिस समय तक विद्यमान है। लड़कोका शोर बन्द नही हुआ। अूपर गगाबहनको अेक बच्चेका कान अैंठते देख लिया। अुन्होने शायद प्यारसे अैंठा होगा। मैंने मनुका कान आवेशमें मल दिया। वह खूब रोया। रसिकको हिमायत पर ले आया। रसिकका यह कार्य कहा तक साधिकार चेष्टा थी, यह नही कहा जा सकता। परतु मेरा बल-प्रयोग नि सदेह गर्हित कार्य था। गगाबहनसे तो क्षमा माग चुका हू। और क्या क्षतिपूर्ति करू?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा. "और कुछ करनेका नही है। अैसा दड दुबारा कभी न दिया जाय।—बापू")

९६

आज (प्रार्थनामें) बापूजीने कहा कि गलती चाहे अेक काममें तीन हो अथवा भिन्न भिन्न कामोमें, वे सब गिनी जायगी। कर्तव्यकर्ममें जाग्रत रहना, प्रेमपूर्वक सेवा करना अथवा भावसहित भजन करना अेक ही चीज है। तीनोसे भगवान बुद्धियोग देते है। . . केवल अतिथियोको बुलाने पर भी अन्य आश्रमवासी बापूसे वार्तालापके समय क्यो वहा चले गये?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें यह लिखा "अतिथिओके पीछे आना अनुचित था। अैसी जिज्ञासा अच्छी नही है।")

९७

१२-२-'३० आज विनोबा भावेजीने व्यक्तिगत और सामुदायिक प्रार्थनाका भेद बताया। अिनके कथनानुसार पहलीमे अीश्वरकी प्राप्तिके लिअे अपनेको और दूसरीमें दूसरोको भी सहायता मिलती है। अजना स्वभावके वश बेकार तो अेक घडी रहती नही। बच्चा यह सहन नही करता कि अुसकी माता अुसकी ओर ध्यान न दे। फलत वह चिढती है और वह रोता है। मै अुद्विग्न हो जाता हू। क्या किया जाय?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा "अिसकी औषध बच्चोकी सच्ची तालीम है।")

९८

११ तक अजना सहित आचार्य विनोबाजीका प्रवचन सुना। अुन्होने चरखे और तकलीका तुलनात्मक महत्त्व बताते हुअे पहलेको यज्ञका और दूसरीको अखड अुपासनाका साधन बयान किया। कामके लिहाजसे अिन्हे क्रमश खरगोश और कछुअेकी अुपमा दी। आदमी बहुत सुलझी हुअी तबीयतके मालूम हुअे। बालवर्गमें दस मिनट देरसे पहुचा। अिसकी क्षतिपूर्ति अुधर १५ मिनट अधिक लगाकर की। पर क्या यह समाधानकारक बात हुअी?

(अिस पर बापूने मेरी डायरीमें लिखा. "हा।")

९९

(प्रार्थनामें) मेरे प्रश्न पर बापूने अिस प्रवृत्तिको नापसन्द किया कि जिस रोजनामचेमें अुनके हस्ताक्षर हो अुसमें दूसरे किसी साधारण मनुष्यके न हो।

[मैने डायरीमें नमक-सत्याग्रहके बारेमें बापूके अिरादोका अुल्लेख करते हुअे कुछ जिज्ञासा प्रगट की थी। अुसके अुत्तरमें अुन्होने लिखा "अुसके बारेमें मुझे कमिटी (काग्रेस कार्यसमिति जो अुन दिनो साबरमती आश्रममें ही हो रही थी) का काम खतम होने पर पूछो।—बापू"]

१००

१४–२–'३० घाट पर प्रेमावहनसे भेंट हुई। यही अेक वीरागना-सी आश्रमकी बहनोंमें दिखाअी देती है।

९ बजे तक बापूकी राष्ट्रीय नेताओंसे बातचीत सुनी। वायसरायके भवनको खाली कराने, दिल्लीके किले पर झडा गाडने, जगलोको काटकर लकडिया लाने, ताडीके वृक्षोको नष्ट करने आदिके प्रस्तावोमें जनताके लिअे तथ्यकी और सबके साथ सबध रखनेवाली बात न होनेसे बापूने तो नमककी खानो पर धावा बोलनेका ही निश्चय सर्वोत्तम बताया।

१०१

१५–२–'३० ७। तक बापूके साथ घूमा। डा० हार्डीकरसे वे राष्ट्रीय झडेके रगोमें परिवर्तन करनेकी बाबत बातें कर रहे थे। वे खुद सिक्खोको खुश करनेके लिअे लालके स्थान पर भगवा रग रखनेको तैयार है। अेक दूसरे महाशयने कअी प्रश्न पूछे। अुत्तर झटसे और मजेदार मिलते थे। . (प्रार्थनामें) बापूने कहा कि जिन लोगोने सत्याग्रहके लिअे नाम दिये है, अुन्हे अेक ओर तो जेल, कोडे और फासी या गोली खानेको और दूसरी ओर जो भी काम बता दिया जाय वह करनेको तैयार रहना चाहिये।

* * *

१६–२–'३० . बापू मजूमदारसे कहते थे कि हम यहा संग्राम करेगे तो ससारका ध्यान अपने-आप आकर्षित होगा। हमारे विदेशोमें प्रचार पर शक्ति और रुपया खर्च करने पर भी वे अुसे अेकपक्षीय वस्तु समझेंगे।

१०२

१८–२–'३० ११ तक बापूसे नेताओका शका-निवारण सुना। आज तो अहिंसाका रुद्र रूप प्रगट हुआ। बापूके कहनेका सार यह था, "मैं जब तक नमककी खान पर धावा न बोल दू, तब तक दूसरे परिस्थितिका अध्ययन करे, अच्छा मोरचा ढूढे। शराब, विदेशी वस्त्र, जगल, लगान जो अुपयुक्त हो अुसीकी तैयारी करे। चरखा सघका रुपया और कार्यकर्ता सब आहुतिके लिअे कटिबद्ध रहें। अिससे लाभ अुठानेवाले लोगोको भावी समयका परिचय दें। वे स्वय योग दें तो अुसका स्वागत किया जाय, कृत्रिम आन्दोलन खडा न किया जाय। स्त्रिया अभी भाग नहीं लेंगी। जब पुरुषोका आन्दोलन खूब जोर पकड जायगा अथवा वे खत्म हो चुकेंगे तब स्त्रियोको आमन्त्रित किया जायगा। नमकके छोटे व्यापारियोसे कहा जायगा कि वे नमक मुफ्त बाट दें, बनानेकी भी व्यवस्था की जायगी। बापूके गिरफ्तार होने पर

सब जगह जगह पर लड़ाओ छेड देंगे। किसान जमीदारोका लगान बन्द कर देंगे। रियासतोकी प्रजा भी नमक पर धावा बोल दे तो अुसे अधिकार है। अराजकता-सी पैदा करनी है। बापू यदि देखेंगे कि अहिंसक लोग नामर्द साबित हुअे अथवा लोगोने हजारो अग्रेजोको मारना आरम्भ कर दिया, तो वे जेलमें भी अनशन करेगे। दूसरी बात होने पर अन्य अहिंसावादी नेता भी अनशन कर सकते है। बापू कार्यक्रमके सबधमें अपनी हिदायते छोड जायेंगे। १६ वर्षसे अूपरके स्त्री-पुरुषोको अिस युद्धमें लिया जा सकेगा। अस्तु, साभर झीलमें रियासतोमें झगडा न आता हो तो अुसे भी मोरचा बनाया जा सकता है।

१०३

.. ३। तक शोभालालजीसे हुअी बापूकी बातें सुनी। विषय था हिंसा-अहिंसाका और देशी राज्यो सबधी कार्यपद्धतिका। गीतामें स्थूल युद्ध नही, प्रत्युत आत्माका अिन्द्रियोसे सग्राम विषय है। हिंसा द्वारा प्राप्त स्वराज्य गरीबोके लिये हितकर नही हो सकता। अच्छे अुद्देश्यका साधन भी अच्छा ही होना चाहिये। बबूलके बीजसे गुलाब पैदा नही हो सकता। दूसरेको मारनेकी अिच्छा रखनेवाला अुसके प्रति प्रेम नही रख सकता। दूसरे देशोमें जो स्वतत्रता है वह हिंसा द्वारा प्राप्त होनेसे दूषित है।

* * *

(प्रार्थनामें) बापूजीने अपने और प्रह्लादके अुदाहरणसे समझाया कि जो आज्ञा-पालन कर चुकते है अुन्हे ही सविनय भग करनेका अधिकार होता है।

* * *

१९-२-'३० ३॥। तक बापूजीसे बातें की। अिस लडाओमें रियासती प्रजाको असीम लाभ होगा। यह अुनसे समझकर अपना नाम सिपाहियोमें देनेका निश्चय किया।

१०४

२५-२-'३० आज बेक गभीर घटना हो गअी। वसन्त खरे चल बसा। लडका कितना ज्ञानपिपासु, तीक्ष्ण-बुद्धि और होनहार था। बापूने मृत्यु और जन्मका अनिवार्य स्वरूप और हर्ष-शोककी नि सारताका तत्त्वज्ञान बहुत समझाया। परतु अुनका विषाद अुनके अिस वाक्यमें भरा था कि अीश्वरका न्याय है, मै साठ वरसका बुड्ढा बैठा हू और छ सालका वसन्त चला गया।

* * *

२६-२-'३० बापूने (प्रार्थनामें) झमकलालका अुदाहरण देकर समझाया कि जिन लोगोने नाम दे दिये है, वे तो जेल या मौतके सामने ही खडे है। जिन्होंने

नाम नही लिखाये हैं, वे भी आपत्ति या अिनामका आमत्रण मिलने पर तो अुसका स्वागत करनेको तैयार रहे ही। अिन दो श्रेणियोंके सिवाय अन्य लोगोंको तो अपनी और आश्रमकी प्रतिष्ठाके हितार्थ चले जाना चाहिये।

* * *

२८-२-'३० आज मेघजीका देहावसान हो गया था। वापूको भी दुःख हुआ ही। परन्तु सिद्धान्त छोडकर टीका निकलवानेका आग्रह वे कैसे कर सकते है? आज अुन्होने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के अपने भाव बहुत विशद रूपमें समझाये।

* * *

१-३-'३० आज (प्रार्थनामें) वापूने सत्याग्रही योद्धाओकी चार अवस्थाओ पर प्रकाश डाला। वे कैद किये, पीटे, मारे या सम्पत्ति-विहीन किये जा सकते हैं। अत अिन सबके लिअे तैयार रहना चाहिये। जो लडाअीमें न भेजे जाय अुन्हे लेडी स्मिथवाले प्रभुसिंहकी भाति योद्धाओकी सहायताका कार्य पूर्ण कर्तव्यपरायणताके साथ करना चाहिये। अदालतमें सत्याग्रहियोको सिर्फ सच्चा अपराध स्वीकार कर लेनेके सिवाय और कोअी बयान न देना चाहिये।

१०५

२-३-'३० (आज प्रार्थनामें) विवाहके सबधमें भावी बहुओकी प्रतिज्ञामें से वापूने पतिको गुरु और देवतापद देनेकी बात निकाल देनेकी सूचना दी।

* * *

६-३-'३० आज 'योद्धाओ' की सूची पढी गअी। अपने रामका नाम न सुनकर निराशा तो हुअी, पर सेनापतिकी आज्ञा, क्या किया जाय?

(अिस पर वापूने मेरी डायरीमें लिखा "क्योकि राजपूतानामें जाना है अिसलिअे नाम नही लिया है। —वापू")

* * *

७-३-'३० ३ से ४ तक विद्यार्थी-मडलमें वापूका शका समाधान हुआ। आज कूचके बारेमें वस्त्र, भोजन, सेवाकार्य अित्यादि विस्तारपूर्वक बातें हुअी। बिडलाजी कहते थे कि वायसरायने डॉ० मुजेको गाधीजीका पत्र अशिष्ट बताया। शायद अुसमें पदवियोका अुपयोग नही किया गया, अिसलिअे!

* * *

अुसी (सायकालीन प्रार्थनाके) समय तार द्वारा वापूको खबर मिली कि वल्लभभाअीको बोरसद तालुकेके रास गावमें भाषणकी मनाअीका हुक्म तोडने पर पौने चार मासकी सादी सजा हुअी है और वे अभी साबरमती जेल लाये जा रहे हैं। प्रार्थना हो चुकने पर वापूने सबको शान्त और कर्तव्यपरायण रहनेका और प्रेस-प्रतिनिधियोको सावधान रहकर सत्य लिखनेका अुपदेश देकर वल्लभभाअीके दर्शन कराये।

वादमे ९।। तक बापूके पास रहा। वहा मजदूरो और नगर-निवासियोसे हडताल करने और सभाकी सूचनाकी विज्ञप्ति बापूने मिल-मालिकोकी समतिसे अपने हस्ताक्षरसे लिखवाकी। वल्लभभाअीकी प्रतिष्ठाका, अपने साथीका साथ देनेका अिस बूढेको कितना खयाल है!

१०६

८-३-'३० आज (प्रार्थनामें) बापूने कहा, "डॉ० हरिभाअी आदिने मेरी अनुपस्थितिमे आश्रमकी सेवाका वचन दिया है। परतु अुसका लाभ अनिवार्य अवस्थामे ही अुठाना चाहिये। विलायत तो मै तभी जाअगा जब सत्याग्रह खूब जोरोसे चलकर देशमें अितना बल आ जाय कि सरकारको हमसे सधि करनेके लिअे विवश होना पडे। अभी तो मैक्डोनाल्ड या बेन साहब बुला भी नही सकते और न लोग बुलाने देंगे। रेजीनाल्ड रेनाल्ड्स आश्रममें ही रहेगे। वे भारतको अग्रेजी प्रभुत्वसे छुडाने आये है। शिक्षित और अुच्च भावनावाले युवक है।"

* * *

१०-३-'३० आज लगभग दो हजार आदमी होगे। अत प्रार्थना नदीकी रेतमें हुअी। बापूने दर्शकोको कहा कि केवल कुतूहलके लिअे नही, प्रत्युत अुपासनाके प्रेमसे आअिये। खादी तो पहनिये ही और सत्याग्रहमें सहायता दीजिये।

१०७

११-३-'३० आज (सुबहकी प्रार्थनामें) बापूने कहा कि जो सत्याग्रह-युद्धमें शामिल हो रहे है अुन्हे जीत कर ही लौटना होगा। तब तक वे जेलमें रहेगे या काम करते करते मारे जायगे। अुन्हे अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रहके पाचो महाव्रत युद्धके अन्त तक पालन करने होगे। आश्रममे रहनेवाले स्त्री-पुरुषोको तो ये पालन करने ही होगे। दोनोमें से कोअी भी तैयार न हो तो वे युद्ध या आश्रमसे निकल सकते है। जिनकी स्त्रिया खुशीसे अनुमति न दें वे भी युद्धमे न जाय। स्त्रिया अपने बालकोको लाड न लडावें, शक्कर वगैरा न खाने दें। युवतिया शादी न करे, जब तक युद्ध जारी रहे, तो अच्छा है।

आज भी (शामकी) प्रार्थना नदी-तट पर ही हुअी। भीड़ ५००० के लगभग थी। बापूने आजका भाषण अपना वसीयतनामा, अतिम भाषण कहकर दिया। कहा कि लोगोको मेरी गिरफ्तारीके बाद शान्त और अनुशासनपूर्वक लडाअी जारी रखनी चाहिये।

१०८

१२–३–'३० आज (दाडी-कूच) के चिरस्मरणीय दिन सडक पर हजारोंकी भीडके लिअे, जो रातभर पडी थी, अलग (प्रात कालीन) प्रार्थना हुअी। प्रार्थनामें बापूने पीछे रहनेवालोंको कहा, 'अैसी तरह रहना कि आश्रमको शोभा दे।' अिन शब्दोंमें हमें शुद्ध, कर्तव्यपरायण, विनम्र और अनुशासनशील रहनेका अुपदेश भरा पडा है।

* * *

२२–३–'३० छात्रालयमें प्रतापको लिये खडा था कि यशोदाबहनने प्रेमाबहनकी प्रेरणासे मधुमक्षिकाओंको अुडा दिया। वे मेरे आ लिपटी। मुझे और बच्चेको बुरी तरह काटा। अजनाके शीघ्र मिट्टीका तेल लगानेसे बच्चा बच गया। अिस अवसर पर आश्रमकी सब बहनोंने जिस तत्परता और प्रेमसे सहायता दी अुससे मेरी श्रद्धा बढ गअी। विशेषत मोतीबहन, लक्ष्मीबहन और वेलाबहनका स्वार्थत्याग और तारावहन तथा शान्ता आदिकी सेवा हम लोग नही भूल सकते।

१०९

अिन्ही दिनो अेक रोजकी बात है। ठड कुछ सदाकी अपेक्षा अधिक पड रही थी। साबरमती नदीका पानी बहुत ठडा हो गया था। कुछ आश्रमवासी नित्य स्नानका नियम पालन करनेमें ढिलाअी दिखाने लगे थे। आश्रम व्यवस्थापकने अिसकी सूचना बापूको दी। अुन्होंने सामूहिक सूचनाअें शामकी प्रार्थनामें देनेके अपने रिवाजके अनुसार कहा, "भगवानने नदीका पानी दिया है, हाथ-पैर दिये है, फिर नहानेमें आलस्य क्यो?" अिसका अुत्तर तुरत कट्टूने दिया। यह आश्रमके अेक कार्यकर्ता श्री गिरिराजजीका लडका हरि था, जिसको आम तौर पर कट्टूके नामसे पुकारा जाता था। वह आश्रमके चचल बच्चोंकी टोलीका सरदार माना जाता था। अुसने कहा, "भगवाने टाढ पण दीधी छे! (भगवानने ठड भी तो दी है!)" सारा प्रार्थना-समाज खिलखिलाकर हस पडा। बापूजी भी अुसमें शरीक हुअे और मामला अुसीमें अुड गया।

११०

दाडी-कूचके कुछ समय पहले अेक दिन बापू और महादेवभाअी लार्ड अर्विनके नाम भेजे जानेवाले पत्रके मसौदे पर विचार कर रहे थे। मै वही था। मीराबहन भी आ गअी थी। मसौदेमें अेक वाक्य था जिसमें so charged शब्द शायद अिस सिलसिलेमें आये थे कि वातावरण हिंसासे परिपूर्ण है। महादेवभाअीने अिसे टाअिप करनेकी भूल बताया और कहा कि सही शब्दप्रयोग surcharged होना चाहिये। बापूजीको सबके अंग्रेजी ज्ञानकी परीक्षा लेनेकी सूझी। मीराबहनसे पूछा, 'क्यो मीरा, क्या होना चाहिये?' मीराबहनने भी महादेवभाअीका समर्थन किया। अिसके बाद

मेरी बारी आयी। महादेवभाई और मीराबहन जैसे अंग्रेजीके विद्वानोंके सामने मेरी तो क्या बिसात थी? फिर भी शायद अिस खयालसे कि अल्पज्ञोंसे भी कभी कभी सही बात मिल सकती है मुझसे बोले, 'रामनारायण, तुमने भी तो अंग्रेजीका साप्ताहिक निकाला है। तुम बताओ, so charged ठीक है या surcharged होना चाहिये?' मुझे यह कहनेमें अेक क्षण भी नहीं लगा, 'बापू, मेरी रायमें so charged अधिक अुपयुक्त है।' बापूने कहा, 'मैंने यही शब्दप्रयोग किया है।' फिर तो अुन्होंने अिस शब्दप्रयोग पर ही नहीं, अंग्रेजी-भाषा और अुसके मुहावरे पर अेक छोटासा प्रवचन दे डाला। मुझे अुनकी भाषाकी मर्मज्ञताका और छोटे आदमियोंकी भी अितनी परवाह करनेका पहला अनुभव हुआ।

१११

अिसके बाद यह सवाल पैदा हुआ कि बापूकी गिरफ्तारीके बाद 'यंग अिंडिया' का संपादन कौन करे। महादेवभाअीके शीघ्र गिरफ्तार होनेकी संभावना तो थी ही। बापूने कहा, 'रेनाल्ड्स तो है ही, बादमें रामनारायण संभाल लेगा।' महादेवभाअी बोले, 'हा, रामनारायणजी हुशार माणस छे (होशियार आदमी है)।' बापू बोले, 'वहादर पण छे (बहादुर भी है)।' मैं अिस प्रशंसाको सुनकर शर्मके मारे झुक गया। मगर कर्तव्यवश साहस करके बोला, "बापू, आपने शायद 'यंग राजस्थान' के संपादन परसे मेरी योग्यताका अनुमान लगाया है। मगर वह व्यापार तो मैंने बहुत थोडी पूंजीसे चलाया था। 'यंग अिंडिया' के संपादनकी मुझमें जरा भी योग्यता नहीं है। यह जिम्मेदारी लेना मेरे लिअे सर्वथा अनधिकार चेष्टा होगी।' बात यहीं खत्म हो गअी, परन्तु मेरी कथित बहादुरीकी राय अंत तक कायम रही। अिसे मैं बापूकी महान गुणग्राहकता ही समझ सकता हूं।

११२

अेक दिन कुछ यात्री आश्रम देखने आये। दोपहरका वक्त था। मुझसे पानी मांगा। मैंने कुअेंसे बाल्टी खींचकर पिला दिया। अिस पर कुछ आश्रमवासियोंने मुझे रोका और बताया कि आश्रममें अिस तरह खिलाने-पिलानेका रिवाज नहीं है। मुझे अिसमें शुद्ध सेवा नजर आती थी। मैंने शामको घूमते समय बापूसे अिस रिवाजका कारण पूछा। अुन्होंने कहा, 'रोगी और अपंगकी शक्तिभर शरीर-सेवा कर देनी चाहिये। परंतु स्वस्थ मनुष्यको मुफ्त खिलाना-पिलाना आलस्यको बढाना, भिक्षमंगेपनको प्रोत्साहन देना और मानव-गौरव घटाना है। अिस बारेमें अिन्सानको स्वावलम्बी बनाना चाहिये। अिसीलिअे मैंने कुअें पर रस्सी बाल्टी रख छोडी है कि जिसे प्यास लगे कुअेंसे निकाल कर पानी पी ले। खानेके बारेमें भी यही बात है कि खैरातमें न देकर कामके बदलेमें देना चाहिये।'

११३

वल्लभभाओी नामके अेक कार्यकर्ता कुछ समय तक विजोलिया (मेवाड) के किसानोमें काम कर चुके थे। वहाके किसानो पर हम लोगोका प्रभाव अुन्हें मालूम था। अब वे गुजरातके किसी गावमें काम कर रहे थे। अेक दिन मुझे अचानक साबरमती आश्रममें मिल गये और अपने केन्द पर चलनेका आग्रह करने लगे। मैंने अपनी मर्यादा बताकर अिन्कार कर दिया। पर वे न माने। आखिर यह समझौता हुआ कि बापू अनुमति दे देंगे तो मैं चला चलूगा। वल्लभभाओीने जब बापूके सामने प्रस्ताव रखा तो वे बोले, "क्या गुजरातमे कोओी नेता नही रह गया?" मुझे यह अुत्तर अटपटा सा लगा। मन ही मन प्रान्तीयताकी बू भी आओी। तीसरे पहर जब मैं सदाकी भाति बापूके पास काम करने गया तो अेकान्त पाकर मैंने अपनी प्रतिक्रिया बापूको सुनाओी। अुन्होने कहा, "तुमने अच्छा किया, मुझे अपनी शका बता दी। बात यह है कि मेरी स्वदेशीकी व्याख्या समझ लेनी चाहिये। जो चीज अपने मुहल्ले, गाव, जिले, प्रान्त और देशमें मिल सके अुसे महगी होने पर भी अपनाना हमारा धर्म है। अिससे स्थानीय व्यक्तियोको काम, रोजगार, शिक्षण, अनुभव और प्रोत्साहन मिलता है। सार्वजनिक क्षेत्रमें लागू करने पर अिस सिद्धान्तका अर्थ यह होता है कि अखिल भारतीय व्यक्तियोको अपवाद रखकर आम तौर पर हमें अपने प्रान्तकी सीमामें काम करनेवाले कार्यकर्ताओसे ही काम चला लेना चाहिये। अिससे आत्मविश्वास और स्वावलम्बन तो पैदा होता ही है, साथ ही जो ज्ञान प्रान्तीय या स्थानीय परिस्थितियोका वहाके कार्यकर्ताओको होता है, वह बाहरवालोको चाहे वे कितने ही योग्य या प्रसिद्ध हो, नही हो सकता। अिसलिअे अुन समस्याओके सुलझानेमें वे ही अधिक कारगर हो सकते है। बाहरवाले कभी कभी अज्ञान या अधूरे ज्ञानके कारण बिरादा न होने पर भी समस्याको सुलझानेके बजाय अुलझा देते है। वैसे, हर प्रान्तमें जहा आवश्यकता हो, या कार्यकर्ताकी अिच्छा हो, बाहरसे आकर कोओी काम करे तो अुसका स्वागत ही होना चाहिये।" अिस प्रकार अेक तुच्छसे प्रसगसे मुझे बापूके अेक बडे अुसूलको समझनेका मौका मिल गया।

११४

साबरमती आश्रमकी ही बात है। नमक आन्दोलन शुरू होनेवाला था। नियम-पालन और समयकी पाबन्दीमें बडी कडाओी होती थी। प्रार्थना-भूमि पर घंटी बजते ही फाटक बन्द हो जाता था। घटी बजनेके बाद आनेवाले बाहर रहते और गैरहाजिर माने जाते थे। अेक रोज शामको बापू अैसे वक्त आये कि घटी बजते बजते अुनका अेक पैर फाटकके बाहर और दूसरा भीतर था। बन्द करनेवालेने अुन्हे अन्दर ले लिया और वे भी चले आये। प्रार्थनाके बाद बापू बोले, "आज मैंने भूल की। मेरा अधिकतर शरीर भीतर ही था, फिर भी बन्द करनेवालेने रियायत करके मुझे अन्दर

लेनेमें गलती की। मुझे भी बाहर रह जाना चाहिये था। मगर मुझे लोभ था कि अितने लोग मेरी प्रतीक्षामें होंगे। परतु रोगी या रोगीके सेवकके सिवा अैसी रियायत न किसीको करनी चाहिये, न करानी चाहिये।" अितनी प्रबल थी बापूकी आत्म-निरीक्षण और अपने प्रति कठोर रहनेकी भावना। अुस दिनके बाद प्रार्थना खुलेमें होने लगी।

११५

अेक भाअीकी डायरी देखकर अेक दिन सायकालीन प्रार्थनामें अुसे आदर्श बताते हुअे अुसके अक्षरोकी भी बडी तारीफ की और कहा, "जितने मेरे अक्षर खराब हैं अुतने ही अिनके अच्छे हैं। 'महात्मा' की भी बुरी बातकी नकल न करके छोटे आदमियोके भी गुणोका अनुकरण करना चाहिये। हमारी भारतीय शिक्षा-पद्धतिमें सुलेखन पर बडा जोर दिया जाता था और बहुत लोगोके अक्षर मोतीके दाने जैसे होते थे। आजकल अधिकाश पढे-लिखोके अक्षर भद्दे होते हैं। गोल गोल, बडे बडे और सुन्दर अक्षर लिखनेका अभ्यास मनुष्यकी सुघडताकी निशानी है।" बापू जितने आन्तरिक स्वच्छताके कायल थे, अुतने ही बाहरी सफाअीके भी हिमायती थे।

११६

अेक दिन तीसरे पहर नित्यनियमानुसार बापूके पास काम करनेके लिअे पहुचा तो जाते ही अुन्होने मेरे कुर्तेकी तरफ अिशारा किया। कधे पर अुसका कुछ हिस्सा फटा हुआ था। मैंने कहा, 'बापू, अजना बीमार है, अिसलिअे सिलना रह गया।' अुनके माथे पर हल्की-सी त्यौरी पड गअी, मगर मुस्कुरा कर बोले, 'तुम्हारे जैसे साफ-सुथरे, व्यवस्थित और सुरुचिपूर्ण आदमीको अितना लापरवाह नही होना चाहिये। कुर्ता पहनना जरूरी नही है, मगर पहनते हो तो साफ और सिला हुआ होना चाहिये। गदा या फटा कपडा काममें लेना आलस्य, अज्ञान और असभ्यताका चिह्न है। सेवकको अपने कपडे सीना नही तो अुनकी मरम्मत करना तो आना ही चाहिये।' छोटी छोटी बातो पर कडी नजर रखकर वे अपने साथियोको कितना जागरूक रखते थे!

११७

आश्रमके हिसाबका कोअी मामला था। व्यवस्थापक पर आरोप था कि हिसाब ठीक ढगसे नही रखा गया। आरोप लगानेवालोमें गाधी-परिवारके व अन्य कुछ 'बडे' लोग भी थे। बापूने दोनो तरफकी बात सुनकर व्यवस्थापकको निर्दोष करार दिया। कुछ ही दिन बाद काठियावाडमे काम करनेवाले अेक गाधी-कुलके भाअी पर अुसी प्रकारका आक्षेप हुआ। अुसमें भी बापूने अुभय पक्षका मामला सुनकर अभियुक्तके हकमें फैसला दिया। न पहले केसमें 'स्वजनो' की शिकायत पर दूसरेको कसूरवार

ठहराया और न दूसरे मामलेमें स्वजन होनेके कारण ही वेकसूरको गुनहगार बताया। दोनो मामले मेरे सामने निपटाये गये थे। मुझे बापूकी निष्पक्षता पर तो आश्चर्य नहीं हुआ, परतु अुनकी हिसाब-किताबकी बारीकियोंकी जानकारी देखकर बडा ताज्जुब हुआ। अिससे भी बढकर मैंने यह देखा कि प्रामाणिक भूल, अज्ञान या असावधानीके और अप्रामाणिकताके बीच वे कितना सूक्ष्म विवेक करते थे और साथ ही हिसाब बाकायदा स्वच्छ रखनेका कितना आग्रह रखते थे। गुजरातके अेक प्रमुख सेवकका किस्सा तो भीतरी हल्कोंमें मशहर ही है कि अुन्हें बापूसे केवल अिसीलिअे अलग होना पडा कि वे सार्वजनिक धनका हिसाब नहीं रख पाते थे।

११८

अेक रातको कोअी चोर भोजनालयमें घुसा। अुस दिनों आश्रमवासी बारी बारीसे टोलियोंमें पहरा देते थे। चोर पकड लिया गया। रातको तो अुसे कोठरीमें बन्द रखा गया। परतु सुबह जब बापू नाश्ता कर रहे थे, तब अुसे अुनके सामने पेश किया गया। अुन्होंने सबसे पहले पूछा, 'अिसे नाश्ता करा दिया है?' मेरे लिअे पहला आश्चर्य तो यह असाधारण औदार्य ही था। खैर, नाश्ता कराकर लाये तो बापूने चोरको बडे प्रेमसे समझाया कि अिस तरह चोरी नहीं करनी चाहिये, चोरी करना पाप है और अगर गरीबीके कारण अैसा किया गया है तो आश्रममें काम मिल सकता है। चोर तो चला गया, मगर शामको बापूने प्रार्थनामें कहा, "समाजमें चोरी-डाके अिसलिअे होते हैं कि अधिकाश लोगोंको कडी मेहनत करने पर भी पूरा रोटी-कपडा नहीं मिलता और मुट्ठीभर आदमी शरीरश्रम न करके भी आरामसे रहते हैं। हम आश्रमवालोंने व्रत तो गरीबीका — अपरिग्रहका — लिया है, परतु हमारे पास कितना फालतू सग्रह है? अिसे देखकर पडोसके गाववालोंको अीर्ष्या हो तो क्या आश्चर्य? हमें अन्तर्मुख होकर अैसा आचरण करना चाहिये जिससे दूसरोंको अुद्वेग न हो।" बापूने अपराधी मानसका जो निदान और अिलाज बताया, वह सदाके लिअे हृदय और बुद्धिमें घर कर गया।

११९

जिस दिन मैं साबरमती पहुचा अुसी दिन बापूने पिछला अितिहास जानना चाहा। मैंने अेकान्त मागा, क्योंकि अुसमें कुछ बातें खानगी होना स्वाभाविक था। परंतु मुझे बापूके सिवा दूसरे लोगोंमें अितना विश्वास नहीं था। मेरे वार्तालापमें दूसरोंका सबध आनेवाला था। बापूको मेरा अेकान्त चाहना अच्छा तो नहीं लगा, परतु मेरी भावनाओंका लिहाज करके वे मेरी बात मान गये। जब मेरी अुनकी बातचीत खत्म हो गअी तब बोले, "तुम्हारी नाववाली ठीक थी। मुझे अिसमें भीरुता लगी थी, अिसीलिअे मैंने अुसे नापसन्द किया था। वैसे आम तौर पर मैं चाहता हू कि सभी

सेवक खुली किताब बनकर रहे। मेरा अपना जीवन तो अैसा ही है। परतु दूसरोकी रक्षाके लिअे मुझे कअी बार अेकान्तता रखनी पडती है। तुमने भी अुसी विचारसे अैसा किया तो ठीक ही किया।" बापू हर बातमें दूसरेको समझाने और दूसरोसे समझनेकी वृत्ति रखते थे और जहा कोअी सिद्धान्त आडे न आता हो वहा दूसरोकी सुविधाको प्रधानता देते थे।

१२०

चि० प्रताप बच्चा था। अेक दिन बापूकी कमरसे लटकती हुअी घडी देखकर अुसके लिअे मचल गया और अपनी माकी साडी पकडकर रोने लगा। बापू जहा सबके लिअे स्नेहपूर्ण हृदय और बच्चोके प्रति अत्यत कोमल भाव रखते थे, वहा वे यह भी मानते थे कि बच्चोकी भी अनुचित माग पूरी नही करनी चाहिये और अुन्हे सच्ची तालीम देकर सही रास्ता दिखाना चाहिये। अत' वे प्रतापके पास आये और अुसके कानसे घडी लगाकर कहने लगे, 'देखो, कैसे टिकटिक बोलती है। मगर यह तेरा खिलौना नही, मेरा है। तुझे नही मिलेगा।' फिर तो जब बापू और प्रताप मिलते तो दोनो अेक-दूसरेको 'टिकटिक' कहकर सबोधन करते, यह क्रिया दोहरा दी जाती और मामला शान्त हो जाता।

१२१

अेक दिन शामको बापू सदल-बल सैर करके लौट रहे थे। साबरमती आश्रमके पास पहुचे तब दैलोका झुड पीछेसे दौडता भागता सीग फटकारता हुआ आया। साथके लगभग सब लोग डरकर अिधर अुधर बिखर गये, मगर बापू अपने मार्ग पर स्थिर भावसे चलते रहे।

१२२

दाडी-कूचसे पहली रातको बापूकी गिरफ्तारीकी अफवाहे बडी गरम हो गअी थी। पुलिस भी आ पहुची। आश्रमके सब लोगोमें हलचल मच गअी। मगर बापूको जगाकर सूचना दी गअी तो सुनकर चुपचाप सो गये, मानो कोअी बात ही नही।

१२३

आश्रम पहुचने पर मुझे नियमित डायरी लिखनेका आदेश देनेके साथ बापूने यह भी कहा कि अपने जीवनके सक्षिप्त अितिहासके साथ साथ परिवारके सब लोगोके नाम भी लिख्। अुस समय अिस हिदायतका रहस्य मेरी समझमें नही आया। बादमें देखा कि साथियोके घरके सब आदमियोसे वे अपना सीधा सबध रखते थे, सबके नाम

अुन्हें याद रहते थे और अुनसे कितना ही संक्षिप्त किन्तु अलग अलग पत्रव्यवहार भी करते थे। अैसे सैकडों व्यक्तियोंको वे अपने परिवारके सदस्य मानते और वैसा ही व्यवहार अुनके साथ रखते थे।

१२४

जितने निर्भय, जितने शुद्ध होने पर भी बापू अपनी कमजोरियोंको साथियों और जनतासे छिपाते नहीं थे। वे किसीसे डरते नहीं थे, मौतसे भी नहीं डरते थे। मगर साप-बिच्छूका भय अुन्हें अन्त तक बना रहा। यह वे कहते भी थे और लिखते भी थे। रातको सोते समय पोटास और अिमलीका सत पास रखकर सोते थे, ताकि अिन विषैले जन्तुओंके काटने पर अिन दवाअियोंका तुरंत अुपयोग कर लिया जाय। पर वे अिन जानवरोंको मारने नहीं देते थे। पकडवाकर दूर छुडवा देते थे। अुनका खयाल था कि ये जीव भी सताये जाने पर ही काटते हैं।

१२५

आश्रममें ब्रह्मचर्य पालन अनिवार्य था। अिसलिअे स्त्री-पुरुषोंके रहनेका स्थान अलग था। फिर भी रोगियों और पीडितोंके लिअे वे अन्य नियमोंकी तरह अिस नियमके पालनमें भी अपवाद कर देते थे। पति पत्नीमें से कोअी बीमार होता तो अेक-दूसरेकी सेवाके लिअे साथ रहनेकी छूट दे देते थे। अजनाकी मादगीमें मुझ जैसे नये आदमीको भी साथ रहनेकी अनुमति दे दी थी। अितना ही नहीं, अुसे देखने अेक बार तो नियमित रूपमें आते, अुसके दातोंमें पायरियाके लिअे टिंचर आयडीन खुद लगाते और अुसके खानपान, रहन-सहन और पथ्यादिके बारेमें बारंबार सूचनाअें देकर जाते थे। खानपानके बारेमें स्वयं बहुत कडे होकर भी अपने कुछ पुराने साथियोंकी अनुकूलता और रुचियोंका लिहाज करके अुन्हें अलग रहने और खाने-पीनेकी सुविधा भी अुन्होंने अिसी अुदार भावसे दे रखी थी।

१२६

चि० प्रतापको बहुत बचपनमें पेशाबकी तकलीफ रहती थी। जननेन्द्रियके घूघटकी नली शायद अुसका कारण थी। अेक रातको वह चिल्लाया तो दूसरे दिन सुबह बापूको किसी वहमने कह दिया कि अजना बहनके प्रतापको रातको बडी पीडा रही। सहृदय बापूने हम दोनोंको नाश्तेके समय बुलाकर मीठी-सी डाट पिला दी, प्रतापके अवयवकी परीक्षा की, अुसी समय अहमदाबादके प्रसिद्ध सर्जन और गांधी-भक्त डॉक्टर हरि-प्रसाद देसाअीके नाम अपने हाथसे पत्र लिखकर दिया और हमें सख्त हिदायत की कि आज ही जाकर ऑपरेशन करायें। हमने गद्गद होकर आज्ञा शिरोधार्य की। अैसे थे वात्सल्यमूर्ति बापू!

१२७

अजनादेवीको पायरिया (दतरोग) और सग्रहणी—दो बीमारिया लगी हुअी थी। प्रताप ९ महीनेका हो चुका था। बापूने माका दूध मा और बच्चा दोनोके हितमें तुरत छुडवा देनेकी सलाह दी। तदनुसार दूध छुडवा दिया। वह रातको चिल्लाया। रोना सुनकर बापू स्वय अुठकर आये और स्वय प्रतापको किशमिश खिलाकर गये। फिर तो गायके दूधमे किशमिश भिगोकर देनेका नुसखा कारगर हो गया। अिस प्रकार व्यक्तिगत राहत तो पहुचा दी, साथ ही बच्चेके चिल्लानेसे दूसरोकी नीदमें खलल न पडे, अिसके लिअे अुस रातको हमें साबरमती तट पर भेज दिया।

१२८

दाडी-कूचमें शरीक होनेकी मुझे मजूरी नही मिली थी। अजनादेवीके स्वास्थ्यको देखते हुअे और मुझे रचनात्मक कार्यक्रमका अधिक अभ्यास करानेके खयालसे बापू मेरा आश्रममें ही कुछ समय तक और रहना बेहतर समझते थे। लेकिन जब 'बुद्धिमानो' के अुपहास और शकाओका पात्र यह छोटासा नमक-आन्दोलन देशव्यापी तूफानकी शकल पकड गया तो मुझसे नही रहा गया। अुधर अजमेरके प्रमुख कार्यकर्ताओकी तरफसे भी मेरी वहा माग हुअी। मैं छोटेलालजीको साथ लेकर दाडी पहुचा और बापूसे मिला। अुन्होने मेरी तीव्र अिच्छा, साथियोकी माग और राजस्थानकी आवश्यकताको समझकर मुझे अनुमति दे दी। साथ ही मेरी आवश्यकताओको भी न भूले और मेरे जेल जानेके बाद भी खर्च भिजवाते रहनेकी आश्रम-व्यवस्थापकको सूचना दे दी। अितना अचूक ध्यान वे अपने नयेसे नये साथियोका रखते थे।

१२९

काग्रेस सगठनमें मध्यभारत अुन दिनो अजमेर प्रान्तकी सीमामें ही माना जाता था। नमक-सत्याग्रहके लिअे मालवेसे जो स्वयसेवक आये थे, अुनमे अेक पहलवान भी था। अुसने काग्रेसका काम न करके घर लौटनेके लिअे काग्रेससे रुपयेकी माग की। मैं अुन दिनो प्रान्तीय काग्रेसका मत्री था। मैंने स्वयसेवकको समझाया कि अगर तुम जेल जाकर आते तो घर वापस जानेके लिअे खर्च दिया जा सकता था, मगर जिस कामके लिअे तुम आये वह भी नही करना चाहते, तब काग्रेसने रुपया कैसे दिया जा सकता है? यह बात अुसे पसन्द नही आअी और अुसने मुझ पर हमला कर दिया। मेरा स्वभाव तेज माना जाता था, मगर मैंने अुसका आक्रमण सह लिया और दूसरे स्वयसेवकोको भी प्रतिकार करनेसे रोक दिया। यह बापूके ताजा सस्मरण और सदुपदेशोका ही फल था।

१३०

नमक-सत्याग्रहके सिलसिलेमें मुझे भी अेक नालकी कड़ी कैदकी सजा मिली। जेल-जीवनका अनुभव तो पहले ही अेकसे अधिक बार हो चुका था। अिस बार वृत्तमें कार्यकर्ता साथ थे। प्रथम श्रेणीका व्यवहार था। अिसलिअे कोअी कष्ट तो महसूस नहीं हुआ। परंतु बापूके सहवासके प्रकाशमें कुछ नये अनुभव जरूर हुअे। पहला तो यह था कि सामूहिक जीवनमें सहिष्णुता आअी। दूसरी, भूल होने पर अुसकी जल्दी ही प्रतीति होने लगी और अुसे सुधार लेनेमें मिथ्याभिमान या भीरुता पर विजय प्राप्त करनेकी वृत्ति आने लगी। अिसका प्रमाण अेक अरुचिकर घटनामें मिला। अुसका वर्णन मेरी अुस समयकी जेल डायरीमें अिस प्रकार है.

"अगस्त (१९३०) के अुत्तरार्धमें जेलरकी वाणी और कर्मसे स्वभाव, कार्यादिक्य और दबावके कारण कुछ अैसी भूलें हुअी कि जिनसे कैदियोंमें नाराजगी फैली। मैं भी क्रुद्ध हो अुठा। शायद दूसरोंसे अधिक आवेशमें आया। होना चाहिये था विपरीत। मनुष्य अुपकार बहुत शीघ्र भूल जाता है। अपकार खूब याद रखता है। यदि अिस बारेमें जोड़-बाकीका नियम रखा जा सके तो भी बहुत कुछ विगाड़ बचाया जा सकता है। मैंने यद्यपि आरम्भसे ही जेलरसे कमसे कम रियायतें लेनेका प्रयत्न किया है, फिर भी अुनके नाचारण सद्व्यवहारका लाभ तो अुठा ही चुका था। परंतु कमजोरीका ही नाम तो मनुष्य-स्वभाव ठहरा। अिधर सुपरिन्टेन्डेन्टने परेड कराने और खड़े करने पर आग्रह किया। व्यक्तिशः अेक सत्याग्रही कैदीकी हैसियतसे साधारणतः जेलके नियम मानना और अधिकारियोंका आदर करना मेरा फर्ज था। परंतु हमारे स्वाभिमानने अहंकारका रूप धारण कर लिया था। जो चीज हम दूसरोंमें, यदि हम पर आजमाअी जाती तो, बुरी समझते थे, वही स्वयं दूसरों पर आजमाना कर्तव्य समझ बैठे। अुसमें ये दोनों बातें भूल गये कि हम सत्याग्रही हैं और कैदी हैं। .. खासकर जब जेलरने हाथ जोड़ जोड़ कर यह सलाह दी थी कि परेडमें खड़े हो जाअिये, तब तो हमें अुन्हींकी खातिर झुक ही जाना था। परंतु रास्ता चूके सो चूके। अुस समय यह सुमति कहांसे आती कि 'दब तो नहीं रहे हैं', अिस चिन्ताके साथ यह भी खयाल रखें कि 'अनुचित तो नहीं कर रहे हैं'?

" लड़ाअी छेड़ ही तो दी। यहां भी भूल हुअी। पद्धति गलत अख्तियार की। कौशल और सिद्धान्त दोनोंकी दृष्टिसे चूके। अुत्तरोत्तर नियम-भंगके मार्गका आश्रय लिया। विपक्षीको अधिक चिटानेकी योजना की। . नारोंमें व्यक्तिगत हिंसा थी और वह अुस समयके बाद भी जब जेलर बेचारे हमारे प्रतिनिधियोंके सम्मुख अपनी गलतियोंके लिअे माफी मांग चुके थे और प्रायश्चित्त तक करनेको रजामंद थे। बात यहां तक बढ़ी कि वे जो करते थे, अुसमें प्रत्यक्ष सलाअीको भी हम

बुराओसे प्रेरित समझने लगे। अस्तु, लडाओका अस्त्र भूख-हडताल चुना गया। मेरी राय तो यही थी। अुसके दो कारण थे। अेक तो जिसमे प्रमुख शक्तिया अधिक मात्रामे योग दे सकती थी। दूसरे, अधिकारियोको अुत्तेजनाके स्थान पर सहानुभूति ही होती। . .

"१ सितम्बरकी पिटाओमें तो अपने रामका नम्बर आया नही, सिर्फ धक्के-घूमसे ही पावन किये गये। परतु ५ ता० को जब सजाअें दी गअी तो ठेठ १५ ता० तक बेडिया पहननेवालोमे अवश्य अपना भी सम्मान हुआ। अेकान्त कोठडी तो अन्य साथियोंके साथ ही मिली थी। कुछ भी हो, ये ११ दिन बीते बडे मजेमें।

"यहा आकर हृदयमथन शुरू हुआ। बापूजीके साथ जेल-जीवन सम्बन्धी वार्तालाप याद आया। . और सत्याग्रहीके आचरणकी विधि पर खयाल गया। प्रतीति हुअी कि भटक गये। झूठे अभिमान, क्रोध और अविवेकके वेगमें अपना विनय, गाभीर्य और सतर्कता खो बैठे। दूसरोकी नीति अख्तियार कर ली, अपनी छोड दी। बापूके आदेशानुसार जेल-जीवनमें कष्ट-सहनकी प्रामाणिक वृत्तिका परिचय क्यो न दिया, अपनी शक्तिकी सीमा क्यो भूल गये, व्यक्तिको अुसके कुछ कार्यो परसे ही दुष्ट क्यो समझ लिया, अनुशासनप्रिय होते हुअे भी अधिकारियोके प्रति सम्मान दिखानेसे क्यो अिन्कार किया, जिस झूठे स्वाभिमानके कारण बाहर भी अितने झगडे होते है अुसीको — वह भी अिस चारदीवारीमे — अितना अुच्छासन क्यो दिया, जिस नियमनको अपने अधीन लोगो पर लादनेकी स्वय हमको अितनी चिन्ता रहती थी अुस पर सुपरिन्टेन्डेन्टके आग्रही होने पर हमें अितना अेतराज क्यो हुआ, जेलरकी बात बातमे दुर्भावकी गध हमे क्यो आने लगी, जो अिस तुन्द-मिजाजीमें हममे सहमत न हो सके अुनके प्रति असहिष्णुता क्यो होनी चाहिये? अित्यादि अनेक प्रश्न खडे हुअे और प्रत्येकका अुत्तर अपनी अक्षमता मिला। अेक प्रकारका क्षोभ अुतर गया। परतु असफलता कबूल करनेके लिअे साहस न हुआ। अन्तमें परमेश्वरने बल दिया। . . अिस नतीजे पर पहुचे कि स्पष्ट शब्दोमें सुपरिन्टेन्डेन्टसे कह देना चाहिये। सत्य ही धर्म है, फिर चाहे कोअी कुछ भी कहे। १५ ता० को सुपरिन्टेन्डेन्टके सामने फिर पेशी हुअी। न तो 'प्रतिष्ठा' और न पास खडे अन्य साथियोके सकोचका ही खयाल आया और पूरी बात कहे बिना सतोष न हुआ।

"सारी बातो पर विचार किया जाय तो समझौता सम्मानपूर्ण और अनुभव मूल्यवान हुआ।'

भूल करके अुसे स्वीकार करनेका साहस करनेमें पहल मैंने की, जिसका मुझे सतोष हुआ और अिस बारेमें बापूके अुपदेशका मूल्य मेरे तेज स्वभावने पहली बार प्रत्यक्ष रूपमें समझा।

१३१

गांधी-अर्विन समझौतेके मातहत जब हम लोग जेलमें छूटे तो जमनालालजीने गांधी-सेवा-संघके अध्यक्षके नाते मुझे भी संघका सदस्य बननेका अनुरोध किया। विचारोंकी दृष्टिसे मुझे कोई दिक्कत नहीं थी, परन्तु मैं देशी राज्योंकी प्रजाकी राजनीतिक सेवाका व्रतधारी था और अिसके लिअे संघके कार्यक्रममें गुंजाअिश नहीं थी। सेठजी जिस अंगको जोड़ना मेरे साथ विशेष रियायत समझते थे, जो संस्थाके अध्यक्षके नाते अुन्हें पक्षपात प्रतीत हुआ। अुधर मुझे संघमें लेना भी चाहते थे। अन्तमें मेरे सुझाव पर यह तय हुआ कि वे बापूसे परामर्श कर लें और बापू जो निर्णय दें वह मुझे और अुन्हें भी स्वीकार हो। बापूसे सलाह ली गअी तो अुन्होंने वह गुंजाअिश कर दी। अुनका कहना यह था कि 'मैंने देशी राज्योंमें राजनीतिक कार्यकी स्पर्धा राजा प्रजा सेवक समितिके विधानमें बता ही दी है और वह रामनारायणको स्वीकार है, अिसलिअे संघके सदस्य बन जानेमें अब कोअी कठिनाअी नहीं।' मैं सदस्य बन गया। बापूमें कार्यकर्ताओंकी प्रत्येक प्रामाणिक कठिनाअीको दूर करनेकी जितनी वृत्ति थी अुतनी ही क्षमता भी थी।

१३२

सन् '३१ के राष्ट्रीय सप्ताहमें अजमेरमें खादी फेरीका संगठन मेरे सुपुर्द हुआ था। अिस सिलसिलेमें दो अंग्रेज अधिकारियोंसे भी मिलनेका काम पड़ा। मैंने अुन्हें खादीके शुद्ध आर्थिक परोपकारका पहलू समझाया तो अुन्होंने काफी खरीदारी की। अुनमें मैंने बापूके प्रति व्यक्तिगत सम्मान और अुनके बारेमें जाननेकी अुत्सुकता तो पायी ही, बापूकी निर्भीक दलील और अपीलके शालीन ढंगका प्रभाव भी प्रत्यक्ष होते देखा। बात यह हुअी कि रेलवे कारखानेके अुच्चाधिकारी मि० कोट्स्वर्थने, जैसा अंग्रेज अफसर अुन दिनों किया ही करते थे, मुझसे पूछा. "अंग्रेज चले जायेंगे तो हिन्दू-मुसलमानोंमें अमन कैसे रहेगा?" मैंने वही अुत्तर दोहरा दिया जो बापूने अिसी सवालके जवाबमें कमांडर केनवर्दीको पिछले साल साबरमती आश्रममें भेंटमें दिया था. "आप लोगोंके आनेसे पहले भी हम किसी प्रकार जी रहे थे। जहां आप लोग नहीं पहुंचे हैं, वहां भी लोग सुख, शान्तिसे रहते ही हैं। और अगर जर्मनी अिंग्लैंड पर अधिकार जमाकर कहने लगे कि अुसका राज अुठ जानेसे रोमन कैथलिक और प्रोटेस्टेण्ट अथवा स्कॉच और अंग्रेज आपसमें लड़ मरेंगे, तो क्या अंग्रेज अपना घर जर्मनोंके हाथमें रहने देंगे? आखिर, देश हमारा है, अुनकी अितनी फिक्र आप क्यों करते हैं? अपने घरकी चिन्ता हमें ही कर लेने दीजिये।" साहब सुनकर लाजवाब हो गये।

किसी नन्हे जर मेयो कालेजमें बहाके अंग्रेज वाअिस प्रिंसिपल द्वारा किये गये किसी शब्दके अपमान पर मैंने बापूके लहजेमें अुनकी अुदात्त भावनाओंको छूते हुअ अुन्हें लिखा, तो प्रिंसिपल स्टोनने लिखित माफीनामा देनेमें भी परहेज नहीं किया।

१३३

गांधीजीका आरम्भ होनेके साथ ही कांग्रेसके कार्यक्रममें अस्पृश्यता-निवारण अेक अविभाज्य अंग बन गया था। शुद्धान्त आन्दोलनों और संस्थाओंके प्रयत्नोंके फलस्वरूप हिन्दुओंके प्रगतिशील हलकोंमें अछूतपन बुरी चीज माना जाने लगा था। मगर साधारण हिन्दू समाजके शरीरमें यह रोग अभी गहरा पैठा हुआ था। अिधर दैन्ये मैकडोनाल्डकी सरकारने मुसलमानोंकी तरह अछूतोंका अेक अलग राजनीतिक वर्ग कायम करके राष्ट्रको दो से बढ़ाकर तीन टुकड़ोंमें बांट देनेका निर्णय किया। गांधीजी गोलमेज परिषदमें ही यह चेतावनी दे चुके थे कि अैसी कोअी योजना अमलमें आअी तो अुसके विरोधमें मैं अपनी जान लड़ा दूंगा। सन् १९३२ में जब ब्रिटिश हुकूमतका साम्प्रदायिक निर्णय प्रकाशित हुआ और अछूत जातियोंके लिअे पृथक् निर्वाचनकी पद्धति कायम कर दी गअी, तो गांधीजीने यरवडा मंदिरसे ही घोषणा कर दी कि यदि हिन्दू नेताओंने हिन्दूधर्मके सिरसे अस्पृश्यताका पाप धो डालने और विदेशी सरकारने हिन्दूजातिका अंगभंग करनेवाले फैसलेको बदल देनेका आश्वासन नहीं दिया तो मैं आमरण अनशन करूंगा।

तदनुसार यह व्रत आरम्भ भी हो गया। मुल्कके अेक कोनेसे दूसरे कोने तक हाहाकार मच गया। असंख्य नर-नारियोंने हड़ताल, अुपवास, सभाओं और जुलूसों द्वारा अपने अवतारस्वरूप महापुरुषके प्रति सहानुभूति और श्रद्धा प्रगट की और यह सिद्ध कर दिया कि भले ही लाखों मनुष्य पुराने विचारोंके कारण गांधीजीसे किसी प्रश्न पर जल्दी सहमत न हों, फिर भी वे अुन्हें भारतकी दिव्य विभूति, महानसे महान हस्ती और हिन्दुत्वके प्राण समझते हैं और अुन्हें किसी भी तरह खो देना सहन नहीं करेंगे। फल यह हुआ कि हिन्दू नेताओं और अंग्रेज शासकोंको गांधीजीकी मांग स्वीकार करनी पड़ी और अुनका अुपवास नाजुक स्थितिमें पहुंचकर समाप्त हुआ। देशमें अपूर्व अुत्साह फैल गया। लोगोंमें राजनीतिक आन्दोलनकी शिथिलतासे पैदा हुअी निराशा अेक बड़े सुधारकी संभावना खुल जानेसे आशामें बदल गअी। यह शुद्ध सत्याग्रहकी सफलताका चमत्कारी प्रमाण ही था कि केवल अेक आदमीके त्यागसे संसारके सबसे बड़े साम्राज्यको अपना बहुत बड़ा फैसला बदलना पड़ा, रूढ़िवादी हिन्दू समाज अछूतपनको धर्मके बजाय अधर्म माननेको तैयार हुआ और मेरे जैसे कट्टर राजनीति-प्रेमी सेवकोंको हरिजन-सेवा जैसे सामाजिक कार्यमें सारी शक्ति लगा देनेकी प्रेरणा हुअी। सत्याग्रहकी अनन्त शक्तिकी मुझे पहली बार प्रतीति हुअी।

१३४

बापू भी पूरे बनिये थे। अुन्होंने अिस परिस्थितिसे फायदा लेकर लाभ अुठाया और अिस अभूतपूर्व जाग्रतिका खूब सदुपयोग किया। अुन्होंने अेक तरफ़ अछूतपनके खिलाफ प्रचार करने और दलित जातियोंके अुत्थानके लिअे सतत कार्य करनेवाली अेक अखिल भारतीय संस्था स्थापित की और दूसरी ओर जेलमें बैठे बैठे अिन अुद्देश्योंकी सफलताके लिअे अुद्योग करनेकी सरकारसे सुविधाअें प्राप्त कीं, जिनमें 'हरिजन' पत्रोंका सम्पादन करना, हरिजन कार्यके लिअे अखबारोंमें बयान देना और बेरोकटोक अराजनीतिक पत्रव्यवहार व मुलाकातें करना तक शामिल था। अेक कैदीको और वह भी राजद्रोहीको अिस प्रकारकी आजादियां प्राप्त होना संसारके किसी भी राज्यके लिखित इतिहासमें बेमिसाल घटना थी। यह सत्याग्रहका ही करिश्मा था, बापूके अद्वितीय व्यक्तित्वका ही जादू था। मगर अिन गैरमामूली सहूलियतोंको बापूने जिस कठोर मर्यादाके साथ काममें लिया, अुससे अुनके आदर्श कैदी होनेका भी अुतना ही अुज्ज्वल प्रमाण मिलता है जितना अेक आदर्श अहिंसक वीर होनेका।

१३५

हरिजन-सेवक-संघ स्थापित हुआ। अुसके प्रधान मंत्री बनाये गये श्री अमृतलाल ठक्कर। वे अपनी दीर्घकालीन भीलसेवा, त्यागमय जिन्दगी और पीड़ितोंके प्रति अगाध सहानुभूति और बुजुर्गीके कारण सार्वजनिक हलकोंमें ठक्करबापाके नामसे मशहूर थे। बापामें कठोर अनुशासन, अनावारण परिश्रमशीलता और स्निग्ध खानगी व्यवहारका अजीब सामंजस्य था। अिन गुणोंने अनेक काम करनेवाले आदमियोंको अुनका भक्त बना दिया था। वे संघके प्राण थे। अुनसे अच्छा चुनाव अैसी संस्थाके संचालकके पदके लिअे और कोअी नहीं हो सकता था। अनुभवने भी सिद्ध कर दिया कि बापूको मनुष्यकी कितनी गजबकी पहचान थी!

१३६

केन्द्रीय कार्यालयका संगठन पूरा करके बापा प्रान्तीय शाखाअें स्थापित करनेके सिलसिलेमें अजमेर आये। मुझे मिलने बुलाया और राजपूतानेका प्रान्तीय मंत्रीपद स्वीकार करनेको कहा। मैं बापाके देशी राज्य प्रजा परिषदके जलसोंमें अेक दो बार दर्शन तो कर चुका था, परन्तु प्रत्यक्ष मुलाकात और विचार-विनिमयका यह पहला ही अवसर था। अिस बूढ़ेकी लगन, सचाअी, कार्यकुशलता, नाफगोअी और नम्रताका कुछ अैसा असर पड़ा कि अुनके प्रस्ताव पर अिनकार करनेका साहस नहीं हुआ। मगर मैं जिन दो आदमियोंकी अनुमति जरूरी समझता था वे दोनों जेलमें थे। बापाने बापू और जमनालालजीकी मंजूरी दिलानेका जिम्मा अपने अूपर ले लिया। बापूके अनशनके प्रभावमें मेरी सबसे बड़ी कठिनाअी पहले ही दूर हो चुकी थी, क्योंकि मुझे

मालूम हो गया था कि बापूके अिस अुपवासके कारणोमे अेक कारण सवर्णोके प्रति यह शिकायत भी थी कि पश्चिमी राजस्थानमें हरिजनोको पानीके लिअे घोर यातनाअें सहनी पडती है। अिस पापके प्रायश्चित्तकी भावना मेरे राजस्थानी हृदयको प्रेरणा दे रही थी। राजनीतिके झगडे-टटोसे अरुचि भी हो चली थी। प्यारे राजस्थानके निम्नतम और दलित वर्गोकी प्रत्यक्ष सेवाका अवसर सामने था। मैं बापाके आग्रहके आगे झुक गया, अिस नये भारको स्वीकार कर लिया और अिस नवीन क्षेत्रमें साहसी तबीयत आत्मविश्वासके साथ आगे बढी। लेकिन अिसमें भी यही चीज सबसे अधिक प्रेरक बन रही थी कि यह बापूका प्रिय कार्य है और मैं अुनके अुठाये गोवर्धन जैसे भारको हलका करनेमे अपनी तुच्छ शक्तिरूपी लकडीका टेका लगाकर अपना जन्म सफल कर रहा हू।

१३७

परन्तु हमारा प्रान्त राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक कट्टरताका गढ ठहरा। वहा जात्यभिमान नगा नाच करता था। जीवनके हर क्षेत्रमें अूच-नीचकी भावनाका बोलबाला था। शासन-सत्ताअें अनेक और निरकुश थी। वे प्रजामें जीवन और बल पैदा करनेवाली हर योजनाको सन्देहकी नजरसे देखती थी। सत्याग्रह आन्दोलन जारी था। अुसके कारण सरकारी हलकोमें काफी चौकन्नापन था। अग्रेज भी हमारे राजाओको बराबर पट्टी पढा रहे थे कि काग्रेसवाले हरिजन-सेवाकी आडमें राजनीतिक बदअमनी फैलाना चाहते है, अुनसे खबरदार रहना चाहिये। मेरी ख्याति प्रान्तमे अेक प्रमुख राजनीतिक पुरुषकी थी। अिधर सेवाकार्योंसे सहानुभूति रखनेवाले धनिक और शिक्षित समुदायोमें अजमेर आपसी लडाअी-झगडोके लिअे बदनाम था। गरज यह कि परिस्थिति बडी प्रतिकूल थी। परतु यहा भी बापूके अुपवास और व्यक्तित्वने, बापूके कार्यकी महानता और पवित्रताने और अुन्हीकी बताअी हुअी पद्धतिने मेरा मार्ग सरल कर दिया।

१३८

बात यह हुअी कि ज्यो ही ठक्करबापाने मुझे काम सौंपकर दिल्लीकी राह ली, मैंने 'राजा प्रजा सेवक समिति' का विधान निकाला। यह विधान बापूने १९२९ में तैयार किया था और अुसमें देशी राज्योके लिअे नम्रता, दक्षता और सचाअीकी त्रिविध नीति स्थिर की थी। मैंने अुसीके प्रकाशमें काम करना शुरू किया। प्रान्तीय सघके विधानमें केन्द्रीय सघसे अेक कदम आगे बढकर यह नियम बनाया गया कि अुसके वैतनिक कार्यकर्ता सत्याग्रहमें ही नही, राजनीति मात्रमें भाग न लें। बूदी, मेवाड और जयपुरके सिवा जहा मेरा दाखिला बन्द था, मैंने राजपूतानेकी प्राय सभी रियासतोका दौरा किया। जिन अिलाकोमें सार्वजनिक प्रवृत्तियोका अभाव था अुन पर खास ध्यान दिया गया। मैं जहा जाता वहाके दीवान और पुलिस अधिकारीको अपने आनेकी पहले सूचना देता। अुसीमें यह आश्वासन भी दे देता कि सब

अधिकारियोंकी सहानुभूतिके साथ ही काम करना चाहता है, जिन प्रवृत्तियों पर राज्यको आपत्ति होगी, वे वहां शुरू नहीं की जायेंगी और अगर उन्हें मेरा आना नापसन्द होगा तो मैं नहीं आऊंगा। विरोधी या सभाव्य विरोधीको पहलेसे निश्चिन्त कर देनेकी बापूकी जिस कार्यप्रणालीका यह असर हुआ कि अिक्कीस रियासतोंमें वासवाडेके सिवा और किसी रियासतने मेरे जाने पर आपत्ति नहीं की। अुस रियासतने भी कुछ समय बाद मुझे बुलावा भेज दिया। मैं जिस रियासतमें पहुंचता सबसे पहले दीवान और पुलिस तथा दूसरे महकमोंके अुच्चाधिकारियोंसे मिलकर अुनका शंका-समाधान करता। नतीजा यह हुआ कि हरिजन-कार्यमें किसी राज्यने बाधा नहीं पहुंचाअी और कुछ राज्योंने तो सहायता भी दी। सनातनियोंकी ओरसे भी कोअी खास बाधा नहीं हुअी, क्योंकि मैं जहां भी जाता, पहले सनातनी नेताओंसे अवश्य मिल लेता था और अुनके विरोधको कुछ न कुछ कम कर ही देता था। हर जगह कुछ सुधारक, दो चार हरिजन-सेवक और अेकाध कार्यकर्ता भी मिल जाते थे। अनपेक्षित स्थानोंमें जितनी सफलता मिलना गांधीजीके पुण्य-प्रतापका ही फल था।

१३९

सबसे अधिक आश्चर्य — सानदाश्चर्य — तो मुझे अुस दिन हुआ, जब कोअी विशेष दिवस मनानेके सिलसिलेमें अजमेरके नये बाजारकी चौपडमें अेक जुलूस निकला। यह स्थान कट्टरपंथियोंका गढ है। मगर देखता क्या हूं कि थोडी देरमें वकील, डॉक्टर और शिक्षित समुदायके लोग ही नहीं, व्यापारी और पुराने विचारके लोगोंकी भी भीड लग गअी। सबने अेक अेक झाड़ू-टोकरी अुठाअी और कतारें बनाकर हरिजन-सेवाके नारे लगाते और गीत गाते जुलूस बनाकर आगे बढे। जब यह पंक्तिबद्ध मानव-समूह रूढिवादी मुहल्लोंमें होकर गुजरा, तो लोगोंके अचम्भेका पार नहीं रहा और माताएं और बहनें छतों पर विस्मयपूर्ण दृष्टिसे देखने लगीं। हरिजनोंके मुहल्लों पहुंचकर जब 'अूंची जाति' वालोंको सफाअी करते देखा, तो हरिजन भी चकित हो गये! वस्तुतः अैसा लग रहा था कि लंगोटीवारी गांधीबाबाने भारतमें अेक सामाजिक क्रान्ति कर दी है।

१४०

सन् १९३४ में गांधीजीने हरिजन-कार्यके लिअे देश भरका दौरा किया। कार्यके केन्द्रित (intensive) और व्यापक (extensive) दोनों पहलुओं पर नजर रखने और दोनोंका साथ साथ विकास करते थे। वे दोनोंको अेक-दूसरेके लिअे पूरक और परस्पर अनिवार्य मानते थे। अुन्हें जिस महान यज्ञमें आहुति देनेवाले हजारों कार्यकर्ता, राष्ट्रव्यापी वातावरण और विपुल धनराशिकी जरूरत थी। जिसके लिअे मुल्क भरका पर्यटन आवश्यक था।

१४१

लेकिन वे जितने कुशल सगठनकर्ता थे, उतने ही वीर सुधारक भी थे। उन्होने अपना दौरा सबसे पहले कट्टरताके सबसे बडे गढ दक्षिणमें रखा। तामिलनाड, आन्ध्र और मलबारके सबसे मुश्किल किले सर्वप्रथम सर करनेका निश्चय किया। ये वे प्रदेश थे जहा मनुष्य अछूत ही नही, अगम्य और अदृश्य भी माना जाता था। पचम वर्णके इन्सानोका स्पर्श तो दूर रहा, उनकी परछाई पड जाना ही नही, उनके दर्शन हो जाना भी पाप समझा जाता था। सवर्णोको देखकर इन अभागे प्राणियोको पेडोकी या और किसी चीजकी आडमें छिप जाना पडता था। इस दुर्गम दुर्गको विजय करनेका साहस करना अेक अनुपम योद्धाका ही काम था।

१४२

मुझे भी इस प्रवासमें अेक मासके लगभग गाधीजीके साथ रहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होने पहला झटका तो शुरूमें ही दे दिया। श्री चद्रशकर शुक्ल मुझसे छोटे थे। उनकी तरफ इशारा करके बोले, "इनके हाथके नीचे काम करोगे? इस प्रश्न पर मुझे तो चोटसी लगी ही, जमनालालजी भी, जो दिल्लीके विडला भवनमे पास ही खडे थे, आश्चर्यसे देखने लगे। वे मेरे स्वभावसे वाकिफ थे। उन्हे शका थी कि मैं कही इनकार न कर दू। परन्तु मुझे बापूके साथ चौबीसो घटे रहकर उन्हे जानने और हरिजन आन्दोलनका निकटसे अध्ययन करनेका लोभ इतना प्रबल था कि निर्णय करनेमें अधिक देर नही लगी। और मैंने 'हा' कह दिया। मैंने देखा कि बापू हर विषयके निष्णातको दूसरी तरह 'छोटा' आदमी होने पर भी उसकी सामाजिक या बौद्धिक स्थितिकी परवाह न करके सामान्य मनुष्यसे अधिक महत्त्व देते थे। किसी घिसाओके लिअे, समता पैदा करनेके लिअे, वे भोजनालयमें पुरुषोसे स्त्रियोके अधीन, खादीकार्यमे विद्वानोसे अपढ निपुणोके मातहत, सफाओके काममें अमीरोसे गरीबोकी देखरेखमें और पुराने कार्यकर्ताओसे नये गाधीमार्गियोके हाथके नीचे काम लेते थे।

१४३

जाडेके दिन थे। बापूकी हरिजन-यात्रामें मैं भी दिल्लीसे उनके साथ था। दिल्लीकी सरदी, खूब गरम कपडे पहनकर चला। मुझे अनुभव नही था कि उत्तर और दक्षिणके प्रदेशोमें तापमानमें कितना गहरा अन्तर होता है। जब बेजवाडा पहुचे तो सुबहका वक्त था। मैं गरम कोट पहने ही उतरा। अपार भीड थी। अेक तो गरमी और दूसरे भीड — मैं पसीनेमें तर हो गया और भीडके बीच बुरी तरह फस गया। दम घुटने लगा और बेहोशी-सी आने लगी। यह नौबत कोअी अेक-दो मिनटमें ही आ गअी। इतनेमें बापूको, जो कुछ ही आगे चल रहे थे, खयाल आया और

मुडकर देखा। उन्होने मुझे तुरन्त स्वयंसेवकोके घेरेमें लेकर अपने साथ कर लिया। अगर उनमें जितनी तत्पर बुद्धि और साथियोकी चिन्ता न होती, तो मेरा तो उस दिन भगवान ही मालिक था। दोपहरको भोजनके समय उन्होंने मुझे बेजवाडेका ही १९२१ का एक किस्सा सुनाया कि किस तरह वे भीड़से बचकर सभासे निवास-स्थान पर पहुंच गये थे और भीडमें चलने और निकलनेके अुपाय बताये। साथ ही भूगोलके ज्ञानकी ओर ध्यान दिलाकर समझाया कि भिन्न भिन्न प्रदेशोंके जलवायुके अनुसार कपडे काममें लेनेकी सावधानी रखनी चाहिये।

१४४

अक्सर महापुरुषोंके लिअे कहा जाता है कि अुनमें दूरसे जितना आकर्षण होता है अुतना नजदीक जाने पर नही रहता। मगर गांधीजीमें मैंने अुलटी ही बात पाअी। मैंने देखा कि वे जो मानते थे वही कहते थे, जो कहते थे वही करते थे और जो करते थे वही दूसरोंसे करवाते थे। वे जितने गुथे हुअे कार्यक्रममें भी प्रार्थना, सैर, कताअी, मालिश, भोजन आदि सब काम समय पर कर लेते थे, सुखकी नींद सोते थे, अपना स्वास्थ्य अच्छा, स्वभाव कोमल और चेहरा प्रसन्न रख पाते थे। कितना विलक्षण था अुनका मनोबल!

१४५

कअी लोगोको डर था कि हिन्दू समाजकी कट्टरता गांधीजीके जिस क्रांतिकारी आन्दोलनको बरदाश्त नही कर सकेगी, अुनकी लोकप्रियता घट जायगी और अुनके राजनीतिक सामर्थ्यको गहरा धक्का लगेगा। जिन लोगोंके खयालमें ब्रिटिश सरकार अैसे ही परिणामोकी आशामें अुन्हे जेलमें असाधारण सुविधाअें देने, अुन्हे जेलसे छोडने और बाहर अबाधित रूपसे काम करने देनेको राजी हुअी थी। लेकिन मैंने आखो देखा कि जहा कहीं वे गये, अपार भीड़ने अुनका स्वागत किया, अुनकी हरिजनसेवार्थ फैली हुअी दानकी झोली भर दी और मिक्के-टुक्के लोगोको छोडकर सर्वसाधारणने अुनके कार्यका समर्थन किया। जिससे जहा हिन्दू जनताका विवेक प्रगट होता था, वहा गांधीजीकी विचार-दृढता भी नाबित होती थी। जिस दृढताका अेक प्रबल प्रमाण मैंने यह भी देखा कि रातको नौ बजेसे पाच बजेके बीच सोनेके समय रेलवे स्टेशनो पर जो भीड अुनके दर्शनोके लिअे आती थी, अुसे दर्शन देनेको वे कभी नही अुठते थे। अधश्रद्धा, दुराग्रह और अज्ञानवश लोग 'महात्मा गांधीकी जय' के नारे लगाते, बापूके डिब्बेको घेर लेते और कभी कभी खिडकिया तोड़ देनेकी नौबत भी ला देते, तो भी बापू टससे मस न होते। जिस हरकतको बापूजी अनुचित समझते, जिस प्रवृत्तिको दूषित मानते और जिस कृतिको ज्यादती खयाल करते, वह अपनोकी होती तो भी अुसके सामने वे हरगिज नहीं झुकते थे। जिस प्रकार वे अपनी भक्त

जनताको विवेक, अनुशासन और मर्यादा पालन करनेका पदार्थपाठ पढाते थे और अपनी लोकप्रियता घटनेकी जरा भी परवाह नही करते थे।

१४६

गाधीजीके अुत्कट राष्ट्रभाषा प्रेमका परिचय मुझे अिसी दौरेमें हुआ। स्वय बहुत अच्छी हिन्दी न जानते हुअे भी अुसका अधिकसे अधिक प्रयोग तो वे बोलचाल और पत्रव्यवहारमें सदा ही करते थे और हिन्दी-भाषी प्रान्तोमे हमेशा हिन्दीमें ही भाषण देते थे। परन्तु अहिन्दी-भाषी प्रान्तोमें भी आम तौर पर और दक्षिण भारतमें खास तौर पर मुख्यत हिन्दीमें ही बोलते थे। अुनके भाषणोके अेक अेक वाक्यका अनुवाद स्थानीय कार्यकर्ता तेलुगु या तामिलमें करते जाते थे। अग्रेजीमें बहुत ही कम जगह और बहुत आग्रह किये जाने पर ही और वह भी गौण रूपमें ही बोलते थे। अिस प्रकार हरिजन-कार्यके साथ साथ वे राष्ट्रभाषाका प्रचार भी प्रचड रूपमें कर लेते थे।

१४७

अिस यात्रामें अेक बडी खूबी बापूकी मैंने यह भी देखी कि वे जहा कही जाते वही विरोधियोके दृष्टिकोणको समझते और अुसमें जितना सत्य प्रतीत होता अुसे ग्रहण करते, अपनी बात दलीलोके साथ अुनके गले अुतारते, अुनके अूपर और धाडको सहन करते हुअे भी अपने व्यथित अनुयायियोके सार्वजनिक आवेशसे अुनकी रक्षा करनमें कभी नही चूकते थे। मैं देखता था कि कभी कभी सनातनियोकी ओरसे कोअी बहुत कडवी बात कही जाती, तो भी अुसे हम कर सह लेते थे, मगर जिसमें धमकीकी गध आती अुसके सामने हरगिज नहीं झुकते थे। नेतृत्वका यह गुण बापूमें असाधारण मात्रामें था।

१४८

लोगोकी श्रद्धा और भक्तिका सदुपयोग करना भी वे खूब जानते थे। भीडको दर्शन देनेके लिअे जब वे रेल्वे स्टेशनो पर खिडकीसे मुह निकालते तभी साथमें हरिजन-कार्यके लिअे चदा मागनेको हाथ भी फैला देते थे। लोगोको महात्माजीसे स्पर्शका लोभ होता ही था। बातकी बातमें रुपये-पैसे, नोटो और छोटे-मोटे गहनोंके रूपमें सैकडो रुपये जमा हो जाते। सभाओमें भाषण देनेके बाद भी वे बाधियोको हरिजन-कोषके लिअे भीखकी झोलिया लेकर अुपस्थित जनतामें बखेर देते थे। झोलिया अकसर भरकर लौटती थी और हजारो रुपये आनीसे अिकट्ठे हो जाते थे। बडे आदमियोके हस्ताक्षर (autograph) लेनेकी जो हवा आजकलके युवा-युवतियोमें चल पडी है, अुसका भी यह काठियावाडी दनियो अच्छा व्यापार कर लेता

था। प्रत्येक हस्ताक्षरकी अुन्होंने पाच रुपये फीस लगा रखी थी। अिसमें भी खासी रकम मिल जाती थी। कुछ बहनें भक्ति-भावसे बडे जेवर भी भेंट करने लाती थी। अुनके साथ व्यवहारमें अितनी विशेषता होती थी कि अुन्हें बापू अपने डब्बेमें या कमरेमें बुलाकर अुनकी भेंट स्वीकार करते और आशीर्वाद, विनोद और कामके दो शब्द कहकर प्रसन्न वदनसे विदा करते थे।

१४९

हिन्दीको बापू कितना महत्त्व देते थे, यह अेक छोटीसी घटनासे अिसी यात्रामें प्रगट हुआ। भाअी चद्रशकर शुक्ल यात्राकी साप्ताहिक चिट्ठी 'हरिजन' के लिअे अंग्रेजीमें लिखा करते थे। अुनका अनुवाद मैं 'हरिजनसेवक' के लिअे हिन्दीमें करके भेज देता था। अेक दिन बापूने जब मुझसे नियमानुसार वह पढ़वाकर सुना तो कहने लगे, 'तुम हिन्दीमें स्वतत्र साप्ताहिक चिट्ठी नहीं लिख सकते?' मैंने कहा, 'लिख तो सकता हू मगर शायद अितनी अच्छी न हो और मुख्य पत्र तो आपका हरिजन ही है। अुसका अनुवाद 'हरिजनसेवक' में चला ही जाता है।' 'नहीं, नहीं', वे तुरन्त बोले, 'यह खयाल तुम्हारा सही नहीं है। मै तो 'हरिजन' कर्तव्यवश ही निकालता हू, क्योंकि विदेशोमें, सरकारमें और देशमें भी अैसे लोग हैं जो हिन्दी नहीं जानते और जिन्हें मुझे अपनी बात बतानी है। अिसलिअे अंग्रेजीका आश्रय लेना पडता है। अन्यथा जनताके लिअे तो हिन्दुस्तानी माध्यम ही हो सकता है और जनता ही मेरे लिअे मुख्य है। मगर मेरी कठिनाअी यह है कि अंग्रेजी जाननेवाले तो महादेव और प्यारेलाल जैसे मेरे कुछ साथी हैं, जो मेरे विचारोको अच्छी तरह समझते हैं और व्यक्त कर सकते है। हिन्दीके अैसे लेखक साथियोकी मेरे पास कमी है।' अिसके बाद मैंने अेक या दो साप्ताहिक चिट्ठिया लिखी और बापूने अुन्हें पसन्द भी किया। परन्तु मेरा स्वास्थ्य बिगड जानेके कारण मुझे यात्राके बीचमें ही अजमेर लौट आना पडा और वह क्रम टूट गया।

१५०

अिस दौरेमें मेरा मुख्य काम बापूके हिन्दी पत्रव्यवहारको सभालना था। हरिजन आन्दोलनके कारण अुनकी हिन्दीकी डाक बहुत भारी हो गअी थी। बापू नये साथियोको अपनी ओरसे चिट्ठी लिखनेका अधिकार नहीं देते थे। अुनके पुराने साथियोको भी यह अधिकार सीमित ही होता था। जहा तक होता वे, छोटासा सही, जवाब खुद ही देनेकी कोशिश करते थे। स्त्रियो, बच्चो, हरिजनो, विद्यार्थियो, कार्यकर्ताओ, अल्पसख्यको और विदेशियोको बापू मुलाकात और पत्रव्यवहार दोनोमें तरजीह देते और अकसर स्वय ही अुनसे बातचीत करते और अपने ही हाथसे अुन्हें पत्र लिखते थे। मुझे वे दोपहरके भोजनके समय बुलाते और चिट्ठिया सुनकर अुनके जवाब

नोट करा देते थे। जिन पत्रोका उत्तर पूरा ही उन्हे अपनी कलमसे लिखना होता, उन्हे वे अपने पास रख लेते थे। मैं डाकसे पहले पहले खतोको तैयार करके उनसे हस्ताक्षर करा लेता और डाकमें डालनेको रख देता था। बापूके पत्रव्यवहारके सबधमें कुछ खास बातें उल्लेखनीय हैं।

अेक तो उनके पत्र सक्षिप्त होते थे। थोडेमें बहुतसा सार रख देनेकी जैसी उनकी लेखन शैलीकी विशेषता थी, वैसी ही पत्रव्यवहारकी भी थी। दूसरे, सफाअीका ध्यान बहुत रखा जाता था। काटफास उन्हे बिलकुल पसन्द नही थी। अिसमें वे विचारहीनता और लापरवाही पाते थे। तीसरे, अक्षरोकी सुन्दरता पर उनका बडा आग्रह रहता था और अपने अक्षरोकी आलोचना करनेका मौका वे कभी हाथसे नही जाने देते थे। चौथी और सबसे बडी बात थी मितव्ययकी। पोस्टकार्डसे काम चल सकता तो कभी लिफाफा अिस्तेमाल नही करते थे और लेखो और बयानोके मसौदोकी तरह पत्र लिखनेके लिअे भी आम तौर पर अखबारोके रैपर या रद्दी हुअे अेक तरफ लिखे हुअे खत काममें लिये जाते थे। जहा तक अुनका अपना सबध था, अुनके लिअे कोअी चीज गुप्त नही थी। परन्तु दूसरोका खयाल करके या लम्बा पत्र लिखना होता तभी वे लिफाफा काममें लेते थे। पत्रोको दुबारा पढे बिना नही भेजते थे। और कभी अितना समय न मिलता तो पत्रके कोने पर लिख देते थे कि दुबारा नही पढा। अितनी सावधानी वे अपनी तहरीरमें बरतते थे।

अेक दिन कहने लगे, 'मैं तुम्हे अुत्तरके मुद्दे नोट कराता हू। अिसमें समय बहुत लगता है और काम कम होता है। अब मेरे विचारो और रीतिनीतिसे तो काफी परिचय हो गया दीखता है। क्या मुद्दे सुनकर जवाब तैयार नही कर सकते? अिसमें समय बचेगा और काम अधिक होगा।' मुझे लगा कि बुड्ढा मेरी स्मरण और ग्रहण-शक्तिकी परीक्षा ले रहा है। मैंने कहा, 'मेरे पिताजी तो अैसा ही करते थे। मैं भी करके देख लू तो क्या हर्ज है?' अुस दिनसे वैसा ही होने लगा और जब तक मैं दौरेमें साथ रहा यही परिपाटी बनी रही। अिस प्रकार सहज ढगसे बापू अपने साथियोकी परीक्षा लेते और अुनकी शक्तिका विकास करते थे।

१५१

भाषाकी शुद्धि पर बापूका आग्रह मैंने अिसी पत्रव्यवहारमें देखा। आजकल पढे-लिखे लोगोमें आपसमें भी अग्रेजी लिखने-बोलनेकी कुटेव तो है ही, हिन्दी या देशी भाषाके साथ अग्रेजीका पुट लगानेका दोष भी बहुत है। बापूको अिन दोनो ही आदतोसे चिढ थी। अिस यात्राके पत्रव्यवहारमें कअी बार बापूको मैंने नौजवानोके गलत अग्रेजी लिखने या गगा-जमनी भाषा लिखने पर अुलहना देते देखा। कभी कभी तो वे अुनके अग्रेजीका गलत प्रयोग अुद्धृत करके अुनसे पूछते कि विदेशी भाषा और वह भी अैसी अशुद्ध लिखनेसे क्या लाभ? अुनकी अिस मीठी डाटके फलस्वरूप कअी लोगोके अुत्तर यै आते कि वे आयदा खालिस हिन्दीमें ही पत्रव्यवहार करेगे

और अंग्रेजी लिखना ही पडी तो शुद्ध लिखनेका ध्यान रखेंगे। बापू हर मौके पर अपने देशवासियोंको सही मार्गदर्शन करनेका ध्यान रखते थे।

१५२

जब बापू हरिजन-यात्रा पर रवाना हुये तो रास्तेमें नागपुरसे वर्धा तक डॉ० मुंजे भी साथ हो लिये। बातें शुरू हुईं। डॉक्टरका प्रिय विषय था हिन्दू-मुस्लिम संबंधों और बापूकी 'मुसलमानोंको खुश करनेकी नीति' की आलोचना। उनके कथनका सार यह था कि गांधीजीने मुसलमानोंके साथ बेजा रियायतें करके उनके दिमाग बिगाड दिये हैं। सबसे बडी शिकायत यह थी कि मुसलमान हिन्दू स्त्रियोंको भगा ले जाते हैं और उन पर बलात्कार भी करते हैं। बापूने कहा, 'मैं अपने ढंगसे मुसलमानोंसे निपटता हूं। सभीके अत्याचारोंका सामना करनेका मेरा अपना तरीका है। उसके अनुसार मैं प्रेमसे समझानेकी कोशिश करता हूं। अिससे काम नहीं चलता तो स्वयं कष्ट अुठाकर अन्यायका विरोध करता हूं। किसी बहन पर बलात्कार होता दिखाअी देगा, तो मैं अपनी आहुति देकर अुसे बचानेका प्रयत्न करूंगा। आपका रास्ता दूसरा है। अुसे गलत मानते हुये भी मैं आपके विश्वासकी सचाअी स्वीकार करनेको तैयार हूं। परन्तु आप मुझे मेरा रास्ता छोडकर चलनेको क्यों कहते हैं? मेरे अुपाय आपको ठीक नहीं लगते, तो अपने अुपायों पर आप अमल क्यों नहीं करते? अगर स्त्री-जातिके सतीत्वकी रक्षाके लिअे तलवार अुठाना जरूरी समझते हैं, तो अुसे म्यानमें क्यों रख छोडा है? मनुष्यकी सचाअीकी परीक्षा अुसके अपने सिद्धान्तके अनुसार व्यवहार करनेमें ही होती है।'

डॉक्टर साहब तो निरुत्तर हो गये, मगर मुझे अुनसे चार पांच वर्ष पूर्व बम्बअीके सरदार होटलमें हुअी बातचीत याद आ गअी। अुस समय मैं देशी राज्य प्रजा परिषदके अधिवेशनमें गया था। मुंजे साहबको यह आन्दोलन पसन्द नहीं था, क्योंकि अधिकांश रियासतें हिन्दू होनेके कारण हिन्दू राजाओंका ही विरोध अधिक होता था। अुन्होंने कहा, 'मुसलमान हमारी स्त्रियोंके साथ कितने अत्याचार करते हैं, अुनके खिलाफ लडना चाहिये।' जब मैंने अुन्हें बताया कि हिन्दू राजा और जागीरदारोंके यहां भी अिस प्रकारके जुल्म कम नहीं होते, तो कहने लगे, 'भाअी, आखिर तो वे हमारे धर्मभाअी ही हैं। हमें बरदाश्त करना चाहिये और प्रेमसे सुधारना चाहिये।' मैंने कहा, 'मुसलमान भी तो हमारे देशभाअी हैं। अुनके साथ भी अैसी ही सहिष्णुता और मुरव्वतसे क्यों न काम लिया जाय?' अस्तु, बापू-मुंजे संवादसे मैंने पहली बार यह समझा कि मतभिन्नता तो अलग अलग व्यक्तियोंमें स्वाभाविक है, परन्तु मनुष्यकी सीमानदारीकी कसौटी यह है कि वह अपने विश्वास, सिद्धान्त या विचारके अनुसार आचरण करता है या नहीं।

१५३

मैंने खादी तो १९२० की नागपुर काग्रेससे पहले ही पहनना शुरू कर दिया था। बापू वर्धा आ चुके थे और अुनके प्रथम सपर्कसे ही हम दपति खादीधारी बन गये थे। अहमदाबादकी काग्रेसके बाद १९२२ में मैं जब अपनी जन्मभूमि नीमके थाने पहुचा, तो मेरी माने मुझे नये भेसमें देखा। मेरा कुर्ता मोटी खादीका और धोती जोड लगी हुअी वैसी ही खादीकी देखकर अुसे दु ख हुआ। वह जानती थी कि मैं बढिया कपडे पहननेका शौकीन रहा हू। वह मानती थी कि मेरे खाने-पहननेके दिन है। अितने पर मैंने यह प्रस्ताव और रख दिया कि मा मुझे कातना सिखाये। 'हा, यही कसर रही थी। अब औरतोका काम भी सीख ले।' मैंने खर्चकी बचत, स्वदेशी और कअी बातें समझानेकी कोशिश की, लेकिन अुसको अेक भी नही जची। अन्तमें जब मैंने बताया कि गाधीजी गोभक्षक अग्रेजोको निकाल देना चाहते है, अिसके लिअे और विधवाओको पवित्र रहकर घर बैठे रोजी देनेके लिअे खादी पहनने और चरखा चलानेकी गाधीजीकी बात माननी जरूरी है, तो मेरी माको गाधीजीका यह दयाभाव सोलह आने गले अुतर गया और अुसने मुझे खुशी खुशी कातना सिखा दिया। अिस प्रकार बापूके अलग अलग काम कट्टरसे कट्टर लोगोको भी अपील करते थे।

१५४

शरीरको बापू brother ass (गधा भाअी) कहते थे। काम भी अुससे वैसे ही लेते थे। परन्तु अुनका खयाल था कि यह परमात्माका दिया हुआ सेवाका साधन है, अिसलिअे अुसका पूरा सदुपयोग करना हो तो अुचित पथ्य, नियम, व्यायाम, सफाअी और आरामसे अुसको सभालकर रखना चाहिये। तदनुसार वे स्वस्थ और दीर्घ जीवनके लिअे स्वय तो सम्यक् आहार-विहार रखते ही थे, अपने साथियोसे भी अैसे ही आग्रहकी अपेक्षा रखते थे और अुनकी तदुरुस्तीके बारेमें अितनी चिन्ता रखते थे कि अुसकी खातिर और सब काम खुद भी छोड देते थे और अुनसे भी छुडवा देते थे। मगर बीमारो और कमजोरोसे अुनकी स्थितिके अनुकूल काम करानेका भी अुतना ही ध्यान रखते थे।

१५५

राजपूताना हरिजन-सेवक-सघके अेक प्रमुख नेताने चन्दा लिख तो दिया, मगर सघको दिया नही। कअी तकाजे किये गये, मगर बेकार साबित हुअे। मैंने बापूसे पूछा, क्या किया जाय? 'किया क्या जाय?', वे तुरन्त बोले, 'अुनसे कह दो कि या तो तीन दिनमें वादा पूरें या बिस्तीफा दे दें।' मैंने वैसा ही किया और चदा जमा हो गया! बापूने जरा भी परवाह नही की कि नेताकी नाराजगीसे काममें हानि

होगी। वे स्वय वचन पालन करनेमें जितने दृढ थे, उतने ही अपनोंसे पालन करानेमें भी मजबूत थे।

१५६

हरिजन-यात्रामें मद्रास पहुंचे तो वहांके मारवाडियों और गुजरातियोंने बापूको अभिनदन-पत्र और हरिजन-कार्यके लिअे थैलिया अर्पण की। अभिनदन-पत्रोंमें बापूके प्रति गहरी श्रद्धा और अुनकी सेवाओंकी अत्यंत प्रशसा थी और राजस्थान और गुजरात काठियावाड़के गौरव पर जोर दिया गया था। अुत्तरमें बापूने कहा, "मानपत्रोंमें तारीफोंके पुल नहीं बाधने चाहिये। जिनका सम्मान किया जाय अुनकी सेवाओंका अुल्लेख करके अुसका अनुकरण करनेका मिरादा जरूर जाहिर किया जा सकता है, और वह स्वाभाविक भी है और अुचित भी है। परतु जिस संस्था या समाजकी ओरसे मानपत्र दिया जाय, मुख्यत. अुसकी आवश्यकताओं, समस्याओं और सुधार-योजनाओं पर प्रकाश डालना चाहिये, ताकि अुसके अुत्तरमें मेहमान अपने विचार और सुझाव दे सकें। साथ ही जो जातिया दूसरे प्रान्तोंमें जाकर धन कमाती हैं अुन्हें अपने मूल प्रान्तोंकी सेवाका खयाल गौण और वर्तमान क्षेत्रोंकी भलाअीका ध्यान अधिक होना चाहिये। आप लोग जहा रहते हैं वहांके लोगोंमें आपको घुलमिल जाना चाहिये और अुन्हींके कल्याणके लिअे अधिक धन और समय लगाना चाहिये।" मुझे पहली बार आदर्श मानपत्रकी कल्पना हुअी और प्रचलित प्रथासे भिन्न यह विचार मिला कि प्रवासी राजस्थानियोंको मुख्यत अपने नये व्यवसाय-क्षेत्रोंके प्रति वफादार होना चाहिये। यह विचार सचमुच प्रान्तीय रागद्वेष कम करने और राष्ट्रमें अेकता और मेल बढ़ाने तथा शोषण घटानेका नया मार्ग सुझानेवाला था।

१५७

जिस यात्राके अनुभवों और गांधीजीके दिन-रातके सहवासने अनुप्राणित होकर जब मैं अजमेर लौटा तो सालभरमें ही राजस्थानमें हरिजन सेवक समितियोंका जाल बिछ गया। अवश्य ही जिसमें साथियोंका बहुत बडा हाथ था, फिर भी जिस द्रुत गतिसे पाठशालाओं और अुनके विद्यार्थियोंकी सख्या बढ़ी, जिस तादादमें हरिजनोंने शराब, मुर्दार मास और दूसरी बुरी आदतें छोड़ीं और अेक सौसे अधिक सेवक निकल आये, जिन सारी सफलताओं का असली रहस्य बापूके महान व्यक्तित्व और अुनके महान कार्यमें ही छिपा हुआ था। जिन्हीं दोनों प्रेरणाओंसे ये कार्यकर्ता जब अजमेरके पास अेक गावमें खोले गये सेवा-आश्रममें तालीम लेने आये, तो अुनकी कडी शर्तें खुशी-खुशी पालन करने लगे। यह प्रशिक्षण काल छह मासका था। अुनके लिअे खादी पहनना, कताअी-पिंजाअी सीखना, शिक्षा-पद्धति और गांधी साहित्यका अध्ययन करना अनिवार्य था। वे मलमूत्रकी सफाअी करते, चक्की चलाते,

गावके गदे मुहल्लोमे झाड़ू लगाते, मिट्टी खोदते, भोजन बनाते, पानी खीचते और अपना व आश्रमका सब काम अपने हाथोसे करते थे। यह सब वे अेक अत्यत पिछडे हुअे प्रान्तके निवासी होकर भी खुशीसे न करते, यदि अुनमें अेक प्रकारकी मिशनरी भावना काम नही कर रही होती। अिसी भावनाके कारण सारे आग्रहो और पूर्वग्रहोकी अुपेक्षा करके वे राजनीतिक आकर्षणोसे अलग रहे, छूत-अछूत सभी बिना किसी भेदभावके खानपान और रहन-सहनमें अेक साथ रहे और जलवायु, रुपये-पैसे और कौटुम्बिक व सामाजिक विरोध सबकी कठिनाअीकी अवहेलना करके भी अपने कर्तव्य-पालनकी योग्यता प्राप्त करनेमें लगे रहे। लेकिन अिस सारी तपस्याकी तहमें वही बापूकी प्रेरणा विद्यमान थी। वह प्रेरणा अितनी बलवान थी कि आज भी अुन कार्यकर्ताओमें से बहुत अधिक लोग सार्वजनिक क्षेत्रमें कही न कही सेवा कर रहे है और कुछ तो राज्योके मत्री तक रहे और है।

१५८

अजमेरके हरिजन-कार्यमें कुछ क्रान्तिकारी युवक भी शरीक हुअे। स्वय अिस दलमें रहकर मैं देख चुका था कि अिन लोगोका जीवन कितना शुद्ध और अुच्च था, अुनका कार्यक्रम कितना साहसपूर्ण था और अुनमें कर्तव्यनिष्ठा कितनी जबर्दस्त थी। मुझे मालूम था कि वे पूजीपति या सामन्तवादी व्यक्तियोके यहासे डाके डालकर रुपया ले जा सकते है, मगर मुझे अुनसे चोरी जैसे कायर कृत्यकी स्वप्नमे भी आशा नही थी। मैंने अुन पर विश्वास किया, परतु पता नही अुन पर साम्यवाद या विप्लव-वादके किस विपर्यासका भूत सवार हुआ कि अुन्होने हरिजन-सेवक-सघको अेक पूजी-वादी सस्था समझ लिया, विश्वाससे मिली हुअी सुविधाओका दुरुपयोग करके वे रातको चुपकेसे सघके दफ्तरमें घुस गये और मेजका ताला तोडकर लगभग ५०० रुपया चुरा ले गये। अिन नकली अिन्कलाब-पसन्दोकी अिस कमीनी हरकतने मेरे दिल पर बडी बुरी प्रतिक्रिया पैदा की। अुस समय तो मुझे सन्देह ही हुआ, हालाकि वह सन्देह बहुत प्रबल था। बादमें अुसी दलके लोगोसे पता चला कि अिसी रुपयेसे वह पिस्तौल खरीदा गया, जिसके शिकार अजमेरकी खुफिया पुलिसके डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट श्री डोगरा हुअे।

खैर, मैंने पुलिसको तो साथियोके आग्रहके बावजूद अिस चोरीकी सूचना नही दी और बापूसे सलाह पूछी। अुनका स्पष्ट आदेश आया कि हमारी ओरसे पुलिसको खबर न दी जाय, अुसे स्वतत्र रूपसे पता चल जाय और वह हमसे पूछताछ करे तो जो बात हमें जैसी और जितनी मालूम हो अुसे कह दे। अपनी ओरसे जिन पर शक हो अुनसे दर्याफ्त करे, वे अपराध स्वीकार कर लें और रुपया लौटाकर भविष्यमे अैसा कुकर्म न करनेका वचन दे दें तो अुन्हे क्षमा कर दिया जाय और वे अैसा न करे तो अिस हानिको सहन कर लें। अन्तमें यह आखिरी बात ही हुअी। अैसी थी बापूकी क्षमाशीलता और अुदारता, और अैसा था अुनका अपराध-चिकित्साका

मनोवैज्ञानिक मार्ग, जिसके अनुसार मनुष्य दण्ड देकर नही, परन्तु प्रेमसे ही सुधर सकता है।

१५९

हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें बापू अजमेर भी आये थे। अुन्हींके साथ लगी हुअी स्वामी लालनाथकी मडली भी आ पहुची। यह मडली बापूके सनातनी विरोधियोकी थी और जहा बापू जाते वही अुनका पीछा करती, अुन्हे काले झडे दिखाती और अुनके अस्पृश्यता-निवारण कार्यके विरुद्ध प्रचार करती। बापू अपने विरोधियोंके लिअे अुतनी ही आजादीके पक्षमें थे, जितनी वे अपने लिअे चाहते थे। अिसलिअे हर जगह मडलीकी रक्षाका ध्यान रखते और अपने साथियो और जनताको अुनके प्रति सहनशील होनेका अुपदेश देते थे। दुर्भाग्यवश अनेक सावधानिया रखते हुअे भी अिन लोगोंके साथ अजमेरमें मारपीट हो गअी। अिस पर गाधीजीको गहरा आघात पहुचा। अुन्होने स्वामी लालनाथकी मरहमपट्टी करवाअी और अुन्हे मच पर बुलाकर अुनके घावको दिखाकर जनताको शर्मिन्दा किया और अपने विरोधी विचार प्रगट करनेका स्वामी लालनाथको अवसर दिया। कराची पहुचकर बापूने अिस घटनाके प्रायश्चित्त-स्वरूप ७ दिनके अुपवासकी घोषणा की। जब मैंने अखबारमें यह खबर पढी तो यह हाल हो गया कि काटो तो खून नही। अितनी आत्मग्लानि हुअी। वह तब मिटी जब कुछ दिन बाद मारपीट करानेवालोमें से अेकने बताया कि वह योजनापूर्ण थी और अिसलिअे कराअी गअी थी कि स्थानीय सामाजिक क्षेत्रके दो विरोधी पक्षोमें से अेकको, जो हरिजन सेवामें हमारे साथ था, बदनाम किया जाय! अुपवासके बाद जब मैंने यह रहस्योद्घाटन वर्धा जाकर बापू पर किया, तो वे अेक दीर्घ नि श्वासके साथ केवल साश्चर्य दु ख प्रगट करके रह गये। शायद अुनका आशय यह था कि हिंसक वृत्ति मनुष्यसे क्या नही करा सकती?

१६०

कुछ भाअियोने बापूसे शिकायत की थी कि राजपूतानामें हरिजन सेवाके वृत्तान्त बहुत बढा-चढाकर प्रकाशित किये जाते है और दरअसल अितनी शाखाअें नही है जितना अखबारोमें प्रचार किया जाता है। अजमेर पहुचते ही बापूने मुझसे अिस शिकायतका जिक्र किया। ठक्करबापा भी मौजूद थे। मैंने कहा, 'बापू, हाथ कगनको आरसी क्या? वैसे तो बापा अिस प्रान्तके सगठन, व्यवस्था और कार्यसे परिचित है। अिनसे मालूम कर सकते है। परतु अिसकी भी जरूरत नही। आज ही आपको खुद असलियतका पता चल जायगा।' तीसरे पहर राजस्थानके कोने कोनेसे समितियोके मत्री और कार्यकर्ता अपनी छोटी छोटी थैलिया बापूके चरणोमें रखने लगे और बापा अुनके नाम सुनाने लगे, तो मैंने बापूके चेहरेसे देख लिया कि अुनका न सिर्फ शका-

समाधान हो गया है, बल्कि राजपूतानेके कामसे भी सतोष है। यह समारोह समाप्त होने पर अुन्होने मुझ पर शब्दोमें भी अपना समाधान और सतोष प्रकट कर दिया। साथ ही सफलतासे फूलनेके बजाय नम्र बननेका अुपदेश भी दिया। अिस प्रकार बापू अपने साथियोके विरुद्ध लगाये जानेवाले आरोपोके प्रति जितने जागरूक रहते थे, अुनकी सफाअी पर अुतने ही प्रसन्न भी होते थे और अुन्हे प्रोत्साहन देनेके साथ साथ अुनमे अभिमान भी पैदा न होने देनेकी सावधानी रखते थे।

१६१

असहयोग कालमे गाधीजी और दूसरे बडे राष्ट्रीय नेता अजमेर आते तो आम तौर पर स्व० गौरीशकरजी भार्गवके यहा ठहरा करते थे। हरिजन-यात्रामे जब बापू अजमेर आये तो स्वागत-समितिने अुनके ठहरनेका अिन्तजाम अपनी तरफसे दूसरी जगह किया। भार्गवजीने बापूको अुलहना दिया और कहा कि आपको कमसे कम मेरे घर पर अेक बार चलना तो जरूर चाहिये। बापूको अिस पर आपत्ति नही थी, परन्तु अजमेरके कुछ अैसे कार्यकर्ताओने, जिनकी बातका बापूजी पर कुछ असर माना जाता था, भार्गवजीके व्यक्तिगत जीवन-सबधी कुछ शिकायतोके कारण बापूका अुनके यहा जाना नामुनासिब समझा। बापूने कहा, 'शिकायतें सही हो तो नही जाअूगा।' मगर शिकायत करना जितना आसान होता है अुतना अुसे साबित करना नही होता है। अन्तमे बापूने दृढतापूर्वक कहा कि, 'सुनी-सुनाअी बातो पर मै किसीको दोषी नही मान सकता। अब गौरीशकरके यहा जाना मेरा धर्म है।' तदनुसार वहा गये और अिस प्रकार न्यायके मूल सिद्धान्तोका कड़ाअीसे पालन करके वे भार्गव परिवार पर अपनी अमिट छाप छोड गये।

१६२

अुसी समय प० अर्जुनलालजी सेठीका पत्र मेरे पास आया कि अुनकी हार्दिक अिच्छा है कि बापू अुनके घर पर पधारे। पत्र बडा विनम्र और भावनापूर्ण था। अिस मामलेमें भी अुपरोक्त कार्यकर्ताओने अडगा लगाना चाहा। अुनकी दलील यह थी कि गाधीजीके वहा जानेसे सेठीजीकी प्रतिष्ठा बढेगी और वे अुसका दुरुपयोग करेगे। बापूको यह भी कहा गया कि सेठीजी बापूके विरोधी है और अुनके खिलाफ प्रचार करते रहते है। बापूने कहा, 'मै जानता हू वे मेरे विरुद्ध है। परतु यह कोअी कारण नही कि अुनके विनयपूर्ण निमत्रणको स्वीकार न करू।' मुझसे पूछा, 'तुम्हारी क्या राय है?' मैंने कहा, 'वे देशके अितने पुराने सेवक है कि अुनकी प्रतिष्ठा बढनेका प्रश्न अुठाना मुझे अशोभनीय लगता है। आपकी विचारधाराके अनुसार तो सेठीजीका विरोधी होना आपके लिअे अुनके घर जानेके विपक्षके बजाय पक्षमें अेक दलील है।

मेरे खयालसे असका अच्छा ही असर होगा।' हुआ भी वही। बापू गये तो सेठीजीने बापूके चरण छूकर असकी आरती असारी, बापूको हरिजन-सेवाके लिअे अच्छीनी रकम मिली और काग्रेसके कार्यके प्रति अुदासीनता छोडकर सेठीजी अुसमें अमली दिलचस्पी लेने लगे! बापू अपने विरोधियोंके प्रति अुदारताका व्यवहार करके अुनके भी हृदय जीत लेते थे।

१६३

हमने अजमेरके नजदीक अेक गावमें जो आश्रम खोला था, अुसके बारेमें बापूने विस्तारसे पूछताछ की। जब मैंने अुनसे कहा कि हम फल और सागभाजी अजमेरसे मगाते हैं तो अुन्हें आश्चर्य हुआ। वे कहने लगे, 'मेरे खयालसे तो फल भी तुम्हें वही जो मिलें लेने चाहिये। सागभाजी तो वहींकी खानी चाहिये। तुम्हारी जरूरतकी चीज वहा पैदा न होती हो तो गाववालोंसे पैदा कराना शुरू करो या स्वय सागभाजी पैदा करो।' नतीजा यह हुआ कि हमने अपने यहा कुछ सागभाजीकी खेती शुरू कर दी, जिनमें हमारा खाद भी काम आने लगा। बापू कार्यकर्ताओंको खाने-पहननेके बारेमें स्वावलम्बनका पाठ हमेशा पढाते रहते थे।

१६४

सन् १९३५ की बात होगी। हरिजन आश्रम, दिल्लीके नये मकानमें हरिजन-सेवक-संघके केन्द्रीय बोर्डकी बैठक हो रही थी। मैं भी अुसके सदस्यके नाते गया था। बापू तो थे ही। कार्रवाअी शुरू होनेसे पहले वेणाबहन चर्चा चल रही थी। किसी बात पर श्रीमती रामेश्वरी नेहरू, जो बोर्डकी अेकमात्र महिला सदस्य और अुपाध्यक्ष थी, कह रही थी और काफी आत्मसतोषके साथ कह रही थी कि मुझे अपने घरवालोंकी तरफसे अिस काममें कभी कोअी रुकावट नहीं होती। बापूजीको और क्या चाहिये था? अुन्हें तो अपने साथियोंकी सुखवृद्धि, प्रोत्साहन और आत्मोन्नतिका मौका हाथ लगना चाहिये। कहने लगे, "हा, भाअी, तुम सचमुच भाग्यशाली हो जो पिता भी अैसे ही अुदार मिले और पतिदेव भी अैसे ही फर्मावदार जो तुम्हें अितनी स्वतंत्रता देते हैं—अच्छे कामोंमें।' ये पिछले तीन शब्द अुन्होंने अेक क्षण ठहरकर कहे। रामेश्वरी बहनका चेहरा शर्मभरी खुशीसे लाल हो गया, क्योंकि अिसमें अुनके साथ साथ अुनके प्रियजनोंकी भी तारीफ थी। दूसरे लोगोंको भी यह सुखद विनोद भाया दिखाअी दिया। मुझे अिसमें अेक प्रोत्साहक किन्तु सावधान गुरुकी झलक दिखाअी दी।

१६५

अिसी अवसर पर शायद किसीने घनश्यामदासजी बिडलाको गुदगुदानेके लिअे कहा, "आखिर आपने बापूको पकड लिया।" बिडलाजी तो अितना ही कह पाये थ कि "अिस बैठकमें बापूका आना जरूरी था।" मगर बापूजीको मजाकका अवसर मिल गया, "मैंने घनश्यामदासमें विवाह जो कर लिया है। यह बुलाये और मैं न आअू, यह हो सकता है?" बेचारे बिडलाजी तो लज्जाके मारे झुक गये, परंतु औरोंने अिस स्नेह-प्रदर्शनका काफी आनंद लिया। मैंने यह शिक्षा ग्रहण की कि बापूमें जो नम्रता और अनुशासन-प्रेम है, वह अनुकरणीय है और जब हम अपनेसे छोटेको भी किसी पद पर बिठाते हैं तो अुस काममें अुसकी आज्ञा हमें माननी ही चाहिये।

१६६

शायद १९२८की बात है जब मैं पहले-पहल बापूके पास साबरमती आश्रममें महीने भर रहा। मेरे पूर्व जीवनकी पूछताछके सिलसिलेमें राजस्थान-सेवा-संघका जिक्र आया। मैंने बताया कि संघके कार्यकर्ता १५ रुपये मासिक प्रतिव्यक्तिसे अधिक नहीं लेते थे और फिर भी जो बच जाता वह संस्थाको वापस कर देते थे। अिस संबंधमें जब मैंने अपना भी अनुभव सुनाया और संस्थाके अध्यक्षके ७–८ रु० मासिकसे अधिक न लेनेकी बात कही, तो कातते कातते बडी अुत्सुकतासे बापू मेरी तरफ देखने लगे और कहने लगे, 'यह बचा हुआ रुपया लौटानेकी बात अनोखी है और ग्राह्य है।' नअी और अच्छी बात छोटोंसे भी लेनेकी बापूकी विलक्षण वृत्ति थी।

१६७

२६ और २७ जून १९३६ को राजपूतानेके हरिजन-सेवकोंका अेक सम्मेलन अजमेरके पास हमारे नारेली आश्रममें हुआ था। बापूने हरिजनोंकी भलाअीका विचार करनेवाले अिस छोटेसे आयोजनको भी महत्त्व दिया और मेरी मांग पहुंचते ही अुसे यह सन्देश भेजा

"अिस समय हिन्दू धर्मकी परीक्षा हो रही है। वे ही सच्चे सेवक हो सकते हैं, जिनमें धर्मके प्रति श्रद्धा है, हरिजनोंके प्रति प्रेम है और जो अपनेको हरिजन सेवाके लिअे समर्पण करनेके लिअे तैयार है।"

अिस छोटेसे किन्तु सारगर्भित सन्देशने सम्मेलनको जो प्रेरणा दी, वह दो दिनकी सारी कार्रवाअीने भी नहीं दी।

१६८

दिल्लीमें बापूके मार्गदर्शनमें शहरसे बाहर अेक गोशाला चल रही थी। अुसीके पास अेक विद्याश्रम नामक बालशिक्षा संस्था भी थी। अुसे देखा तो वहाकी पद्धति बहुत पसन्द आअी और मैंने चि० प्रताप और अेक दो साथियोके बच्चोको वहा रख दिया। थोडे ही समय बाद बापू अुस संस्थाको देखने गये। संचालकोने बापूके और मेरे सबधोका खयाल करके चि० प्रताप वगैराको खास तौर पर बताया। 'क्या रामनारायणके बच्चे भी यहा है?' अुन्होने आश्चर्य और अप्रसन्नतासे कहा, 'तब तो वह योग्य पिता नही है। अुस जैसे सेवक और शिक्षकको तो अपनी सन्तानको अपने ही पास रख कर तालीम देना चाहिये।' जब मुझे बापूकी यह राय मालूम हुअी तो मैंने बच्चोको तुरत वापस बुला लिया, परतु मनमें शका ही रही। जब बापू अजमेर आये तो मैंने अुनसे अपनी शका कही। वे बोले, 'आम तौर पर मातापितासे जो प्यार बच्चोको मिलता है, जितनी खबरदारी अुनकी वे करते है और जैसी स्वाभाविक शिक्षा वे देते है, वैसी पराये लोगोंके हाथो नही मिल सकती। कार्यकर्ताओके लिअे तो यह कर्तव्य और भी महत्त्वपूर्ण है। अपने बच्चोको शिक्षा देनेमें अुनके धीरजकी, अुनकी योग्यताकी भी परीक्षा अधिक होती है। और सबसे बडी बात यह है कि मातापिताकी छत्रछायासे अलग रहकर बच्चे अक्सर बिगड जाते है।' बापूने खर्चकी बात नही कही, मगर मुझे विश्वास है कि यह बात अुनके ध्यानमें जरूर रही होगी।

१६९

बापूके सात दिनके अुपवासके बाद जब मै अुनके पास सफाअी देने पहुचा, तो वे वर्धाके महिला-आश्रममें आराम ले रहे थे। जमनालालजी मुझे अुनके पास ले गये थे। वे मुझे गाधी-सेवा-सघके कामके लिअे अपने निकट रखना चाहते थे। मगर हरिजन-सेवक-सघसे मुझे हटानेके लिअे अुन्हे बापूसे मजूरी लेनी आवश्यक मालूम होती थी। अुन्होने जाते ही अुलहनेके लहजेमें बापूसे कहा, 'आप हमारे प्रथम श्रेणीके कार्यकर्ताओको तो हरिजन-सेवाके काममें लगाये चले जा रहे हैं। अब हम गाधी-सेवा-सघके लिअे अच्छे सेवक कहासे लायेंगे?' बापू अिस सकेतको फौरन ताड गये और बोले, 'काम तो दोनो अेक ही है और हमारे ही है। फिर रामनारायण जब अेक काममें लगे हुअे हैं और अुसे अच्छा कर रहे है तो अुन्हे अुससे अनिवार्य आवश्यकताके बिना हटानेसे वह काम बिगडेगा। किसीको अनिवार्य समझना अुसमें अभिमान और हममें परावलम्बन अुत्पन्न करता है। यह दोनोंके लिअे पतनकारी होता है।' जमनालालजीने फिर कुछ नही कहा। मैंने देखा बापू किस तरह अेक ही निर्णयसे कअी समस्याअें अेक साथ हल करते थे—अेक ही अुपदेशसे कअी शकाओका समाधान कर देते थे।

१७०

अिसी अवसर पर श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने बापूको अुपालभ दिया कि आप अमर शहीद गणेशशकरजी विद्यार्थीके स्मारकके लिअे कुछ नही कर रहे है। "तुम्हारी शिकायत वाजिब है। मगर मै तो अपने सभी काम अलग अलग आदमियोके मारफ़त कराता हू। यह काम मैने . को सौपा था। परतु अग्रेजीमे कहू तो His is a case of arrested growth (अुनको अनुकूल काम न मिलनेके कारण अुनकी शक्तियोका विकास होते होते रुक गया है।) विद्यार्थी-स्मारकका काम भी शायद वे अिसीलिअे नही कर पाये है।" श्री का चरित्र-चित्रण अुन्होने अेक ही वाक्यमें जिस खूबीसे कर दिया, वह अुनके मानव अध्ययनकी अेक अनूठी विशेषता थी।

१७१

शायद मार्च १९३३ की बात है। मै बापूसे यरवडा मदिरमें मिलने गया। मैंने सोचा, 'मदिर जा रहा हू। वहा अपने अिष्ट देवके दर्शन होगे। कोअी भेंट तो ले ही जाना चाहिये।' मेरे भावुक स्वभावको यही अुत्तम प्रतीत हुआ कि राजस्थानके हरिजनोकी स्थितिका चित्र लिखकर बापूके नजर करू। मैंने जाते ही अेक कागज अुनके चरणोमें रख दिया, जिसका शीर्षक था 'राजस्थानका हरिजन' और मजमून यह था

"पता नही मनुष्य किस तरह अितना विवेकभ्रष्ट और हृदयहीन बन सका होगा और हिन्दुत्व जैसे दयाप्रधान धर्ममें यह अमानुषिकता क्योकर घुसी होगी कि अिन्सानको अिन्सान हैवानसे भी बदतर समझने लगा। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का नित्यपाठ करनेवाले लोग अपने ही समाजके अेक अगको अछूत और अदृश्य तक मानने लगे, अुनसे गदेसे गदे काम लेने लगे, अुन्हे कमसे कम और खरावसे खराब अन्नवस्त्र, जूठन और अुतारन देने लगे और अूपरसे तिरस्कार व ताडनाका दण्ड भुगताने लगे। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक अुन्नतिके सारे द्वार अिन अभागोके लिअे बन्द कर दिये गये। अुनको छूना पाप, देखना पाप, अुनकी छाया पडना पाप गिना जाने लगा — यहा तक कि देवदर्शन भी अुनके लिअे निषिद्ध हो गया। अैसी दशामें बेचारे हरिजन क्या तो पढें-लिखें, क्या व्यवसाय-अुद्योग करे, क्या समाज और देशकी अुन्नतिमें भाग लें और क्या अीश्वरदत्त शक्तियोका विकास करे? पानीके लिअे तरसते रहे, मगर कुअें-बावडी पर पैर नही रख सकते। शिक्षाके लिअे अुत्सुक है, पर स्कूलमें भरती नही हो सकते। भूख लगी है, मगर पैसा देकर भी होटल-ढाबेमें खा नही सकते। हृदय हरिदर्शनके लिअे आतुर है, परन्तु मदिरकी देहलीको लाघ नही सकते। चमडा ये कमाते, कूडा-करकट ये अुठाते, टट्टी-पेशाब ये साफ करते — गरज यह कि वे सब काम करते है जो माता करती है और जिनके बिना समाज दो दिन जिन्दा नही

रह सकता। मगर हिन्दू समाज है कि जातअभिमानमें अंधा होकर जितनी बहुमूल्य सेवाओंका घृणा, जुल्म और शोषणसे अच्छे किसी रूपमें बदला देना ही नहीं जानता। अजमेरके मलूसर मुहल्लेमें मैला स्टेशन देखा और मनुष्योंको मलमूत्रके कुंडमें काम करते पाया तो दिल ग्लानिके मारे भर गया। जब मालवेका हाल सुना कि वहां सवर्ण लोग हरिजन स्त्रियोंके सिरों पर मैलेके घड़े फोड़कर और उनके साथ कुछ ऐसे कुत्सित व्यवहार करके आनन्द मनाते हैं तो ऐसा लगा कि मानवता हिन्दू समाजको छोड़कर रसातल चली गयी है और दण्डस्वरूप उसके गलेमें गुलामीका तौक डाल गयी है। हरिजनोंकी दुर्दशाका यहीं समाप्त नहीं होती। सवर्ण गेहूं और शक्कर खाते हैं तो हरिजनोंको जौ, बाजरे और गुड़से ही सौहर और ब्याह करने चाहिये। 'ऊंची जाति' के मंदिर पर सोनेका कलश चढ़े तो 'नीचों' के भगवानका घर बिना कलशके ही रहना चाहिये। हरिजन अपने दूल्हेको घोड़े पर चढ़ा कर ले जायगा तो सवर्ण बरातके लिये हर जगह हाथी कहांसे लायेगा? साइकिल पर बैठनेकी मनाही' द्विजके सामने मजाल है जो अछूत खाट पर बैठ जाय, नैं लगाकर हुक्का पी ले या स्त्री जूता पहनकर निकल जाय! यह अभिशाप सवर्णोंमें भी आपसमें मौजूद है। किसी राजपूत गावमें बनियेको और शूद्रोंको राजपूतोंके सामने किसी तरह अपमानित होना पड़ता है। बदलेमें ठाकुर साहबको सेठजीके आगे कमर बाके सलाम झुकाते हर किसी मिलके दरवाजे पर देखा जा सकता है। झालाकाड राज्यमें ऐक लखपती चमारके सामने ब्राह्मण देवताको हाथ बांधे भीख मांगते भी पाया गया है। रेलवे और सरकारी विभागोंमें अछूत हाकिमोंकी खुशामद करते हुये रातदिन ठाकुर साहब, पंडितजी और सेठजी सभी देखे जाते हैं। फिर भी भले ही कुत्ते बिल्ली छू जाय, मंदिरमें चले जाय और घरभरमें चक्कर लगाते रहे, मगर हरिजनका कहीं गुजर नहीं। उनके मकान देखें तो अंधेरे, तंग और फूस-मिट्टीके ढेर, जहां हवा, रोशनी और कुशादगीका नाम नहीं। खाना जूठा और सड़ा-बासी और कपड़ा कुतरा हुआ मिले, मगर काम करना पड़े कड़ीसे कड़ी मेहनतका। बेगारमें जबरदस्ती और मुफ्त हर तरहका काम और हर राजकर्मचारीका करना पड़े। यह अभिशाप तो हरिजन मात्रके भाग्यमें जन्मसे लेकर मृत्यु-पर्यन्त लगा ही है। न सर्दीका लिहाज, न धूप और वर्षाका खयाल डांट-डपट और गाली-गलौज व मारपीट ऊपरसे। ऐसी नरक यातनाओंको कहां तक सहा जाय? ऐसी हालतमें क्या आश्चर्य यदि लाखों विधर्मी हो जायं और अपनेको देश और जातिके कट्टर दुश्मन बन जायं?"

बापूने यह कॉल पढ़कर मुझे दो बातें पूछीं। एक तो राजपूतानेमें हरिजनोंके लिये पानीकी व्यवस्था और दूसरी, अजमेरका मैला स्टेशन। मैंने दोनोंका हाल सुनाया तो गंभीर मुद्रा करके बोले, 'पानीके बारेमें तुम राजपूताने जाकर मुझे विस्तारसे लिखना और मैला स्टेशन मैं कभी अजमेर आऊंगा तो देखूंगा।' जिस प्रकार बापूने सारे विषयोंमें से सचमुच वे ही दो मुद्दे चुन लिये जो सबसे महत्वके थे। विषयके मर्मको पहचाननेकी उनकी क्षमता विलक्षण थी।

१७२

मैंने अजमेर पहुचकर जल्दी ही पानीकी व्यवस्थाका कच्चा चिट्ठा अुन्हे लिख भेजा। अिस समस्याने अुन्हे अितना चिन्तित किया कि अुन्होने मेरा पत्र पहुचनेके दिन ही राजाजीसे अपनी महत्त्वपूर्ण मुलाकातमें अुसका अुल्लेख किया, जिसको महादेव-भाअीने अपनी डायरीके तीसरे भागमे पृ० २१६ पर अिन शब्दोमें अुद्धृत किया है

'बापू ओ हो! अपना धर्म मै क्यो छोड द्? मै कोअी अुन्हे अपना धर्म छोडनेके लिअे नही कहता। परन्तु आज जैसी दशा है अिसका अुन्हे खयाल नही। मेरे नाम रामनारायण चौधरीका अेक पत्र आया है, जिसमें पश्चिमी राजपूतानेके हरिजनोकी खराब हालतका वर्णन है। अेक भी कुअेंसे वे पानी नही भर सकते। जानवरोके हौजमें से अुन्हे गन्दा पानी लेना पडता है। हौजका अैसा गन्दा पानी वे कहा तक काममें लेते रहेंगे?'

अितना ही नही, बापूने तीसरे ही दिन अर्थात् २-४-'३३ को यरवदा मदिरसे यह पोस्टकार्ड लिखा

"भाअी रामनारायण,

तुमारे खतका मैंने 'हरिजनसेवक' में अुपयोग किया है — देख लेना। दी० ब० (दीवान बहादुर हरबिलास शारदा) और तुमारे धनिकोके पास जाकर कुअोके लिअे दान लेना चाहिये — नकशा बनाना चाहिये और कहा कहा कुओकी आवश्यकता है बताना चाहिये। कितने हरिजन है, वे क्या करते है अि० खबरका सग्रह करना चाहिये। कुअेंका क्या खर्च होता है अि० खोज करो।

"अजनादेवीको आशीर्वाद

बापूके आशीर्वाद"

१७३

जब बापू हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें अजमेर पहुचे और कार्यक्रमके बारेमें पूछा तो अुसमे पहली बात यह थी कि, 'मैला स्टेशन जानेका रस्ता है न?' जब अुसे आखो देखा तो अुनका मुख म्लान हो गया और अुस दृश्यको अुन्होंने 'हरिजनसेवक' में लिखते हुअे 'अजमेरका नरक' नाम दिया। दुखकी बात है कि देशके आजाद हो जाने और अजमेरमे जनताका राज्य हो जाने पर भी अभी तक वह नरक ज्यों का त्यों बना हुआ है।* अितने जागरूक थे हमारे राष्ट्रपिता और अितना प्रबन्ध है अुनके

* श्री राजकुमारी अमृतकौरके प्रयत्नसे अजमेरका यह नरक कुछ अश मा० २७-७-'५४ को श्री मोरारजीभाअीके हाथो हरिजनोका स्नानकुड बना दिया गया है। — लेखक

अनुयायी हम लोग! परन्तु जब मैं सिंहावलोकन करता हूं तो ऐसा लगता है कि गांधीजीने सचमुच अपने ऐतिहासिक अनुष्ठानसे नदियोंके सोये हुओं हिन्दू अन्त:करणको जगाकर और हमें हरिजन-सेवाके महान प्रायश्चित्तमें लगाकर मानवता, हिन्दू धर्म और भारतवर्षकी अपूर्व सेवा की और वे और कुछ भी न करते तो अकेले इस अलौकिक कार्यके लिये भी इतिहासमें अमर हो जाते।

१७४

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें दौरा करते हुये जब मैं बागड (डूंगरपुर-बांसवाड़ा प्रदेश) में पहुंचा, तो वहांके भीलोंकी स्थितिका अध्ययन करनेका अवसर मिला। जहां तक मैं जानता हूं, यह जाति भारतकी सबसे गरीब जाति है। अज्ञान, अविद्या तथा शोषणका ऐसा दृश्य शायद और कहीं नहीं मिल सकता। राज्यसत्ता और सूदखोर महाजनोंके मारे ये भोलेभाले प्राणी प्राय निस्सहाय अवस्थामें थे। इनकी खेतीका ढंग बिलकुल प्रारंभिक, जमीन और औजार घटिया, सिंचाईके स्थायी प्रबन्धका अभाव और मवेशी दुबले और घटिया थे। जिनी तरह इनके स्वास्थ्यकी तरफ भी किसीका ध्यान नहीं था। बीमारीमें इन्हें दवा मिलना मुश्किल और यदि कोई संक्रामक रोग फैल गया तो मैकडोंकी संख्यामें कीड़े-मकोड़ोंकी तरह मर जाते। मकान इनके खपरैल, बांस और मिट्टीके बने हुये तंग, नीचे और अंधेरे थे, जिनमें अनेक ही जगह खाना, सोना, और पशुओंके रखनेका स्थान होता था। खुली हवा और धूप आदि प्रकृतिकी देन, भीलोंकी अपनी सैनिक वृत्ति और कठोर परिश्रमशीलताके कारण वे बेचारे किसी तरह जिन्दा रहते थे। अन्यथा इन्हें तन ढकनेको कपडा और खानेको पूरा अन्न भी मयस्सर नहीं होता था। आधे पेट खाना, अर्द्धनग्न रहना और झाड़ोंमें आगके सहारे रात बिताना, यह इनका साधारण जीवनक्रम था। शिक्षाके लिये राज्योंकी ओरसे नहींके बराबर व्यवस्था थी। बेगारकी मार और सूदखोरोंकी लूटके आगे वे हमेशा तंग रहते थे। ऊपरसे सरकारी प्रबन्धमें शराबका दुर्व्यसन इनके लिये एक बड़ा अभिशाप बना हुआ था। सामाजिक दृष्टिसे भी इनके साथ लगभग अछूतोंका-सा व्यवहार होता था।

मैंने बापूको यह दशा बताई और सुझाव दिया कि भील-सेवाको हरिजन-सेवाका अंग मानकर कमसे कम राजपूतानेमें इसे हरिजन-कोषसे सहायता दी जाय। इन्होंने ठक्करबापासे कहनेको कहा। बापूको तो भीलोंके प्रति पक्षपात था ही। इन्होंने समर्थन किया और बापूने अपनी मर्यादाओंकी कडाईको नरम करके इस साक्षात् दरिद्रनारायणकी सेवाको हमारे कार्यक्रममें शामिल करनेकी मंजूरी दे दी। वे सचमुच भगवानको गरीबों, पीडितों और शोषितोंके रूपमें ही पूजते थे।

१७५

१९३५ या १९३६ की बात होगी। मुझे दिलके दौरे होने लगे थे। बापूको मालूम हुआ तो अपने पास बुलवा भेजा। अुन्हे सेवाग्राममे बसे हुअे थोडा ही समय हुआ था। जब मैं पहली बार पहुचा तो कहने लगे, 'मैं रखना तो चाहता था तुम्हे अपने ही पास, मगर यहा स्थानकी बहुत कमी है। तुम्हे तकलीफ होगी। अिसलिअे रहो बजाजवाडीमें और महादेवके साथ रोज यहा आ जाया करो और अुन्हीके साथ लौट जाया करो। खानेमें नाश्ता और शामका भोजन वर्धा और दुपहरी मेरे साथ कर लिया करो।' तदनुसार महादेवभाअी, जो पहले पैदल आया जाया करते थे, अब मुझे लेकर जमनालालजीकी 'बैल मोटर' में आने-जाने लगे। मुझे बापू खानेको अपने ही पास बिठाते और अपने ही हाथसे परोसते। पहले ही दिन अैसा महसूस हुआ कि मेरी मा मरी नही है या बापूके रूपमें अुसने फिरसे अवतार ले लिया है। अितना स्नेह था अुनके व्यवहारमें।

१७६

मेरे खाने-पीनेकी व्यवस्थाका भार भाअी राधाकृष्ण बजाज पर था। अिस रूखेसूखे दीखनेवाले अपने भूतपूर्व विद्यार्थीकी स्निग्धताका प्रथम परिचय अिन्ही दिनो हुआ। वे मुझे सुबह ही सुबह बादामका हरीरा देना चाहते थे। मैं अुन दिनो आश्रमी भोजनके बारेमें बडा कट्टर था। परन्तु जब मैंने सेवाग्राम जाकर बापूसे पूछा तो अुन्होंने तुरन्त कह दिया, "कोअी हरकत नही। जरूर लो।" छोटा भाअी दुर्गाप्रसाद साथ ही था। अुसने भी मौका देखकर पूछ लिया, "भाअी साहबका दिल नही लगता। अगर थोडी देर ताश खेल लिया करें तो कुछ आपत्ति है?" बापूको अेक क्षण भी नही लगा और वे बोले, "कोअी आपत्ति नही।" दोनो अुत्तर मेरी कल्पना और आशाके बाहर थे। मैंने समझ लिया कि रोगियोके प्रति अुनके मनमें कितनी करुणा और साथियोके लिअे कितनी कोमलता है! नैतिक मामलोके सिवा वे और बातोमें बहुत समझौता कर लेते थे।

१७७

अुन दिनो अेक निकटके साथीके विचारो तथा व्यवहारसे मेरे दिल पर चोट लगी थी। प्रसगवश बापूसे जिक्र आ गया तो मेरी आखे भर आअी। बापू द्रवित होकर बोले, "अैसा अनुभव सभीको होता है। देखो, अुन दिन आये थे। अुनकी लेखमाला पढकर मैंने अुन्हे चर्चाके लिअे बुला लिया था। जब बात हुअी तो बच्चोकी तरह रोने लगे। कहते थे, 'बापू, मेरा दिल तो आपकी तरफ दौडता

है, मगर दिमाग दूसरी ही दिशामें जाता है। अिसका मुझे दुःख है, बताअिये क्या करूं?' मैंने अुन्हें साफ कह दिया, "अभी अपने हृदयको ताकमें रख दो और जो बुद्धि कहे वही करो। अपने आप सही रास्ता मिल जायगा। तुमने मुझे अपना दर्द बता दिया, परन्तु मैं अपना दुखडा किसके आगे रोअूं? अिसलिअे तुम्हें भी मेरी यही सलाह है कि साथीसे कह दो, वह तुम्हारे निजी सम्बन्धका लिहाज न करके अपनी अन्तरात्माका आदेश माने।" अिस प्रकार अपनी व्यथा प्रकट करके अुन्होंने मेरी सारी पीडा शमन कर दी। साथ ही मुझे अेक नया प्रकाश मिला कि बापू व्यक्तिके विचार और तदनुसार आचरणकी स्वतन्त्रताके कितने प्रबल समर्थक थे। अितना ही नहीं, मुझे जीवनका अेक नया मन्त्र भी प्राप्त हुआ कि प्रेमको मनुष्योंकी गुलामीका कारण नहीं, प्रत्युत स्वतन्त्रताका निमित्त होना चाहिये। मुझे पहले-पहल अिस आरोपकी निःसारता प्रतीत हुअी कि बापूके अनुयायी अुनके प्रति अवश्रद्धा रखते हैं या वे अबानुगमनको प्रोत्साहन देते हैं।

१७८

बापूके पोते कान्तिभाअी अुन दिनों शायद मैसूरमें डॉक्टरीकी पढ़ाअी कर रहे थे। छुट्टियोंमें सेवाग्राम आये हुअे होंगे। अेक दिन जब मैं वहां पहुंचा तो अुनके और बापूके बीच विवाद चल रहा था। वे अेक धोती अधिक चाहते थे और बापू अुसकी जरूरत नहीं समझते थे। पता नहीं मेरे पहुंचनेसे पहले कितनी देरसे बहस हो रही थी, परन्तु मेरे सामने भी कोअी पन्द्रह मिनट तो चली ही होगी। आखिर बापूने मजूरी नहीं दी सो नहीं दी। कान्तिभाअीके अुठ जानेके बाद मुझसे नहीं रहा गया तो मैं पूछ बैठा, 'बापू, आपका समय अितना कीमती है और बात अितनी छोटीसी थी।' मैं अितना ही कह पाया था कि बापू बीचमें ही बोल अुठे, 'हां, मैं तुम्हारी बात समझ गया। परन्तु प्रश्न छोटी-बडी बातका नहीं, अेक सिद्धान्तका है। हम दरिद्रनारायणके पुजारी हैं। हमें अुसकी सेवा करनी है तो जनतासे अपने लिअे कमसे कम लेकर अुसे अधिकसे अधिक देना चाहिये। जरूरत न होने पर अेक पैसा भी खर्च करना मुझे चोरीकी तरह खटकता है। आवश्यकता हो तो हजार रुपये भी कोअी चीज नहीं। रुपयेकी मनुष्यके मुकाबिलेमें कुछ भी हैसियत नहीं। तुम देखते हो बालकोबाके अिलाजके लिअे मैं कैसे पानीकी तरह रुपया बहा रहा हूं। अुसका मुझे जरा भी अफसोस नहीं। मगर कान्तिके लिअे जब वह धोती जरूरी नहीं लगती तो कैसे मगाकर दूं?' वास्तवमें बापूजी जनताके धनके सच्चे रक्षक थे और अपनोंके प्रति अधिक कठोरता करते थे।

१७९

बापूके अेक नजदीकी साथी अुन दिनो अपने व्रतसे विचलित होकर अपनी मृगमरीचिकाके पीछे भटक रहे थे। अुन्हे खर्चकी जरूरत हुअी। अुन्होने महादेव-भाअीकी मारफत रुपयेकी माग की। महादेवभाअी तो ठहरे सहृदयताकी मूर्ति। अुनकी अिच्छा सिफारिश करनेकी थी, परन्तु बापूके स्वभावसे भी भलीभाति परिचित थे। डरते डरते जिज्ञासा की, 'बापू, का पत्र आया है। कष्टमें मालूम होते है। क्या अुन्हें कुछ सहायता दी जा सकती है?' 'हरगिज नही', बापूने तुरन्त दृढता-पूर्वक कहा, 'क्या हम किसी साथीको भी अुसकी अनीतिमे साथ दे सकते है? हम तो पुण्यपथके पथिक है। अुसीमें हमारा साथ हो सकता है। . . को लिख दो कि जब तक अुसका यही हाल है तब तक वह हमसे मददकी कोअी आशा न रखे।' सचमुच बापू पर 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' की कहावत सोलह आने चरितार्थ होती थी।

१८०

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें हमने नारेली गावमें राजस्थान सेवक मडलकी तरफसे आश्रमका अेक पक्का मकान बनाया था। अुसके लिअे अेक बार हरिजन-सेवक-सघका कुछ रुपया मडलके नाम अुधार लिखकर काममें ले लिया गया था। मुझे अिसमें कोअी दोष नही दिखाअी दिया, क्योकि कअी बार सघके लिअे जरूरत पडने पर अिसी तरह मडलकी रकम काममें ले ली जाती थी। परन्तु ठक्करबापा अिस मामलेमें बहुत कडे थे। जब अुनके पास हिसाब गया तो अुन्होने मुझे अैसी डाट पिलाअी जो मेरे स्वभावके लिअे असह्य हो गअी। मैंने लिखा कि, 'जब मडलका रुपया लगाकर अनेक बार सघकी जरूरत पूरी कर दी गअी तब आपने न दुरुपयोगकी शिकायत की और न सहायताके लिअे धन्यवाद दिया। अब आप अितनी सख्ती कर रहे है तो लीजिये यह मेरा त्यागपत्र।' बापा बडे मजबूत आदमी थे। अुन पर मेरे पत्रका कोअी असर नही हुआ। अितना जरूर हुआ कि मेरा अिस्तीफा मजूर करनेके बजाय अुन्होंने मेरा पत्र बापूको, जो अुन दिनो दिल्लीमे ही थे, दिखा दिया। बापूने मुझे बुलाकर समझाया, 'तुम पर कोअी गबनका आरोप नही है, केवल यह शिकायत है कि तुमने अेक सस्थाका रुपया अुससे पूछे बिना दूसरीको दे दिया। यह पद्धति गलत है। फिसलनका रास्ता है। किसीको अपना रुपया दे देना निरी अनावश्यकी हो सकती है। मगर दूसरेका ले लेना खतरनाक है। त्यागपत्र वापस ले लो और आयदा किसी भी सस्था या व्यक्तिका धन अुसकी मजूरीके बिना दूसरेको न देनेका नियम बना लो।' मैंने अपनी भूल स्वीकार की और सुधार ली। भविष्यके लिअे मुझे अेक मूल्यवान पाठ मिल गया। बापू अिस तरह अपने साथियोंकी [illegible] भूलें ठीक कराते थे।

१८१

हरिजन-सेवक-सघमें हम लोग हरिजनोसे शराब और मुर्दार मासके साथ-साथ सभी तरहका गोश्त भी छोडनेको कहते थे। अेक दिन अखबारमें अुडीसाके दौरेमें बापूका यह कथन पढा कि समुद्रतट पर रहनेवाले गरीबोको खुराकमें दूसरी तरह पोषक तत्त्व नही मिलते, अिसलिअे मेरा जी नही मानता कि अुन्हे मछली खानेसे मना करू। मैंने अुसी दिनसे हरिजनोको मासाहार छोडनेके लिअे कहना बन्द कर दिया। मगर मेरा यह निश्चय भावुकताका था। सिद्धान्तकी दृष्टिसे मेरी शका बनी ही रही। अुसका समाधान तब हुआ जब थोडे ही समय बाद वर्धामें गाधी-सेवा-सघका सम्मेलन हुआ और अुसमें सदस्योकी योग्यताओ पर विचार किया गया। मै अुन लोगोमें से था जो मासाहारियोको सदस्य बनानेके विरुद्ध थे। मेरी समझमें नही आ रहा था कि हिंसक मनुष्यको अहिंसक सगठनका अग कैसे बनाया जा सकता है। अिस अवसर पर बापूने जो कुछ कहा अुसका सार यह था "जो लोग पीढियोसे या दीर्घकालीन अभ्यासके कारण मासाहारके आदी है और गोश्त जिनकी खुराकका अेक कुदरती हिस्सा बन गया है, अुन पर अुसे छोडनेकी शर्त लगाना अेक प्रकारकी हिंसा होगी। अुनके सस्कारको अनिवार्य हिंसा मानकर सहन करना होगा। हा, जो लोग लुकछुपकर खाते है या जिनके यहा पहलेसे रिवाज न होने पर भी अब नये सिरेसे खाने लगे हो या खाना चाहते हो, अुन्हे हम सघका सदस्य नही बना सकते।" बापूके विवेकमें जितना साहस रहता था अुतनी ही अहिंसा भी रहती थी। अुसका परिचय बादमें यहा तक मिला कि अेक बार डॉ० सैयद महमूद जब बीमार हालतमें सेवाग्राम आये तो अुन्हे मुर्गीका शोरबा तैयार करा कर दिया। अिसी तरह मौलाना अबुल कलाम आजादको आश्रममें बैठकर सिगरेट पीनेकी छूट थी और पडित मोतीलालजी नेहरूके लिअे आश्रममें चाय बनवाकर दी जाती थी। मगर ये रियायतें तो वे थी जो मेहमानोके लिअे होती थी। बापू तो मुख्य और गौण वस्तुओका विवेक और जब न करनेका ध्यान घनिष्ठ साथियोके साथ भी काफी रखते थे। यही कारण था कि किशोरलालभाअी और महादेवभाअी वगैराको अलग भोजनालय रखकर आश्रममें वर्जित शक्कर, मसाले और तली हुअी वस्तुअें भी खानेकी छूट दे रखी थी। सार यह कि बापू अेक व्यावहारिक आदर्शवादी थे।

१८२

१९२८ व १९३० में साबरमतीमे, १९३४में हरिजन-प्रवासके समय और बादमें १९४० के सेवाग्राम निवासमें बापूजीके साथ अुनके 'यग अिडिया' और 'हरिजन' पत्रोमें अनुवाद और पत्रव्यवहारका काम करते और देखते हुअे मुझे अुनकी अेक पत्रकारके रूपमें रीतिनीतिका प्रत्यक्ष अध्ययन करनेका अवसर मिला। मेरे खयालमें बापू अेक आदर्श पत्रकार थे। वे अिस पेशेको अेक सेवापरायण न्यायाधीशका

पेशा समझते थे। जहा वे पीडित पक्षकी सहायता करना अपना सर्वोपरि ध्येय मानते थे, यहा वे लेखको और सवाददाताओको अुचित शिक्षा भी देते रहते थे। आलोचककी दृष्टिसे वे सर्वथा निष्पक्ष रहनेकी कोशिश करते थे। वे न अपने विरोधियोके गुण प्रगट करनेमे कजूमी करते थे और न अपने समर्थकोके दोष बतानेमे अुन्हे सकोच होता था। जिन लोगोके खिलाफ शिकायतें आती अुनके प्रति अन्याय न होनेका वे बडा ध्यान रखते थे। अिसलिअे पहले अुन्हे लिख कर पूछते थे कि अुन्हे अपने बचावमें क्या कहना है। अुत्तरके लिअे काफी समय भी देते थे। यदि शिकायते व्यक्तिगत ही होती और सम्बन्धित व्यक्ति अुन्हे स्वीकार कर लेते, तो वे अुन्हे प्रकाशित न करके अुन व्यक्तियोको अपना आचरण ठीक करनेकी प्रेरणा देते थे। नाम तो किसीका वे अुसकी अनुमतिके बिना कभी जाहिर ही नही करते थे। गरज यह कि वे किसीको बदनाम नही करते थे, अुसे सुधारनेका ही प्रयत्न करते थे। फल यह होता था कि लोग बहुधा निराधार या प्रमाणहीन शिकायते या तो भेजते ही न थे या अुन्हे वापस ले लेते या सुधार लेते थे और जिनके विरुद्ध सही आरोप लगाये जाते थे वे अुन्हे दूर कर देते थे और प्रकाशनकी नौबत ही नही आती थी। बापू जिन पत्रोको चलाते थे अुनमें अेक शब्द भी अुनके देखे बिना नही छप सकता था। अिसमें वे अपने बडेसे बडे सायीके साथ भी रियायत नही करते थे। वे अपनी जिम्मेदारीका अितना अूचा माप-दड रखते थे।

१८३

सन् १९३८ व १९३९ में मैंने भी अेक पत्र-सपादकके नाते अिस नीतिके अनुसरणका प्रयोग किया तो अुसके कल्याणकारी अनुभव हुअे। अजमेरके रेल्वे कारखानेके विरुद्ध रिश्वतकी अुन दिनो बडी शिकायत थी। कुछ अग्रेज अफसरोके विरुद्ध असतोष था। मैंने प्रधान अधिकारीसे, जो अग्रेज था, मिलकर अुन्हे बापूकी पद्धति समझाअी और अुसकी सम्मतिसे दो अुच्च अधिकारियोके मामले हाथमें लिये। तय यह हुआ कि जो व्यक्ति हृदयसे अपना दोष स्वीकार कर ले और भविष्यमें शुद्ध रहनेका वचन दे दे अुसे मेरी सिफारिश पर क्षमा कर दिया जायगा और जो दोष स्वीकार न करे अुसके मामलेमें अुचित कार्रवाअी की जायगी। तदनुसार मैंने दोनो अग्रेज कर्मचारियो पर लगाये जानेवाले आरोप अुन्हे लिख भेजे और अुनकी सफाअी मागी। मैंने यह भी सूचित कर दिया कि अुन्हे पत्रव्यवहार करनेमे आपत्ति हो तो मैं अुनसे रूबरू मिल लूगा। अुन्होने आदमी भेजकर मुझे बुलाया।

पहले कर्मचारीका सम्बध नियुक्तियो और तबादलोसे था। वह दोनो पक्षोसे रुपया ले लेता और जिसका काम हो जाता अुसकी रकम रख लेता था और असफल आदमीके दाम लौटा देता था। मैं अुससे अुसके बगले पर मिला। मैंने अुसके कधे पर हाथ रख कर कहा "आप अेक अीसाअी है। अीसामसीहकी यह शिक्षा है कि भूल हो जाय तो अुसे मान कर सुधार लेना चाहिये। आप जवान आदमी हैं। खरी कमाअी

खाजिये। भगवान बरकत देगा। अगर आपमें घूस लेनेकी कमजोरी सचमुच है, तो मुझे स्वीकार कीजिये और आयदा न लेनेकी प्रतिज्ञा कर लीजिये। मैं गांधीजीका अेक नम्र अनुयायी हू। आप विश्वास करेंगे तो आपको पछतावा नही होगा। मेरे हाथसे आपकी कोअी हानि नहीं होगी।" अुसने नीचा मुह किये मेरी बात सुनी और अुसकी आखोमें से आसू निकल पडे। तब अुसकी पत्नी, जो दर्वाजेकी आडमें सब सुन रही थी, सामने आकर कहने लगी "मि० चौधरी, मेरे पति जब यहा आये तब खराब आदमी नही थे। आपके देशभाअियोने अिन्हें यह चस्का लगाकर बिगाड दिया। मै मि० गांधीकी और आपकी अृणी रहूगी यदि आप अिन्हे सही रास्ते पर ले आयेंगे।" अुस अग्रेजने अुसी दिनसे रिश्वत छोड दी, विचाराधीन मामलोका जो जो रुपया अुसके पास रखा हुआ था अुसी दिन लौटा दिया और मुझे लिखकर अुसकी सूचना भेज दी।

१८४

दूसरा अफसर बर्क्स मैनेजर था। जब मैं अुससे मिला तो अुसने आरोपको गलत बताया। मगर अुसके हाथ काप रहे थे और मुखमुद्रा भी कह रही थी कि अुसका दिल कसूर मानता है, मगर जबानकी हिम्मत नही हो रही है। मैंने अुसे यह बात बताकर साहस करनेका अनुरोध किया। परन्तु अुसका साहस नहीं हुआ। जब मैंने प्रधान अधिकारीको अपनी जाचका नतीजा बताया, तो अेक सप्ताहके भीतर पहले कर्मचारीका अुसकी अिच्छाके अनुसार बम्बअी तबादला कर दिया गया और बर्क्स मैनेजरको रिटायर करके विलायत भेज दिया गया।

१८५

अिसी तरह अजमेरमें अेक डिप्टी पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टका किस्सा हुआ। अुनके विरुद्ध भ्रष्टाचारकी बडी शिकायतें थी। अुनका शासनमें बडा असर और जनतामे दबदबा था। कअी हाकिम लोग अुनके दरबारी बने हुअे थे। मेरी अनुपस्थितिमे मेरे साप्ताहिक 'नवज्योति' में पुलिसकी कुछ शिकायतें छप गअी थी, जिनका असर अप्रत्यक्ष रूपमें अुन पर पडता था। मेरे लौटने पर अेक दिन रातको मेरे अेक बडे वकील मित्रके साथ वे खुद ही मिलने आ गये। बातें हुअी। मैंने सीधा ही सवाल किया, 'आप रिश्वत लेते है?' अुन्हे अचम्भा तो हुआ, मगर कुछ सोचकर बोले, 'अिसका जवाब अगली मुलाकातमें दूगा।' जब फिर आये तो कहा, 'पिछली बातें दरगुजर कीजिये। आयदा कोअी शिकायत नही आयेगी।' मैंने अिसे दोष-स्वीकार और आगेका आश्वासन समझा। अुन्होने अितनी साफ बात मुझे बापूका आदमी समझकर ही कही और सचमुच जब तक वे रहे— और वे काफी अरसे तक रहे—मेरे पास अुनके विरुद्ध कोअी शिकायत नही आअी।

१८६

राजस्थानके अेक प्रसिद्ध राजघरानेमें अेक युवकका विवाह हुआ। ससुरालवालोंने वचनानुसार दहेज नहीं दिया। वरके माता-पिताने कन्याके मा-बापके अिस कसूरकी सजा लडकीको देना शुरू कर दिया। वधूको 'दुहाग' दे दिया गया अर्थात् पतिदेवने अुससे मिलना छोड दिया। किसी सहृदय व्यक्तिने यह कथा मुझे लिख भेजी। सम्पादकके नाते मैंने लडकीके ससुरको पत्र लिखकर अिस अन्यायकी ओर अुनका ध्यान आकर्षित किया और अुनके अुच्च कुल और वीर अितिहासकी याद दिलाकर और गांधीयुगमें जन्म लेनेके सौभाग्यका अुल्लेख करके अुस निर्दोष अबलाके साथ न्याय करनेका अनुरोध किया। फल चमत्कारी हुआ। आठवें दिन राजा साहबका प्रतिनिधि आकर अुनकी ओरसे धन्यवादके साथ साथ आश्वासन दे गया कि अन्याय दूर कर दिया गया है।

१८७

अेक दिन राजपूतानेकी अेक छोटी रियासतसे अेक महिला आअी। अुन्होंने दीवान पर गंभीर आरोप लगाया कि महिलाको रखेल बनानेके लिअे दीवानने अुसके पतिकी हत्या करा दी है। मैंने अुसके बयानकी नकल दीवानको भेज दी। दीवानने मुझे मिलने बुलाया। अभियोगको अुन्होंने गलत बताया और सफाअीमें न्याय-विभागके सारे कागजात मगवाकर दिखलाये। मुझे संतोष नहीं हुआ तो बोले, 'Every saint has a past and every sinner a future (प्रत्येक साधुका भूतकाल और प्रत्येक पापीका भविष्य होता है)। और कोअी होता तो मैं यह न कहता। पर आप गांधीजीको मानते हैं, अिसलिअे यह बात कहता हूं।' मैं सन्तुष्ट होकर चला आया। अुधर दीवान साहबने अुस महिलाको रखेल न बनाकर अुससे विवाह कर लिया और अब वह अुनकी विपुल सम्पत्तिका अुत्तराधिकार भोग रही है।

१८८

अेक बार शायद १९२३ में लाहौरके दैनिक 'ट्रिब्यून' के वयोवृद्ध सहकारी संपादक श्री आयंगर पुष्कर स्नानके लिअे अजमेर आये थे। मेरे ही मेहमान थे। बापूके बारेमें अेक दिन बातों ही बातोंमें कहने लगे, "His is the best English in Asia" (अेशियामें अुनकी अंग्रेजी सबसे अच्छी है!) बादके अपने प्रत्यक्ष अनुभवसे अेक पत्रकारके नाते मेरी यह राय बनी है कि वे अपने समयके संसारके सबसे बडे पत्रकार थे। अुन्होंने पत्रकारके धन्धेको प्रत्यक्ष रूपमें अुतना ही अूंचा अुठाकर दिखा दिया जितना मानव-जीवनको। वे अिस क्षेत्रमें सचाअी और

सादगीका नमूना थे। अुन्होने पत्रकारोको अपने अुदाहरणसे सावित कर दिया कि वे सत्य, सद्भाव और सहिष्णुताके दूत है, अुनके कार्यका आधार नैतिकता और आध्यात्मिकता है। गांधीजीके अनुसार पत्रकारमे परिश्रम, दीर्घोद्योग, निर्भयता और निष्पक्षताका समन्वय होना चाहिये। जो बात लिखी जाय पूरी खोजके बाद, बडी सावधानीके साथ लिखी जाय। वे अेक अेक शब्द चुनकर, तौलकर लिखते थे। चार शब्दोका काम अेक शब्दसे लेना जानते थे। अुनके वाक्य जितने मीठे होते थे अुतने ही साफ होते थे। अुनके लेखनमें कही अत्युक्ति, कटुता या चालाकी नही होती थी। वे अिस कलाके महान कलाकार थे। परन्तु कलाको वे कलाके लिअे नही पूजते थे। वे अुसे अुपयोगी वस्तुके रूपमें ही मानते थे और ससारके कल्याणके लिअे, दरिद्रनारायणकी सेवाके लिअे, सत्य और अहिंसाके प्रचारके लिअे ही वे अपनी अन्य शक्तियोकी तरह पत्रकार-कलाको, लिखनेकी शक्तिको भी काममें लेते थे। सचमुच अुन्होने कलमको तलवारसे ज्यादा ताकतवर बना दिया था। जिन्हे 'यग अिडिया', 'नवजीवन', 'हरिजन' या 'हरिजनसेवक' पढनेका अेक बार मच्चा चस्का लग गया, वे अुनके लिअे आतुर रहते थे और बापूके लेखोका अेक अेक अक्षर पढे बिना नही छोडते थे। अंग्रेजी और गुजराती भाषाको अुनकी अेक विशेष देन है। मेरा विश्वास है कि अुनकी लेखनीसे निकली हुअी चोज आनेवाली पीढियोको सदा प्रेरणा देती रहेगी।

१८९

सितम्बर १९३९ में दूसरा महायुद्ध छिड गया। अिस अवसर पर मुझे बापूकी आदर्श राजनीतिज्ञताके दर्शन हुअे। मेरी रायमें आदर्श राजनीतिज्ञ वह है जो अपने अुसूलको न छोडते हुअे शत्रुपक्षके भी सत्यको स्वीकार करके, जनताको अैसा कार्यक्रम दे जिससे अुसे कममे कम त्याग करके अधिकसे अधिक फल प्राप्त हो सके। युद्धकालमें बापूने अिसी नीतिका अनुसरण किया। वे अपने अहिंसाके सिद्धान्त पर अन्त तक डटे रहे। अुन्हे देशकी स्वाधीनता जैसा बडा प्रलोभन भी काग्रेस व भारतकी ओरसे मित्र राष्ट्रोको सैनिक सहायता दिलवानेके लिअे ललचा नही सका, और न जवाहरलालजी, राजाजी और सरदार जैसे साथियोके विछोहका डर ही सत्यपथसे विचलित कर सका। वे ध्रुवकी भाति अिस बात पर अटल रहे कि भारत जिस पक्षको न्याय-पक्ष मानता है अुसका समर्थन तो जरूर करेगा, मगर वह समर्थन नैतिक ही होगा, युद्धके रूपमें हरगिज नही। मुझे तो व्यावहारिक दृष्टिसे भी ससारके सबसे पटु राजनीतिज्ञ देश ब्रिटेनकी राजनीतिज्ञताने भी गाधीजीकी राजनीतिज्ञता बढकर मालूम हुअी। आखिर तो मुख्य बात थी भारतके सद्भावकी। यदि ब्रिटेन अुसे प्राप्त कर लेता तो अिस देशसे युद्धके लिअे धनजन प्राप्त करनेमें काग्रेस और बापूकी ओरसे जितना विरोध हुआ अुतना न होता और अुनके प्रचड आन्दोलनसे भारत व ससारमें ब्रिटिश साम्राज्यके विरुद्ध जो प्रतिकूल वातावरण बना वह न बनता।

१९०

दूसरी लडी बापूकी राजनीतिज्ञताकी यह थी कि ब्रिटिश साम्राज्यको भारतका सबसे बडा दुश्मन मानते हुअे भी अुन्होने धुरी राष्ट्रोकी निरकुश और आक्रमणात्मक वृत्तिके मुकाबलेमें मित्र राष्ट्रोकी लोकतत्री और रक्षात्मक पद्धतिकी श्रेष्ठता स्वीकार की। अिसीलिअे अुन्होने अग्रेजोको परेशान करनेके अिस अुत्तम अवसरका लाभ अुठाकर तुरन्त देशव्यापी सामूहिक सत्याग्रह छेड देनेसे परहेज किया। वे शत्रुकी विपत्तिमे अुस पर हमला करना कायर कृत्य समझते थे। अुनकी अहिंसक शौर्यकी कल्पना हिसात्मक वीरतासे कही अिधक अुदात्त थी। परन्तु वे व्यावहारिक आदर्शवादी थे। अिसलिअे केवल अग्रेजोकी परेशानीके खयालसे ही भारतकी आजादीकी स्वाभाविक लडाअीको मर्यादा स्थगित या बन्द करनेको भी तैयार नही थे। वे अत्यन्त विवेक-पूर्वक सीढी दर सीढी आगे बढे। अुन्होने अग्रेजोकी नेकनियतीकी परीक्षा लेनेको मित्र राष्ट्रोसे अुनके अिस दावेका प्रमाण चाहा कि वे ससारकी स्वतत्रताके लिअे लड रहे हैं। अुन्होने यह माग की कि युद्धकालमें भारतको व्यावहारिक स्वशासन दे दिया जाय और युद्धके समाप्त होने पर भारत पूरी तरह स्वाधीन कर दिया जाय। ब्रिटिश सरकार अिस अिम्तहानमें फेल हुअी। अुसने कोअी स्पष्ट वचन नही दिया। तब बापूने सरकारको काफी मौका देकर पहले कदमके तौर पर प्रान्तोके काग्रेसी मन्त्रिमडलोसे अिस्तीफे दिलवाये। जब अिससे भी अग्रेजोके स्वार्थने अुनके विवेकको जाग्रत नही होने दिया, तब गाधीजीने देशव्यापी व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरू किया। अुसमे यह विशेषता देखने लायक थी कि सब सत्याग्रहियोको पैदल यात्रा करते हुअे दिल्ली पहुचना था, ताकि भारतके कोने कोनेमें काग्रेसका सन्देश पहुच जाय, अधिकसे अधिक देशभक्तोको देशकी ग्रामीण जनताका सम्पर्क और परिचय प्राप्त हो जाय, अुनमें आरामतलब और अभिमानपूर्ण नेतृत्वकी भावनाके बजाय समता, नम्रता और परिश्रमशीलताका सस्कार पडे और सरकारके लिअे भी अिस व्यापक आन्दोलनका मुकाबिला करना आसान न रहे।

१९१

नतीजा यह हुआ कि ब्रिटिश मन्त्रिमडलकी ओरसे क्रिप्स साहब भारतसे समझौता करने आये। अुनके प्रस्तावोको समझनेमें जहा अन्य भारतीय नेता बहुत दिन अुलझे रहे, वहा गाधीजी अुन्हे देखते ही भाप गये कि अुनमें कुछ दम नही है। अुन्होने अुन्हे आगेकी तारीखका चेक कहकर सकेत कर दिया कि वह दिवालिये बैंककी न सिकरनेवाली हुडी है। जब अुन्होने देखा कि ब्रिटिश सत्ताधिकारी अपनी स्वार्थपूर्ण सत्ता बनाये रखनेके लिअे अिस सकट कालमें भी हमारी आपसी फूटका — हिन्दू-मुस्लिम झगडेका — वेजा फायदा अुठानेसे बाज नही आते, तो अुन्होने जो प्रस्ताव किया अुसमें तो अेक सत्याग्रहीके साहस और शौर्यकी हद ही कर दी। जैसे अुन्होने गोलमेज परिषदके समय यह कह दिया था कि मुसलमानोके हाथमे कलम दे दी जाय

और वे जो चाहे सो रख लें और बाकी हिन्दुओंके लिअे छोड दें, वैसे ही क्रिप्स मिशनके अवसर पर घोषणा कर दी कि ब्रिटेन भले ही मुस्लिम लीग या और किसी भी भारतीय प्रजा-पक्षके हाथो भारतके शासनकी बागडोर सौंप दे। मगर न ब्रिटिश सरकारकी नियत अच्छी थी और न मित्र राष्ट्रोको अपने सबल साथीको नाराज करनेकी हिम्मत हुअी और न जिन्नाह साहबका ही यह हौसला हुआ कि देशकी लगाम वे और अुनकी पार्टी सभाल ले। अतमें बापूको विवश होकर अंग्रेजोके लिअे 'भारत छोडो' का और भारतवासियोंके लिअे 'करो या मरो' का दोहरा नारा बुलन्द करना पडा और देशमें सामूहिक सविनय भगका प्रचण्ड आन्दोलन छेड देना पडा। अुनका जो परिणाम हुआ वह अेक सर्वविदित अतिहासिक घटना है। अुसने मानवजातिको यह अमर सन्देश दे दिया कि पराधीन राष्ट्रोकी मुक्तिका, न्याय प्राप्तिका, राष्ट्रोके बीच झगडे निपटानेका हिंसा ही अेकमात्र साधन नही है, बल्कि अेक दूसरा अुपाय अहिंसा भी है और वह कही सस्ता, कही श्रेयस्कर और कही चिरस्थायी है। यह बापूके सत्याग्रह मार्गका ही चमत्कार था कि डेढ सौ वर्षके पीडित और पीडकके सम्बन्धोके बाद भारत और ब्रिटेन आज दुश्मन न होकर दोस्त है।

१९२

अिन तीन वर्षों अर्थात १९३९ से १९४२ के अरसेमें मुझे बापूके सान्निध्यमें सेवाग्राम रहनेका सौभाग्य मिला। अुस समय मेरे पास मुख्यत. पुस्तकालय, वाचनालय, पत्रव्यवहार और 'हरिजन' के अनुवादका काम था। अेक बार राजकुमारी अमृतकौर सेवाग्रामसे शिमले जा रही थी। मुझे भी अुन्ही दिनो दिल्ली जाना था। मैंने बापूसे पूछा, "मै राजकुमारी बहनके साथ ही चला जाअू तो?" "खर्चा वह दे तो न लेना।" बापूका यह अुत्तर सुनकर आश्चर्य भी हुआ और दिलको ठेस भी लगी। मैंने कुछ तेजीमे आकर प्रश्न किया, "यह सवाल ही कहा है?" बापू बोले, "वह स्वभावकी अुदार है और अुसके तुम्हारे मीठे सम्बन्ध है। कही वह आग्रह कर बैठे और तुम अिनकार न कर सको तो तुम्हारी तेजोहानि हो सकती है। हम गरीब लोग है। स्वाभिमान ही हमारी पूजी है। अुसकी रक्षाका हमें सदा ध्यान रखना चाहिये। अिसीलिअे तुम्हे चेतावनीके तौर पर कह दिया है।" अकसर लोकसेवक मिथ्याभिमानको स्वाभिमान मानकर अुद्वेगकारक व्यवहार करते है। परन्तु बापू दूसरेसे अुपकार करानेमें अधिक अपमान समझते थे।

१९३

अजमेर मेरवाडेमें कुछ ही समय पहले किसी सार्वजनिक समारोहका सभापतित्व करने अेक प्रसिद्ध राजपुरुष आये थे। अुनका आतिथ्य करनेवाले कुछ कांग्रेसी कार्यकर्ताओंने अुन्हे मद्यपान करने देना तो अुन्हे बडा असन्तोष हुआ। अेक रोज मैंने सेवाग्राममें सैरके समय अिस घटनाका जिक्र करके बापूसे पूछा "आप छोटे कार्य-

कर्ताओंके साथ तो अितनी सख्ती करते हैं परन्तु अिस तरहके बडे लोगोंके खिलाफ कुछ भी कार्रवाअी क्यो नही करते?" बापूकी आदत थी कि जब कोअी प्रश्न अुनके खयालसे अच्छा होता, तब अुसे अच्छा बताये बिना नही रहते थे। अिस सवाल पर भी अैसी ही राय ज़ाहिर करते हुअे अुन्होने कहा, " तो शराब ही नही पीते, दुश्चरित्र भी हैं। मगर मैं क्या करू? अरसेसे हमारी राजनीतिमें भी यह पाश्चात्य परिपाटी पड गअी है कि व्यक्तिकी खानगी जिन्दगी और सार्वजनिक जीवन अलग अलग चीज हैं। मैंने अिस परिपाटीको तोडनेकी बहुत कोशिश की, मगर मैंने हार मान ली, क्योंकि अिसमें बडेसे बडे कार्यकर्ता मेरे कडे विरोधी हैं। शामको शराबकी बोतल और वेश्याको लेकर बग्घीमे सैरको निकलते थे, मगर किसीकी मजाल नही थी कि अुन्हे कुछ भी कहता। क्योंकि वे बडे दबग आदमी तो थे ही, साथ ही अुस समय जनताके प्रमुख सेवक भी थे। पुरानी बातोंको छोड दो। अभी अभीकी ताजी घटना सुनाअु। अुस दिन व्यक्तिगत सत्याग्रहके लिअे मैंने विनोबाको प्रथम सैनिक चुना और अुनके परिचयमें ये शब्द रखे कि अुन्होने कभी किसी स्त्रीको छुआ तक नही है, तो मुझे वह वाक्य निकाल देना पडा, क्योंकि ने विरोध किया। का आग्रह मैं टाल नही सकता। यह है हमारे राजनीतिक क्षेत्रकी हालत! यही गनीमत समझो कि काग्रेसने मेरा शराववन्दीका कार्यक्रम स्वीकार कर लिया और अुसके अनुसार बहुत लोगोंने मद्यपान छोड दिया। मगर मुझे खानगी जीवनकी शुद्धताको राष्ट्रीय कार्यक्रमका अग बनानेमे अिससे अधिक सफलता नही मिली। अिसलिअे मैंने यह मर्यादा बना ली है कि अिस विषयमें अपने साथियो अर्थात् अपनी संस्थाओंके कार्यकर्ताओंके प्रति कडाअी रखू और दूसरोंके प्रति नरमी।" अपनोंके प्रति बापूकी यह कठोरता और दूसरोंके साथ अुदारता कल्याणकारी ही सिद्ध हुअी। साथ ही यह भी सही है कि बापूके प्रयत्नसे सार्वजनिक जीवनमें काफी पवित्रता आअी और अपवित्र साधनोंका खुला समर्थन या अुपयोग करनेमें सार्वजनिक लोगोंको शर्म-सी महसूस होने लगी है।

१९४

अिन दिनों राजस्थान और अजमेरके सम्बन्धमें किसी कार्यकर्ता या राष्ट्रीय कार्यक्रमका कोअी मामला बापूके पास आता तो वे अकसर मुझसे भी पूछ लेते थे। अेक दिन व्यक्तिगत सत्याग्रहके सिलसिलेमें अेक काग्रेस पदाधिकारी सत्याग्रहके अुम्मीदवारोंकी सूची लेकर बापूको दिखाने आये। ये सूचिया बापूसे मजूर करा लेना जरूरी था। देशभरके प्रमुख कार्यकर्ताओंके प्रत्यक्ष सम्पर्कमें आनेका अुनका यह अेक तरीका भी था। बापूने सूची मुझे देकर पूछा "कुछ कहना है?" मैंने कहा "आपकी शर्तोंके अनुसार तो अिस फेहरिस्तमें सिर्फ तीन ही नाम योग्य हैं।" अुन्होने पूछा "यह कैसे?" "अिसलिअे", मैंने अुत्तर दिया, "कि बाकी लोग पहननेके कपडेके सिवा दूसरा कपडा खादीका ही काममें नही लेते और अुनके आश्रित तो खादी पहनते भी

नहीं।' पदाधिकारीने प्रश्न किया, "परन्तु क्या यह जरूरी है?" "बेशक", बापूने जवाब दिया। ऐसी शर्तों द्वारा जहां बापू देशभक्तोंके सेवाभाव या महत्त्वाकांक्षासे लाभ उठाकर खादी आदिका प्रचार करते थे, वहां संख्याकी परवाह न करके योग्यता पर ही अधिक जोर देते थे।

१९५

अेक रातको दस बजे डॉ० सुशीला नय्यर जगाने आयीं। कहा, "बापू याद कर रहे हैं।" मैं पहुंचा तो अेक तार हाथमें देकर पूछने लगे, "अिन्हें जानते हो कौन हैं? कैसे आदमी हैं? क्या मैं अिस मामलेमें पड़ूं?" तार माणिक्यलालजी वर्माकी पत्नी नागयगी बहनका था। माणिक्यलालजी अुन दिनों मेवाड़ राज्यके बन्दी और बीमार थे। तारमें अुनके मामलेमें हस्तक्षेप करनेको कहा गया था। मैंने कहा, "माणिक्यलालजी वर्षों तक मेरे साथी रहे हैं। बिजौलियामें पथिकजीके मुख्य शिष्य और सहायक थे। अहिंसाको तो पूरी तरह नहीं मानते, मगर किसानों और गरीबोंके सच्चे सेवक हैं। मेरी रायमें आपको सहायता अवश्य देनी चाहिये।" सुबह होते ही बापूने मेवाड़के दीवानको, जो अुस समय श्री टी० विजयराघवाचार्य थे, तार दिया कि मेरी सलाह है कि माणिक्यलाल छोड़ दिये जायं। अुसी दिन स्थानापन्न दीवान श्री प्रभासचन्द्र चटर्जीका अुत्तर आ गया कि आपका तार श्री विजयराघवाचार्यके पास, जो छुट्टी पर मद्रास गये हुअे हैं, भेज दिया गया है। अेक सप्ताहके भीतर माणिक्यलालजी रिहा कर दिये गये। अिस प्रकार अज्ञात किन्तु प्रामाणिक कार्यकर्ताओंकी सहायता करनेको बापू सदा तैयार रहते थे।

१९६

काठियावाड़के अेक प्रसिद्ध कार्यकर्ता जापानसे लौटे थे। वे कुछ व्यक्तिगत कारणोंसे सार्वजनिक प्रवृत्तियोंसे हटकर विदेश चले गये थे। जापानकी खेती पर वे कोअी पुस्तक भी लिखकर लाये थे। अुसकी प्रति बापूको भेंट करना चाहते थे। बापूसे मिलना भी चाहते थे और शिक्षक भी थे। मेरे सुपरिचित थे। मुझसे सलाह ली। मैंने कहा, 'अगर सार्वजनिक जीवनमें फिरसे आना चाहते हों तो या तो अुनसे सलाह न मांगिये या फिर वे जो सलाह दें अुस पर चलिये।" "मगर बापू स्वयं ही कुछ पूछ दें और सलाह दे दें तो?" अुन्हें शंका हुअी। मैंने अुत्तर दिया, "यदि मैंने बापूको ठीक तरह समझा है तो वे अपने आप अिस विषयको न छेड़ेंगे और न कोअी राय ही देंगे। आप अुनके दर्शन करके जापानकी बात करके चले आअिये। वे सेवक कुशल पूछेंगे और अिसी विषय पर बात करेंगे।" मेरा अनुमान बिलकुल सही निकला। बापूका शौक था कि मैं किसीका काजी नहीं हूं। अिस कौमकी वे पूरी पाबन्दी करते थे।

१९७

नियमित रूपसे बापू 'बॉम्बे क्रानिकल' और 'टाअिम्स ऑफ अिंडिया' शुरूमे पढ़ते थे। अेकको राष्ट्रीय गतिविधिसे और दूसरेको विरोधी पक्षसे परिचित रहनेको देखते थे। दोनों बापूके मुख्य कार्यक्षेत्र गुजरात और काठियावाड सम्बन्धी प्रमुख पत्र थे। सेवाग्राम आनेके बाद वे 'नागपुर टाअिम्स' पर भी अेक नजर डाल लेने लगे थे। साप्ताहिकोमे वे श्री नटराजनके 'अिंडियन सोशयल रिफार्मर' का अग्रलेख और मासिकोमें रामानंद बाबूके 'माडर्न रिव्यू' की सम्पादकीय टिप्पणिया अवश्य देखते थे। मगर अखबारों पर वे आधा घंटा सेजसे ज्यादा वक्त खर्च नही करते थे। वे दोपहरके भोजनके बाद लेटे लेटे समाचारपत्रका अवलोकन करते थे, शीर्षकों पर दृष्टिपात कर जाते थे और कोअी महत्त्वपूर्ण समाचार या बयान होता तो अुसे पढ लेते थे। अिसीमे अुन्हे नींद आ जाती थी।

परन्तु पत्र-पत्रिकाअें तो पुस्तकोंकी तरह अुनके पास भेटस्वरूप दुनिया-भरसे ढेर सारी आती थी। अुन्हे देखकर अुनकी दिलचस्पीकी कतरनें काटकर देना मेरा काम था। अिन्हे वे अपनी 'लाअिब्रेरी' (शौचालय) मे पढते थे। विहगम दृष्टि भी अुनकी अितनी पैनी थी कि कभी कोअी महत्त्वपूर्ण घटना सम्बन्धी कतरन रह जाती तो फौरन टोक देते थे।

१९८

अेक दिनकी बात है कि हैदराबाद (दक्षिण) के बारेमें किसी अखबारमें समाचार छपा था कि निजामके किसी अिलाकेमें कुओंके पानीसे बहुतसी मृत्युअें अेक साथ हुअी है। समाचारमें कहा गया था कि वह प्रदेश सरकश माना जाता है, अिसलिअे सन्देह किया जाता है कि पानीमे जहर मिलाया गया है और अुसमें राज्याधिकारियोका हाथ है। अिसकी कतरन मैंने बापूके सामने रखी तो सही, परन्तु डरते डरते। मैंने अुन्हें अपना सकोच बताया तो कहने लगे, "अैसे समाचार मुझे जरूर बताया करो। हिंसा और असत्यकी राजनीतिमें यह सब हो सकता है। हम अैसी चीजोकी अुपेक्षा नही कर सकते। हमी अुनको हाथमें लेनेका साहस नही करेंगे तो कौन करेगा? हा, हमें यह सावधानी जरूर रखनी चाहिये कि बिना जाच किये कोअी प्रकाशन करके या राय देकर हमारे हाथो किसीके प्रति अन्याय न हो जाय।" जहा तक मुझे याद है बापूने हैदराबाद राज्यको अिस सम्बन्धमे पत्र लिखा था और फिर 'हरिजन' में कुछ लिखा भी था।

१९९

. . . के चरित्रदोषके बारेमें अुनके आश्रमके अेक कार्यकर्ताने अुनके वरिष्ठ अधिकारीको शिकायत लिखी थी। आरोप यह था कि अधिकारीने जाच तो की, परन्तु शिकायत करनेवालेकी जानकारी या मौजूदगीमें नही की और फैसला दे दिया। अिस पर अुने असतोष हुआ और अुसने अपना असतोष बापू तक पहुचा दिया। बापूने मैरके समय मुझसे जिक्र किया तो मुझे कुछ कहनेमें झिझक हुअी। तब बापू कहने लगे, "मै तुम्हारा सकोच समझ सकता हू। तुमसे न भी पूछता, मगर मेरी मुश्किल यह है कि किशोरलालभाअीसे कहता हू तो अुन्हे अिस तरहकी घटनाओसे बहुत आघात लगता है। जमनालालजी सबसे ठीक रहते, मगर वे तो चले गये। महादेव भी नही रहे। मुझे स्वय अितना समय नही कि खुद जाच करू।" मुझे लाचार होकर जितना मालूम था कहना पडा। सुनकर बापूका चेहरा अेकदम गमगीन हो गया और अेक सर्द आह भरकर कहा, "अिस तरहके दोष कार्यकर्ताओसे अितने हो रहे है, और बडे-बडे कार्यकर्ताओसे हो रहे है कि कभी कभी मैं निराश होने लगता हू। अितना तो मै सोचने ही लगा हू कि अिस दिशामें मेरा जो अेक बडा और लम्बा प्रयोग चल रहा है वह सफल होता दिखाअी न दिया, तो अिधरसे शक्ति बचाकर अधिक जोर हिंसाके विरोधमें ही लगाअू। मुझे खतरा यही दिखाअी देता है कि कहीं मेरा रवैया प्रगट होगा तो हमारी अपनी सस्थाओमें दभकी वृद्धि न हो। अिस मामलेमें मुझे भारी दभ मालूम होता है। मै दभको सबसे खतरनाक बुराअी समझता हू, क्योकि दभी आदमीके सुधरनेकी गुजाअिश नही होती।" अिस सवादके बाद के आश्रमके अेक कार्यकर्ता मेरे पास भी अेक पुलदा के दुराचरणके प्रमाणोका लेकर आये थे। अिनमें के पिताके आक्षेप और कुछ बहनोके पत्र भी थे। मगर मैंने अुस भाअीको प्रोत्साहन नही दिया, क्योकि मुझे बापूका सवाद याद था।

२००

मुझे बहुमूत्र रोगका सन्देह हो गया था। बापूको मालूम होते ही मेरे आहार पर प्रतिबध लगा दिये। चावल और अधिक शकरवाले फल बन्द कर दिये। प्यारेलालजीने सूखे फलोका सुझाव दिया। मैं लेने लगा। बहनको अिसमें अमीरी नजर आअी। अुन्होने मुझे कडवी बात कह दी। किसीने यह खबर बापूको दे दी तो मुझसे कहने लगे, ". का दिल साफ है। मेवाभावका तो कोअी पार ही नही। मेरे आरामके पीछे पागल-सी रहती है। अपने शरीरकी जरा परवाह नही करती। बडे घरकी लडकी होकर भी गरीबोकी तरह खाती, पहनती और रहती है। परन्तु जबान अुसकी कुल्हाडी है। अुनके प्रहार मुझ पर ही होते रहते है तो और किसीकी तो बात ही क्या? बुरा न मानना। सह लेना।" मेरा सारा क्षोभ काफूर हो गया। अुधर अुन बहनको भी कुछ कहा होगा, क्योकि अिनके बाद अुन्होने मुझे कोअी कटु बात नहीं कही।

२०१

" तो आश्रमका साड है।" यह वाक्य अेक दिन सुबहकी सैरको आश्रमसे निकलते निकलते बापूने कहा। कारण यह था कि भाओी किसी पर बिगड रहे थे और बडे जोर-जोरसे बोल रहे थे। मैंने कहा, " भाओी अपने नियमोका पालन करानेमें जितनी कडाओी दूसरोके साथ करते है, अुतनी दूसरोके नियम स्वय पालन करनेमें नही करते। वे पुस्तकालयसे बिना पूछे ही नही, मना करने पर भी अखबार और किताबें अुठा ले जाते है।" "हा, यह दोष भी अुसमें है। परन्तु सबसे बडी कमजोरी है अुसका क्रोधी स्वभाव। जब आवेश आता है तो मुझे भी नही बख्शता। मगर अुसमें अिन अवगुणोकी तुलनामें गुण बहुत भरे है। परिश्रमी गजबका है। वह ब्रह्मचर्यका वीर साधक है। धुनका पक्का, अत्यन्त निर्भीक और साहसी है। किसीकी सेवा करता है तब अपनेको भूल जाता है। खर्च कम करनेमें तो अुसकी जोडके बहुत ही कम कार्यकर्ता है।" अिस प्रकार बापू दोषदर्शनकी अपेक्षा गुणोको अधिक देखते, अुनकी वैसी ही कद्र करते और विविध शक्तियोका लोकसेवामें अुपयोग करते थे।

२०२

मालिश बापू रोज कराते थे। मगर अुस समयका भी कभी तरहसे दोहरा अुपयोग कर लेते थे। अेक दिन मुझे भी कोओी जरूरी काम हो गया तो मालिशके समय बुला लिया। मैंने देखा कि वे कुछ जरूरी कागजात पढ रहे है। मालिशके समय वे नीदकी कसर भी पूरी कर लेते थे। नीद लेनेमें तो वे अितने पक्के और सधे हुअे थे कि दक्षिण भारतकी हरिजन-यात्रामें मोटरके सफरमें भी सो लेते थे। कभी कभी तो जब चाहते दस-पाच मिनटकी झपकी भी ले सकते थे।

२०३

सवाददाताओसे मुलाकात करते समय बापू बडे जागरूक रहते थे। अुनका आग्रह होता था कि मुलाकातकी रिपोर्ट अुन्हे दिखाकर भेजी जाय। कभी कोओी गलत रिपोर्ट प्रकाशित हो जाती, तो सवाददाताको अुलहना दिये बिना न रहते। कोओी पत्र-प्रतिनिधि भूल स्वीकार न करता और मुआने पर भी अुसे न सुधारता तो अुससे फिर भेंट नही करते। कभी विदेशी अखबार तो समूदी तारमें प्रश्न और अुत्तरों लिखे रुपया भेजकर सामयिक समस्याओ पर अुनके विचार प्राप्त किया करते है। अिन प्रेस तारोको कमसे कम शब्दोमें भेजनेकी कला अुन्होने अितनी सिद्धहस्त कर ली थी कि अेक भी फालतू शब्द नही आता था। जाने और तारसे समाचारो भी वे जहा जाते जानकारी कर लेते थे और समाचार पहले भेजनेका ध्यान रखते थे।

'यंग इंडिया' और 'हरिजन' पत्रोंके लेख वे सफरमें भी ठीक समय पर भिजवा देते थे। रेलगाडीके समयोंकी जानकारी और पाबन्दी भी जितनी तरह करते थे और कहां, किस समय, किस गाडीका सम्बन्ध मिलेगा, यह अुन्हें खूब याद रहता था। मैं जब हरिजनयात्रामें मद्राससे अजमेर लौटा, तो मुझे ठेठ तकके कनेक्शन जितने नहीं बता दिये कि मैं दंग रह गया। और रास्तेमें मुझे कहीं पूछनेकी जरूरत नहीं पडी।

२०४

प्रश्न तो मैं भूल गया हूं, परन्तु कोअी आध्यात्मिक चर्चा थी। मेरी जिज्ञासा पर बापू लम्बा विवेचन कर रहे थे। मैं अुनके हर वाक्य पर 'जी' कहता जाता था। बीचमें कहीं ध्यान अिधर-अुधर चला गया होगा या बात समझमें नहीं आअी होगी, मैं चुप हो गया। बापू भी तुरन्त रुक गये और बोले, 'क्यों क्या हुआ? शंका हो या कुछ न समझे हो तो खामोश न रहकर पूछ लेना चाहिये। गीतामें ज्ञान-प्राप्तिके तीन साधन बताये हैं, प्रणिपात, परिप्रश्न और सेवा। प्रश्न करनेमें संकोच नहीं करना चाहिये और जब तक बात पूरी तरह समझमें न आये, पूछते ही रहना चाहिये। चुप हो जानेमें अेक तरहका असत्य है। सुननेमें भी ध्यान पूरा रखना चाहिये। अन्यथा अुसमें असभ्यताका दोष होता है।' बापू जितने धीरजके साथ ज्ञान-दान करते थे, अुतनी ही अेकाग्रताकी तालीम भी साथ साथ देते रहते थे।

२०५

बापू व्याकरणके बडे भक्त थे। वे भाषाके शुद्ध ज्ञानके लिअे व्याकरणको बहुत महत्त्व देते थे और वैज्ञानिक जानकारीके लिअे अुसे अनिवार्य मानते थे। 'हरिजन' के मेरे अनुवादसे खुश होकर अुन्होंने मुझे भाषाशास्त्रीकी पदवी दे डाली और मुझे आदेश दिया कि 'सैरके समय जब मैं हिन्दीमें बात करूं तो मेरी गलतियां वहीं और तत्क्षण सुधार दिया करो।' अिससे पहले मुझे वे हिदायत कर चुके थे कि 'हरिजनसेवक' के लिअे लिखे जानेवाले मूल हिन्दी लेखों और टिप्पणियोंकी भाषा मैं देख लिया करूं और जहां जरूरत हो, भाषा ठीक कर दिया करूं। अिसे तो मैंने मान लिया, मगर यह नया हुक्म मेरे लिअे बडी परेशानी करनेवाला था। अितने महान व्यक्तिकी और बड़े-बड़े आदमियोंके सामने टोकना मुझे बिलकुल नहीं जचा। मगर बापू कहां माननेवाले थे? झूठी शर्म या मान अुन्हें छू तक नहीं गअी थी। कहने लगे, 'जहां ज्ञान है वहां बच्चा भी गुरु है। अिससे नम्रतामें मेरी भाषा सुधर जायगी और अिसके लिअे अलग समय भी नहीं देना पडेगा।' मैं मजबूर होकर मगर कजूसीके साथ अपनी नअी ड्यूटी बजाने लगा। अेक दिन किसी वाक्यमें अुन्होंने 'मैंने बोला' शब्दप्रयोग किया। मैंने कहा, 'मैं बोला' होना चाहिये। बापूने कहा, 'क्यों, कोअी नियम हो तो बताओ।' व्याकरणका तो मुझे भी बहुत शौक था, मगर बचपनका

अभ्यास बहुत पहले छूट गया था। मुझे अुत्तरमें कुछ समय तो लगा, मगर नियम बनाकर बताना पड़ा कि 'सकर्मक क्रियाओंके ही साधारण भूतकालमें कर्तरि 'ने' प्रत्यय लगता है। अकर्मक क्रियाओंके नहीं लगता।' तब कहीं बापूका समाधान हुआ। अुसके बाद तो जब मैं बापूके किसी वाक्यमें शुद्धि करता, तो पहले मन ही मन नियम याद करके या घड़ कर तैयार कर लेता था।

२०६

जिसी सिलसिलेमें अेक मजेदार और खासकर राजेन्द्रबाबूकी बालोचित सरलता और सीखनेकी वृत्तिका अेक किस्सा याद आ रहा है, जो डूंगरपुरके महारावल साहबने सुनाया था। बात यूं हुअी कि भारतके आजाद होने पर राजाओंसे शर्तें तय करनेके लिअे अेक समझौता समिति (Negotiating Committee) नियुक्त हुअी थी। अुसमें कांग्रेसकी ओरसे नेहरूजी, सरदार, मौलाना और राजेन्द्रबाबू थे। राजाओंके नुमाअिन्दोंमें डूंगरपुरके महारावल भी अेक थे। वे राजेन्द्रबाबूके पास ही बैठते थे। अुन्होंने चारों नेताओंका वर्णन अेक अेक वाक्यमें अिस तरह किया "नेहरूजी सच्चे आदमी हैं। अेक दिन अेक बात कहेंगे और भूल हुअी होगी तो दूसरे दिन दूसरी बात कहकर सुधार लेंगे। मौलाना शानदार आदमी हैं। राजाओंने जब अपनी कठिनाअियों पर अधिक जोर दिया तो कहने लगे, 'राजा साहबान, हमारी मुश्किलातका भी तो खयाल फरमाअिये। हमें सोशियलिस्ट साथी क्या कहेंगे?' सरदार मजबूत आदमी हैं। जो बात कहेंगे खूब सोचकर मुहसे निकालेंगे और फिर अुस पर डटे रहेंगे। राजेन्द्रबाबू सरलताकी मूर्ति हैं। मुझसे कअी बार पूछा, 'महाराज साहब, अिसका क्या मतलब है?' मुझे बड़ा संकोच हुआ। मैंने कहा, 'मैं तो आपके सामने बच्चा हूं, मैं आपको क्या समझाअूं?' बोले, 'नहीं, नहीं, अिसमें कोअी हर्ज नहीं। मुझे जो नहीं आता पूछ लेता हूं। आपको आता हो तो बता दीजिये।'"

२०७

१९४० या १९४१ की बात होगी। अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष मद्रासके डॉ० लक्ष्मीपति बापूसे मिलने आये हुअे थे। अुनके खयालसे बापूको गलत-फहमी-सी थी। अुसीको दूर करने वे आश्रममें कुछ दिन ठहरे थे। सुबह-शामकी सैरके वक्त बापूसे बातें होती। बापू मानते थे कि आयुर्वेदकी चिकित्सा अधिक प्राकृतिक, सस्ती और स्वदेशी तो है, पर विज्ञानकी दृष्टिसे अुसकी प्रगति रुक गअी है और आम तौर पर और शल्य-विद्या (सर्जरी) में खास कर वह अेलोपैथीका मुकाबला नहीं कर सकती। डॉ० लक्ष्मीपतिका दावा था कि आयुर्वेद अब भी रोगोंके अिलाजमें किसी और चिकित्सा-प्रणालीसे कम कारगर नहीं है। कुछ दवाअें तो अुसकी अैसी अक्सीर हैं कि किसी दूसरे आरोग्यशास्त्रमें पाअी नहीं जाती। राज्याश्रय

या प्रोत्साहनके अभावमें अुसका विकास रुक गया है, जो काफी माली मदद मिलनेसे अब हो सकता है। बापूने कहा, "मैं कुछ मरीज आपके हवाले करता हू, अुन्हें अच्छा कर दीजिये। खोजके लिअे साधन चाहिये तो सेवाग्राममें आपको जगह भी दे सकता हू और रुपया भी। आप खोज व प्रयोग करके अपना दावा सिद्ध कीजिये। मैं अपनी राय बदल लूगा।" कोअी शोधशाला खोलनेका विचार भी हुआ, पर वह कार्यान्वित नही हुआ। बहरहाल, बापू अपने विचार प्रयोग-सिद्ध अनुभवसे बदलनेको सदा तैयार रहते थे।

२०८

स्वच्छताके मामलेमें बापू बडे कट्टर थे। आदर्श सफाअीकी बात करते हुअे अक्सर वे पाखाने और भोजनालयका साथ साथ जिक्र करते थे और कहते थे कि दोनो ही जगह अेक भी मक्खी नही होनी चाहिये। अिसके लिअे जालियो और फिनाअिल वगैराके खर्चीले साधनोंके बजाय वे सफाअी पर ही जोर देते थे। गरीब देश और अुसके गरीब निवासियोके अल्प सामर्थ्य और प्रमुख हितकी बात सदा अुनके ध्यानमें रहती थी। छूतकी बीमारियोकी रोकथामके लिअे तो अिस दोहरी सफाअीको वे अनिवार्य ही मानते थे। अुनकी संस्थाओमें अैसी ही सफाअी रखी भी जाती थी। मगर अुनके हर कामकी तरह अिसमें भी साधनोकी अपेक्षा किफायत और मेहनतके स्वावलम्बी तरीकेको ही अधिक महत्त्व दिया जाता था।

२०९

युद्धकालीन व्यक्तिगत सत्याग्रह छेडनेसे पहले वायसरायका बुलावा आया था। वे जल्दीसे जल्दी बापूसे दिल्ली या शिमलेमें मिलना चाहते थे। यह प्रस्ताव था कि बापू हवाअी जहाजसे पहुचें या विशेष रेलगाडीसे। बापू दोनो ही प्रस्ताव नामजूर करके मामूली ट्रेनमें गये। अुस अवसर पर अुन्होने अिस आशाके अुद्गार प्रगट किये थे "मैं टेलीफोन नही चाहता, पर घनश्यामदासने लगवा दिया। सडक नही चाहिये थी, सो मध्यप्रदेशकी सरकारने बर्धासे सेवाग्राम तक बना दी। मोटर नही चाहिये, मगर जमनालालजी नही मानते। लोग प्रेमसे सुविधायें दे देते है तो ले लेता हू। परन्तु हवाअी जहाज या स्पेशल ट्रेन तो मैं अपने लिअे हरगिज बरदाश्त नही कर सकता। आखिर तो खर्चका यह भार गरीबो पर ही पडेगा न? और मैं अेक दिन देरसे पहुचा तो कोअी प्रलय नही हो जायगा। काल-प्रवाह यो ही चलता रहेगा, अिसे कोअी कम-ज्यादा नही कर सका। गति बढ जानेसे ससारका कोअी भला हुआ हो, सो बात भी नही। फिर क्यो अेक नअी व्याधि मोल लू?"

२१०

दिल्लीकी बात है। बापू डॉ० असारीके दामादके यहा ठहरे हुअे थे। मै अपने अेक रिश्तेदार युवकको मिलाने ले गया था। अुस पर समाजवादी विचारधाराका प्रभाव था। परिचयके बाद वह पूछ बैठा, "बिडला अिधर मिल चलाते है और मजदूरोका शोषण करके करोडो रुपया कमाते है और अुधर आपको लाख-पचास हजार सालाना दे देते है और खादी पहन लेते है। क्या यह ढोग नही है?" "हम अैसा क्यो समझें?" बापू बोले, "जो जितना अच्छा करे अुतना ही धन्यवादका पात्र है। दूसरे पूजीपति तो अितना भी नही करते। अुनसे तो अच्छे ही है।" बापू गुणग्राहक थे और अपनी अिस वृत्तिसे अपने सदुद्देश्योके लिअे अनेक सहायक पैदा कर लेते थे।

२११

दीनबन्धु अेण्ड्रूज और बापू अेक दूसरेके घनिष्ठ मित्र थे। आपसमे 'चार्ली' और 'मोहन' के नामसे सम्बोधन करते थे। अेक बार सेवाग्राम आये तो लम्बा कुर्ता, जिसका अपरका बटन खुला हुआ था और चौडी काली किनारकी धोती बगाली ढबसे पहने हुअे थे। मोटरसे अुतरते ही मैंने अुन्हे देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ और बापूको खबर दी कि दीनबन्धु तो जनानी धोती पहने हुअे है। अितने ही में दीनबन्धु आ पहुचे। देखते ही बापू बोले, "चार्ली, आज यह भेस कैसे?" "क्यो, क्या हुआ?" अेण्ड्रूज साहबने विस्मयसे पूछा। "हुआ क्या, रामनारायण कहते है, अैसी धोती तो स्त्रिया पहनती है।" अिस मीठे व्यगका अुत्तर भी दीनबन्धुने वैसा ही रसीला दिया, "मुझे भी तो अपने मोहनके पास आना था!" दो बुजुर्गोका यह विनोद-व्यापार अेक अजीब दृश्य था। बापूका कहना सच था कि अगर अुनमें जिन्दा-दिली न होती तो अितनी झझटोके बीच जिन्दा ही नही रह सकते थे या कमसे कम पागल जरूर हो जाते।

२१२

सन् १९४० में बापूका जन्मदिवस था। सुबह आठ नौ बजेका समय होगा, वर्धासे महिलाश्रमके शिक्षक-शिक्षिकाअें और छात्राअें बापूको प्रणाम करने और अुनकी दीर्घायुकी कामना करने आयी हुअी थी। शायद अुससे कुछ ही दिन पहले बापू जिन्नाह साहबसे असफल वार्तालाप करके बम्बअीसे लौटे थे। लडकियोको प्रवचन करते हुअे अुन्होने ससारमें हिंसाकी शक्तियोके बढते हुअे बलका गभीर चित्र खीचते और देशकी समस्याओ पर विचार प्रगट करते हुअे कहा, "मुझे अहिंसाके सामर्थ्य पर अटूट विश्वास है। मुझे भरोसा है कि किसी न किसी दिन सत्याग्रह अग्रेजो तकका हृदय-परिवर्तन कर देगा। राजाओका तो करेगा ही। मगर जिन्नाह साहब तो हिंसाकी मूर्ति है। अुनका दिल बदलनेकी आशा नही होती।" अिन अुद्गारोको सुनकर अुस समय

तो मेरा जी दहल गया, परन्तु बादके हालातने साबित कर दिया कि बापू मानव-चरित्रको कितना अच्छी तरह पहचानते थे।

२१३

. बहनकी सगाई. से तय हो गई थी। वे कालेजकी छुट्टियोंमें सेवाग्राम आश्रम आई हुई थीं। अुनके भावी पतिका पत्र डाकसे आया तो किसीने अुड़ा लिया। अुन्होंने बापूसे शिकायत की। बापू अैसी घटनाओंसे बड़े अुद्विग्न हो अुठते थे। अुन्हें अपनी अेक निकटतम आश्रमवासिनी पर सन्देह हुआ और अुसे अुन्होंने अुस महिला पर प्रगट भी कर दिया। परन्तु सन्देह सही नहीं था, जिसलिअे अुन्हें बहुत दुःख हुआ। अिस पर बापूको भी बड़ा पश्चात्ताप हुआ। अुसे शामको अुन्होंने प्रार्थना-सभामें अिस प्रकार प्रगट किया. " का पत्र चोरी जाना गंभीर घटना है। अुस पर तो मैं अुपवास भी कर सकता था। मगर बीचमें मेरा ही अपराध हो गया। मुझे पर शक नहीं करना चाहिये था। मैं अुससे क्षमा मागता हू। साथ ही चेतावनी देता हूं कि अिस प्रकारकी घटना फिर हुअी तो मुझे कड़ी कार्रवाअी करनी होगी। लेकिन हमें किसीकी चौकीदारी भी नहीं करनी चाहिये। हमें तो मनुष्यके अच्छेपन पर विश्वास रख कर ही चलना शोभा देता है। चौकीदारी करके अपराध सिद्ध हुअे बिना पहले ही हम किसीको अपराधी मान लेते है, तो हम स्वय अपराधी बन जाते है और अुस पर अुल्टा असर होता है।" बापूकी नम्रता अैसी जबरदस्त थी कि वे अपना जरासा दोष भी सार्वजनिक रूपमें स्वीकार कर लेते और अुसका खुला परिमार्जन करते थे।

२१४

बहन के वीरोचित गुणोंसे मुग्ध होकर अुनसे विवाह करने पर अुतारू हो गअी। बापूके सामने प्रस्ताव रखा तो अुन्हें दुःख हुआ कि अितनी आयु, तपस्या व त्यागवाली स्त्री अिस प्रकार बह जाय। अुन्होंने प्रस्ताव पसन्द नहीं किया। बहनको निराशाने गहरा आघात पहुचा। अुन्होंने खाना-पीना छोडकर रुदनका आश्रय लिया। मैं अुन्हें हिन्दी पढाता था। अुनकी यह हालत हुअी तो मेरी हमदर्दी हुअी। मैंने पूछा तो अुन्होंने सब हाल कहा और अपना पूर्व अितिहास भी सुना दिया। मुझे अनधिकार चेष्टाका भय तो हुआ, परन्तु भावुकतापूर्वक बापूसे पूछा तो अुन्होंने मेरी बात सुनकर कहा, "तुमने अच्छा किया कि मुझे सब कुछ बता दिया। मैं अिसे प्रेम नहीं मानता। . विकारवश मूर्छित अवस्थामें है। और अुसे यह भी भान नहीं कि दूसरा पक्ष तो तैयार ही नहीं है। खैर, यह दौरा जल्दी ही खतम हो जायगा। अभी तो किसीको अुसे कुछ भी नहीं कहना चाहिये। तब तक तुम भी पढाने न जाओ।' बापू अपने पथ-विचलित नजदीकी साथियोंकी भी अैसे मामलेमें रियायत नहीं करते थे और अुन्हें सही रास्ते पर लानेमें खूब कठाअीसे काम लेते थे।

२१५

अेक बार श्रीमती रामेश्वरी नेहरू बापूसे मिलने सेवागाम आअी थी। नाश्ते पर मुलाकात हुअी तो कहने लगी · "हरिजन-सेवक-संघका राजपूतानेका काम ठप हो रहा है। मैं चाहती हू कि आप फिरसे सभाल लें। दिल्ली पसद हो तो वहा आ जाअिये।" मैंने कहा, "मैं तो बापूके हाथमें हू। वे जैसी आज्ञा देंगे वही करूगा।" अुन्होंने बापूसे बात की। बापूने अिन्कार कर दिया "अभी रामनारायणका स्वधर्म मेरे पास ही रहकर काम करनेका है।" बापू बार बार काम बदलनेको परधर्म मानते थे और अुसके लिअे अनिवार्य अवस्थाके सिवा तैयार नही होते थे।

२१६

अेक बार बापू कही बाहर सफरमें जा रहे थे। डॉ० सुशीला नय्यर अुन दिनो बापूके साथ ही रहती थी और जाती-आती थी। अिस बार बापूने अुन्हे सेवाग्राम ही ठहरनेको कहा। सुशीलाबहनको बडी निराशा हुअी और अुन्होने साथ जानेका यहा तक आग्रह किया कि "यदि मैं आपके साथ नही रह सकू तो मेरा आश्रममें रहना व्यर्थ है।" बापूको अिसमें निरा मोह दिखाअी दिया और मोहका पोषण वे किसीमें भी करनेको हरगिज तैयार नही थे। सुशीलाबहनको बहुत दु ख हुआ, परन्तु बापू अन्त तक चट्टानकी तरह दृढ रहे और जो बात अुन्हे अनुचित और हानिकारक लगी अुसे माना ही नही।

२१७

अेक दिन मुझे कुछ जरूरी बात करनी थी। भोजनसे अुठते अुठते वह शुरू हुअी तो मैं सकोचवश ठिठक कर पीछे रह गया। मगर बापूमें तो अपना अेक अेक मिनट बचाते हुअे भी दूसरेकी आवश्यकता पूरी करनेकी वृत्ति और कला थी। कहने लगे, "नही, नही, कुछ रास्तेमें बात हो जायगी, बाकी झोपडेमें मुह-हाथ धोते-धोते पूरी कर लेंगे।" वहा पहुचकर देखा तो अेक छोटी-सी लुटिया है, जिसमें कोअी पाव भर पानी होगा। अुसीसे सब काम पूरा कर लिया और बडी खूबी और सफाअीके साथ कर लिया। मैंने कअी बार लोगोके बीचमें बैठकर भी अुन्हे मुह-हाथ धोते देखा, पर मजाल क्या कि अेक छीटा भी अिधर अुधर बिखर जाय। अितनी किफायत, कुशलता, सुरुचि और सफाअीसे वे अपनी छोटी-छोटी क्रियाअे भी करते थे।

२१८

राजस्थानके वर्तमान मुख्यमंत्री भाऊ जयनारायणजी व्यास अुन दिनों जोधपुर म्युनिसिपैलिटीके अध्यक्ष थे। कर्नल फील्ड राज्यके मुख्यमंत्री या यों कहिये कि सर्वेसर्वा थे। अंग्रेज पोलिटिकल अफसर राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं और खासकर रियासती लोकसेवकोंसे विशेष नाराज रहते थे। व्यासजी जैसे सेवकको अुनकी ओरसे कठिनाअी होना कोअी आश्चर्यकी बात नहीं थी। मामूली कठिनाअियोंसे वे घबरानेवाले जीव भी नहीं थे। मगर जब तंग आ गये तो अुन्हें बापूकी सलाह व सहायताकी आवश्यकता महसूस हुअी। अुनका बापूसे परिचय नहीं था, अिसलिअे मुझे मुलाकात तय करनेको लिखा। बापू तो सदा ही सच्चे सेवकोंको सहायता करनेको तैयार रहते थे। अुन्होंने समय देना मंजूर कर लिया। व्यासजी सेवाग्राम आये और अेक-दो दिन रहकर बापूने परामर्श करके चले गये। जानेसे पहले बापूको कोअी चीज भेंट करना चाहते थे। अुन्होंने अेक कविता बनाकर मेरे द्वारा बापू तक पहुंचा दी। बापूने पढकर कहा "कविता तो अच्छी है, मगर दरिद्रनारायणकी भूख अिससे थोडे ही मिटेगी। मुझे तो जयनारायणजी अेक गुडी सूत कातकर देते तो अधिक अच्छा लगता।" काव्यसे बापूको अरुचि नहीं थी, मगर देशमें हरअेकके कवि बननेकी जो हवा चल पडी है, वह अुन्हें पसन्द नहीं थी। शेक्सपीयर और टागोर जैसे महाकवियोंके वे कद्रदान थे। सूर, तुलसी आदि संत कवियोंके तो वे भक्त ही थे। मगर अेक दरिद्र और परावीन देशमें वे सेवकोंसे कविताओंके बजाय अधिक ठोस सेवामें समय लगानेकी आशा रखते थे।

२१९

बा कुछ बीमार हो गअी थीं। सेवाग्राममें अलग झोपडेमें रहती थीं। बापू अुन्हें नियमित रूपसे दोनों समय देखने जाते थे। अेक दिन कामकी ज्यादतीसे शामको जाना नहीं हुआ। दूसरे दिन स्नान करके लौटते समय पहुंचे तो मैं भी साथ था। "क्यों क्या हाल है?" बापूने पूछा तो बा बोली, "आपको बलासे। आप तो बडे आदमी हैं, महात्मा हैं। आपको दुनियाकी चिन्ता है, मेरी क्या चिन्ता होगी?" बापूने बाके सिर पर हाथ रखकर बालोंमें अुंगलिया डालकर कहा, "तुम्हारे लिअे भी महात्मा और बडा आदमी हूं?" बाका सारा गुस्सा शांत हो गया। मैं अुस दृश्यको कभी भूल नहीं सकता।

२२०

आश्रममें रोज दतुन करनेका नियम था। अुठते ही दतुन करके प्रार्थनामें जाना होता था। दतुन पहले दिन शामके भोजनके समय ही सबको बाट दिये जाते थे। अक्सर लोग दतुन करके अुसे चीरकर जीभ साफ करके फेंक देते हैं। अुन पर मक्खिया बैठकर गन्दगी फैलाती हैं और दतुन कचरे पर पडकर बेकार हो जाते हैं। बापूने अिसके अुपायके तौर पर यह नियम बना दिया था कि दतुन करके अुसे धोकर अेक टोकरीमें डाल दिया जाय और सूखनेके बाद अुसे अीधनके काममें ले लिया जाय। अिस प्रकार सफाअी भी रहती थी और अुपयोग भी हो जाता था। रही कागजोके लिअे भी अुनका जलानेका आग्रह रहता था, क्योंकि कागजकी खाद नही बन सकती। पाखाने-पेशाबघरके अलावा कहीं टट्टी-पेशाबके लिअे जाना होता तो वे अुसे मिट्टीसे ढक देने पर जोर देते थे, ताकि बदबू, गदगी और रोग न फैले। थूकने तक पर यही पाबन्दी थी।

२२१

अलवर राज्यके प्रजामडलके साथ मेरा काफी समय तक घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। वहाके कार्यकर्ता अुन दिनो मेरी सलाह लिया करते थे। जब मैं १९४० में अजमेरसे सेवाग्राम चला गया, तो अलवरके कार्यकर्ताओने मेरे मारफत बापूके मार्गदर्शन और सहायताकी माग की। मैं जब अिस सम्बन्धमें अुनसे बातचीत कर रहा था तो सयोगवश श्रीमती विजयालक्ष्मी पडित आ पहुची। अुन्हे देखते ही कहने लगे, "लो, यह आ गअी। तुम्हारा भाग्य अच्छा है। मैं सोच ही रहा था कि अलवर किसे भेजू? हर जगह राजकुमारी (अमृतकौर) को कष्ट देनेमें सकोच होता है।" यह कहकर अुन्होने श्रीमती पडितको अलवरकी समस्या, जिसे समझनेमें अुन्हे स्वय देर नही लगी, समझाना शुरू कर दिया और बातकी बातमें अलवरवालोकी कठिनाअी हल हो गअी। अुन दिनो अलवरमें शायद कर्नल हार्वे नामक कोअी अग्रेज प्रशासक था। अुस पर अेक महिलाका — और वह भी नेहरू घरानेकी — असर पडना स्वाभाविक था। मानव स्वभावकी पहचान और योग्य आदमीका योग्य स्थान पर अुपयोग कर लेनेकी कला बापूमें विलक्षण थी।

२२२

देशी राज्योकी प्रजाके लिअे काम करनेवाले अेक प्रमुख कार्यकर्ताकी रीतिनीति, विशेषत आर्थिक व्यवहार पर सरदार वल्लभभाअी बहुत नाराज थे। अुन दिनो सरदार स्वास्थ्यलाभके लिअे बापूकी देखरेखमे सेवाग्राम ही थे। अेक दिन सुबह घूमते वक्त बापू मुझे पास बुलाकर कहने लगे " से तुम्हारा परिचय है? कुछ सम्बन्ध भी है?" "हा, बापू, काफी पुराना परिचय और अेक ही क्षेत्रके साथियोका सम्बन्ध भी है," मैंने अुत्तर दिया। "तो अब सम्बन्ध विच्छेद कर लेना।" बापूका यह

आदेश सुनकर मैं चौंक पडा। मैंने पूछा, "क्या निजी सम्बन्ध भी?" "सार्वजनिक कार्यकर्ताओंका तो अेक ही सम्बन्ध होता है। फिर भी तुम्हे से कोअी सरोकार नही रखना है।" मैं चुप रहा तो बोले, "सरदारसे बात कर लो। वे तुम्हे सब बात बतायेंगे।" सैरसे लौटकर सरदारके साथ अुनके निवास-स्थान पर पहुंचा। महादेवभाअी भी वही थे। दोनोंने ही के विरुद्ध बहुतसी बातें बतायी। अुनका सार यह था कि " अितना खतरनाक आदमी है कि वह अपने सम्बन्धोंका सर्वत्र दुरुपयोग करता है। अुसकी सारी मंडली ही वैसी है। हम लोगोंको तो अुससे दूर ही रहना चाहिये।" मैंने श्रद्धासे बापूकी आज्ञा मान तो ली, परन्तु मेरी बुद्धिको वह पटी नही। देशके आजाद होने पर जब मुझे . के साथियोंसे पूरे हालात मालूम हुअे तब प्रतीति हुअी कि बापूने भलेकी ही कही थी।

२२३

गत महायुद्धके समय अेक खूबी बापूकी अहिंसक नीति और कार्य-पद्धतिकी मैंने यह देखी कि वह मनुष्यको कितना निर्भय बना देती है और अुसका विरोधीके बरताव पर भी कितना असर पडता है। अिस लडाअीमें फ्रांस जैसे शस्त्र-सुसज्जित राष्ट्रने जर्मनीकी शक्तिसे हारकर अितनी जलील शर्तों पर संधि की जिसकी कल्पना नही की जा सकती। और अन्तमें जर्मनी, अिटली और जापान जैसे शक्तिशाली देशोंने भी मित्रराष्ट्रोंके आगे बुरी तरह घुटने टेक दिये और दबना स्वीकार किया। अुधर भारत निहत्था होकर भी छाती खोलकर और सिर अूंचा करके जब ब्रिटेन जीत और ताकतके शिखर पर था तब भी अुसका विरोध करता रहा, अुसने अन्यायके सामने सिर नहीं झुकाया और अन्तमें ब्रिटेनको भारतकी आजादी माननेको मजबूर कर दिया।

२२४

हैदराबादमें युद्धकालमें दो सत्याग्रह चल रहे थे। अेक आर्यसमाजकी तरफसे और दूसरा स्टेट कांग्रेसकी ओरसे। दूसरा सत्याग्रह सीधा बापूकी ही देखरेखमें हो रहा था। अुधर आर्यसमाजके सत्याग्रहके दो नेता श्री देशबन्धु गुप्त और श्री धनश्यामसिंह गुप्त भी कांग्रेसी या बापूके ही आदमी थे। वे समय समय पर अपने सत्याग्रहके बारेमें बापूसे सलाह-मशविरा करने सेवाग्राम आते रहते थे और बापू अुन्हे बराबर मार्गदर्शन और सहायता देते थे। अितना ही नही, जब यह महसूस किया जाने लगा कि दोनों लडाअियां साथ साथ चलनेसे राज्यको गलतफहमी फैलाने और दोनोंको कमजोर बनानेका मौका और बहाना मिलता है, तो बापूने बजाय आर्य-समाजी नेताओंको अुनका सत्याग्रह बन्द करनेकी सलाह देनेके स्टेट कांग्रेसका सत्याग्रह स्थगित कर देना बेहतर समझा। अिस प्रकार बापू किसी भी व्यक्ति या जमातके अच्छे कामोंमें मतभेदोंको भुलाकर मदद ही नही देते थे, बल्कि निजी मामलोंकी भांति सार्वजनिक मामलोंमें भी अपनोंसे त्याग कराकर परायोंको श्रेय दिलानेमें अधिक खुश रहते थे।

२२५

औंधके बूढे राजा जितने धार्मिक पुरुष थे उतने ही देशभक्त भी थे। उन्होने बापूके ढगसे अपनी सलाहके अनुसार अपनी प्रजाको स्वराज्य देनेका निश्चय किया। अग्रेज रेजीडेण्ट नाराज हुआ और उसने राजासाहबको दबाना चाहा। राजासाहब सच्चरित्र थे। नही दबे। गाधीजीसे मिलने निकल पडे। रेजीडेण्टको मालूम हुआ तो उसकी मोटर भी उनके पीछे पीछे दौडी, मगर चिडिया हाथसे निकल गओ। राजासाहब अपने युवराज सहित सेवाग्राम पहुचे। बापूने कह दिया, "आप अपने शुभ सकल्प पर डटे रहिये। मै आपके साथ हू। फिर भी अगर उन्होने आपका कुछ बिगाड कर दिया तो सत्ता हाथमें आते ही हम उसे सुधार लेंगे।" उसके थोडे ही दिन बाद बापूकी वायसरायसे भेंट हुओ। वहा और बातोके साथ साथ उन्होने औंधकी बात भी निकाली और राजासाहबके खिलाफ कुछ कार्रवाओ करनेका सकेत दिया। बापूने दृढतापूर्वक राजासाहबका पक्ष लेते हुअे कहा कि "अगर उतने अच्छे राजा और उसके जितने अच्छे कामको भी हानि पहुचाओ गओ, तो जिसे मै अपना विरोध समझूगा।" नतीजा यह हुआ कि रेजीडेण्टके लाख चाहने पर भी वायसराय, जो गाधीजीसे बडी बडी समस्याअें सुलझानेमें मदद चाहते थे, उस छोटेसे मामलेमे भिडनेको रजामद नही हुअे और राजासाहबका बाल भी बाका नही हुआ। बापू अच्छे आदमियो और अच्छे कामोकी हिमायतमें और वचन-पालनमें जान लडा देते थे।

२२६

कुछ समयके बाद औंधके युवराज अप्पासाहब थोडे दिनोके लिअे आश्रममें आकर रहे थे। सयोगवश वे पेचिशके बीमार हो गये। उनकी टट्टी (कमोड) साफ करनेका काम मेरे सुपुर्द हुआ। जब बापूको मालूम हुआ तो मुझसे कहने लगे "तुमने राजाओका बहुत विरोध किया है, अब उनका पाखाना साफ करके प्रायश्चित्त कर रहे हो न?" मैंने तो उस मजाकको पसद ही किया, मगर बापू उतने कोमल हृदय और उदात्त सस्कृतिवाले थे कि उन्हे शायद शका हुओ कि मेरे दिलको ठेस तो नही पहुची होगी। तुरत गभीर होकर बोले, "उसे भी देशी राज्योकी सेवाके व्रतका ही पालन समझो। यह तो अच्छा राजकुमार है। कोओ बुरा भी हो तो रोग या सकटग्रस्त होने पर उसकी सेवा उतने ही उत्साहसे करना हमारा धर्म है।" बुरे और उसकी बुराओमें बापू सदा भेद करते थे। बुराओका विरोध और बुरेकी सेवा करनेका विवेक उनका हमेशा जाग्रत रहता था।

२२७

डूगरपुरके महारावल साहब राजपूतानेके राजाओंमें ऐसे थे जिन्होंने हरिजन-सेवा और भील-सेवाके कार्योंमें हार्दिक सहयोग देकर मेरे मन पर यह असर डाला था कि अगर अुनका बापूके साथ सम्पर्क करा दिया जाय तो औक़ाफी-सी मिसाल राज-स्थानमें भी कायम हो सकती है। मैंने अुन्हें बापूसे मिलनेका सुझाव दिया। अुन्होंने अुसका स्वागत किया और मुझी पर मुलाकातकी व्यवस्थाका भार सौंपा। मैंने बापूसे जिक्र किया तो बोले, "शौकसे मिलूंगा।" तय हुआ कि जब महारावल चादा (मध्यप्रदेश) के जंगलोंमें शिकारसे लौटेंगे तो सेवाग्राममें बापूसे मिलेंगे। मगर शिकारमें बीकानेरके महाराजा गंगासिंहजीसे अुन्होंने अपना यह बिरादा जाहिर कर दिया, तो अुन्होंने अुन्हें अुल्टी-सीधी पट्टी पढाकर बापूकी भेंटके सौभाग्यसे वंचित कर दिया। मैंने बापूको यह भी सुना दिया। अिसी अवसर पर गंगासिंहजीकी कुछ परस्पर विरोधी बातोंका स्मरण अितना तीव्र हुआ कि मुझसे बापूसे कहे बिना नहीं रहा गया, "बापू, यह आदमी अजीब तरहका है। अेक तरफ आपके प्रति आदर दिखाता और जमनालालजीसे दोस्ती बताता है और दूसरी तरफ होनहार राजाओंको आपके पास तक नहीं फटकने देता है। अेक तरफ अंग्रेजोंके प्रति गैरमामूली वफादारीका अैलान करता है और दूसरी तरफ अुनकी हारमें खुश होता है और हार हो जानेकी सूरतमें अुनके अिलाके दबानेकी योजनाअें बनाता है।" पिछली बात पर बापूको आश्चर्य हुआ। अुन्होंने पूछा, "यह कैसे?" मैंने कहा, "पहले महायुद्धमें महाराजा गंगासिंहजी जब अंग्रेजोंकी तरफसे लडने फ्रांसके मैदानमें गये थे, तब जाते समय यह हिदायत छोड गये थे कि अंग्रेज हार जायें तो बीकानेरकी सेना हिस्सारके निकटवर्ती अिलाके पर कब्जा कर ले। यह बात मुझे अुन अफसरोंमें से अेकने कही है जिन्हें यह हिदायत दी गअी थी। अिसी तरह अेक राजाने, जिनके महाराजा गंगासिंह मेहमान थे, मुझे बताया है कि वे अंग्रेजोंकी हारके लिअे दूसरे महायुद्धमें भी अितने अुत्सुक थे कि स्नानघरमें रेडियो लगवा कर रखते थे कि कहीं कोअी बडी खबर सुननेसे न रह जाय और जब पेरिसके पतनका समाचार आया, तो तौलिया लपेटकर बाहर निकल आये और खुश होकर यह समाचार हम लोगोंको सुनाया।" बापू बोले, "मुझे दोनों ही रिपोर्टों पर भरोसा नहीं होता, मगर मेरे जीवनमें अैसे अनेक अनुभव हुअे हैं कि जिन बातों पर मुझे विश्वास नहीं होता था वे सच निकलीं। कपट-नीति क्या नहीं कर सकती?"

राजस्थान-सेवा-संघ टूट जानेके बाद पथिकजीका बापूजीसे सम्पर्क छूट गया था। मेरे सेवाग्राम पहुचने पर मेरी यही कोशिश रहती थी कि राजस्थानके अधिकसे अधिक नये कार्यकर्ताओंको बापूका मार्गदर्शन प्राप्त हो और पुरानोंका अुनसे फिर सपर्क स्थापित हो। बापू मेरे अिस प्रयत्नको बराबर प्रोत्साहन देते थे। पथिकजीको भी बापूसे अपने पुराने सम्पर्क ताजा करनेकी प्रेरणा हुअी। परन्तु अुन्हे बापूको सीधा लिखनेमें सकोच था। कारण यह था कि कअी वर्ष पहले अुन्होंने बापूसे मिलनेकी स्वय ही अिच्छा प्रगट की थी और फिर स्वय ही मिलने नही जा सके थे। अुस अवसर पर बापूजीने पथिकको यह पत्र लिखा था

"भाअी पथिकजी,

आपका खत आज मिला। मैंने तो आपको आपके आखरके पत्रका अुत्तर भेज दिया था। आश्चर्य है आपको नही मिला। मेरे भावमें कुछ भी भेद नही हुआ है। होनेसे मै छुपा नही सकता हू। आप जब चाहे अिस तरफ आ सकते है। मद्राससे अेक दिनके फासले पर अक्टोबरके दस दिन तक घूमता हूगा। मद्रासमें आपको जगहका पता मिल जायगा।

मैंने अब्दुल रशीदको* फासीसे बचानेके लिअे सरकार प्रति कुछ भी नही लिखा है। मैंने हिन्दू जनताको अुसको माफी देनेका अवश्य कहा है। आप काकोरीके कैदियोके बारेमें मेरे पाससे क्या चाहते है? किस जनतासे मै कहू?

भा० कृ० २

आपका
मोहनदास"

अिस पत्रसे बापूकी अिस परिपाटीका पता लगता है कि कार्यकर्ताओंको वे तुरत जवाब देनेकी कोशिश करते थे। साथ ही यह भी पता चलता है कि बापूकी हिन्दी अुन दिनो कैसी थी, अुस पर गुजराती वाक्यरचनाका कितना असर था और बादमें अुनकी हिन्दीका कितना विकास हो गया था।

अस्तु, पथिकजीने मुझे लिखा कि वे बापूसे मिलना चाहते है और सभव हो तो अुनके साथ काम करनेका अिरादा भी रखते है। मैंने बापूसे पथिकजीका सकोच और अिरादा बताया तो वे कुछ मुस्कराये और कहने लगे, "अितने सुपरिचित व्यक्तिको अितना सकोच होना तो नही चाहिये, परन्तु अुन्हे लिख दो कि जब चाहे आ जाय। हा, अुन्हे भी सबकी तरह यहाके सभी काम हाथसे करने और तुम्हारी तरह किसी न किसी रचनात्मक कार्यकी तालीम लेकर अुसमें लगनेकी तैयारी रखनी होगी।" अिस प्रकार बापू जहा अपनेसे भिन्न विचारके कार्यकर्ताओंको भी अपनानेको सदा तैयार रहते थे, वहा बडेसे बडे लोकसेवकोको भी नम्र बनानेका आग्रह रखते थे।

* स्वामी श्रद्धानदजीका हत्यारा।

२२९

जिन दिनो हिटलरका बोलबाला था, अुनके देशी-विदेशी प्रशंसक अुन्हें अवतार बताते थे और अुनके निन्दक अुन्हें राक्षस कहते थे। अेक दिन शामकी सैरके समय मैंने बापूसे पूछा "बापू, आपकी हिटलरके बारेमें क्या राय है?" "हिटलरको मैं अेक महापुरुष मानता हू। अुनके विरोधी भी स्वीकार करते है कि वे निर्व्यसनी है, यहा तक कि सिगरेट भी नही पीते। शराबको वे छूते नही। विवाह अुन्होने नही किया। अुनकी कोअी जायदाद नही बताअी जाती। चौबीसो घंटे अुन्हें देशका ही ध्यान रहता है। अेक राष्ट्रको नीचेसे अुठाकर अितना अूचा पहुचा देना कोअी आसान काम नहीं। जीतना तो वे जानते ही है, परन्तु जीतकर अुदार बनना भी अुन्हें आता है। वे चाहते तो बूढे मार्शल पेताको अपने यहा भी बुला सकते थे, लेकिन अैसा न करके खुद अन्यत्र जाकर जो शर्तें तय कराअी और जैसा व्यवहार किया अुसे नाजी पैमानेके अनुसार असाधारण रियायत ही कहा जा सकता है। फिर भी हमें यह नही भूलना चाहिये कि अुनके विचारो और तरीकोंने हमारा मेल बैठ ही नही सकता।" बापूने युद्धकालमें सार्वजनिक रूपमें भी हिटलरके बारेमें जो विचार प्रगट किये, अंग्रेजोको जो खुली चिट्ठी लिखी और जापानियोंसे जो अपील की, वे अुनके अद्वितीय साहस, सद्भाव और आदर्शवादकी अुत्कटताके ज्वलत अुदाहरण बनकर इतिहासमें अमर रहेंगे।

२३०

मैं गोसेवा सघके कामके सिलसिलेमें गोपुरी (वर्धा) में रहता था। मेरा परिवार सेवाग्राम आश्रममें था। बापूके आदेशानुसार मैं रविवारको सुबह सेवाग्राम चला आता और सोमवारको लौट जाता। अिसमें अुनका अुद्देश्य यह था कि गोसेवा सघकी सप्ताह भरकी गतिविधियोकी रिपोर्ट मिल जाय और जमनालालजीकी मशा यह थी कि सघके दैनिक कार्यो पर बापूकी प्रतिक्रियाअें मालूम हो जाय। तदनुसार मैं सुबह गोपुरीसे अैसे समय रवाना होता कि बापूके सैरसे लौटनेकी हदके स्थान पर अुनसे मेरा मिलाप हो जाय। ज्यू ही मैं पहुंचता वे प्रसन्न मुद्रासे पूछते, "आ पहुचे?" और मुझसे वार्तालाप शुरू कर देते। अेक दिन महादेवभाअीने मुझे बताया कि जब बापू आपको दूरसे आते देखते है या पुलिया पर बैठा पाते हैं, तो जिससे बातें करते हों अुसे जल्दी निपटानेकी सूचना देते हुअे कह देते है कि, "रामनारायण आ गये। बेचारे अितनी दूरसे आते हैं, अब मुझे अुनसे बात करनी होगी।" मैंने देखा कि मेरे गोपुरी चले जानेके पहले श्री बालूजकरजी भी जब चर्मालयके बारेमें नाल्वाडीसे अपनी साप्ताहिक रिपोर्ट देने आते थे, तो बापू और सबसे बात करना बन्द करके पहले अुन्हें अवसर देते थे।

२३१

मैंने अपनी विचारधाराके विरुद्ध पारिवारिक दबावमें आकर १९३८ में जीवन बीमा करा लिया था। सेवाग्राम पहुचने पर अुस भूलको सुधार लेनेकी प्रेरणा हुअी। परन्तु अजनादेवी बीमा बन्द करनेको तैयार नही थी। तय हुआ कि बापूकी राय ली जाय और वे जो फैसला कर दें अुसे शिरोधार्य किया जाय। मुझे तो भरोसा था कि बापू बीमेके विरोधी है, अिसलिअे निर्णय मेरे पक्षमें होगा। परन्तु हुआ अुल्टा ही। शामकी प्रार्थनाके बाद जब हमारी पेशी हुअी तो बापूने पहला ही सवाल यह किया, "बीमा किसके हुकमें कराया गया है?" "अजनादेवीके हुकमे," मैंने अुत्तर दिया। "तो अुसे पूछो कि वह छोडनेको तैयार है या नही।" अजनादेवीने साफ अिनकार कर दिया। तब बापूने कहा, "मै बीमेको आस्तिकताके खयालसे अनुचित, देशकी दरिद्रताको देखते हुअे परिग्रह और व्यावसायिक दृष्टिसे नासमझी मानता हू। अिसलिअे वह त्याज्य है। परन्तु न्यायके लिहाजसे अुस पर अजनाका अधिकार है। जब वह अुसे छोडना नही चाहती तो तुम्हे वचन-पालनके लिअे बीमा जारी रखना ही होगा।" बापू पैसे पैसेकी किफायत करनेवाले आदमी थे और मुझे बीमेका खर्च आश्रमसे लेनेमें सिद्धान्तत सकोच था। फिर भी न्याय-नीति और वचन-पालनके लिअे बापू अैसी चीजोको भी वर्दाश्त कर लेते थे।

२३२

गोपुरीकी बात है। अेक बार अेक जटाधारी डडियल युवक आया। कुछ पागल-सा दिखाअी दिया। कहने लगा, "मुझे काम चाहिये। सेवाग्राम गया था। वहा तो मेरी दाल नही गली।" मुझे दया आअी। भाअी राधाकृष्ण बजाजसे, जो गोसेवा सघके मत्री थे, मैंने प्रयोग करनेकी अिच्छा प्रगट की। अुनको भी विचार पसद आ गया। मगर चूकि युवक सेवाग्रामका द्वार खटखटा चुका था, अिसलिअे मैंने बापूसे पूछ लेना मुनासिब समझा। दूसरे ही दिन रविवारको मेरी साप्ताहिक सेवाग्राम यात्रा होनेवाली थी। मैंने पहुचते ही बापूसे पूछा तो कहने लगे, "हा, वह युवक यहा भी आया था। यहा तो अुसे रखनेकी किसीको हिम्मत नही हुअी। तुम्हारी हो तो प्रयोग कर लो। रोटी कपडेमें तो कोअी आदमी आलसी न हो तो क्या महगा है? फिर वह खेती और गोपालनका काम भी जानता है। हा, तुम्हारे धीरज और कौशलकी परीक्षा जरूर होगी।" वह युवक और कोअी नही था, सेवाग्राम आश्रमके वर्तमान कार्यकर्ता श्री अनतराम थे, जिनकी प्रशसा करते करते भाअी बलवन्तसिंहजी और राधाकृष्ण दोनो ही नही थकते। अिस प्रकारके प्रयोग बापू स्वय तो करते ही थे, अपने साथियोको भी करनेमें प्रोत्साहन देते थे। और अिसी प्रकारके प्रयोगोसे बापूको गुदडीके अनेको लाल मिल जाते थे।

२३३

जमनालालजी नागपुर जेलमें थे। उनके बारेमें स्थानीय पत्रोंमें कैसी खबरें छपी थीं कि सरकार उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं कर रही है और बीमारीमें यथेष्ट सुविधाएँ नहीं दे रही हैं। मैंने उनके आधार पर 'नवज्योति' में सरकारकी आलोचना कर दी। जब बापूको यह पता लगा तो उन्हें बुरा लगा। कहने लगे, 'सच बात तो बिलसे उलटी है। सरकारका वर्ताव जितना अच्छा है उनकी आशा नहीं रखी जाती थी। उसे तो धन्यवाद देना चाहिये।" आखिर, मुझे अपनी टिप्पणीका संशोधन करके मध्यप्रदेश सरकारसे माफी माँगनी पड़ी और आयदा आश्रममें रहते हुअे राजनीतिक विषय पर न लिखनेका अहद लेना पड़ा, तब कहीं बापूको संतोष हुआ। मैंने उस दिन पहली और आखिरी बार बापूके स्वरूपका दर्शन किया। सत्यके मामलेमें बापू जितने कठोर और विरोधीके अच्छे कामोंकी कद्र करनेमें जितने तत्पर थे।

२३४

जेलसे छूटकर आनेके बाद बापूकी सलाहसे जमनालालजीने गोसेवाको अपना जीवनकार्य बनाया। सन् १९४१ के दशहरेके दिन वर्धामें गोसेवा संघ नामकी अेक अखिल भारतीय संस्था बापूकी कार्यपद्धति पर गोसेवा करनेके लिअे जमनालालजीकी अध्यक्षतामें स्थापित हुअी। मुझे भी यह काम अच्छा लगा। उस वक्त तक मेरा कोअी कार्यक्रम निश्चित नहीं हुआ था। मगर मेरी रायमें देशी राज्योंकी सेवाकी मेरी प्रतिज्ञा बिलमें बाधक थी। बिसलिअे मैंने बापूकी सलाह ली तो कहने लगे, "प्रथम तो अब देशी राज्योंकी समस्या ही नहीं है। उन्हें न कांग्रेस रखना चाहती है और न ब्रिटिश सरकार। जब देशी राज्य ही नहीं रहनेवाले हैं, तब उनके संबंधकी प्रतिज्ञा कहा रहेगी?" मेरे लिअे यह बिलकुल नअी जानकारी थी। बिसे पाकर मैंने अनुभव किया कि मैं अेक भारी भारसे मुक्त हो गया हूं। परंतु गोसेवाका महत्त्व फिर भी मुझे समझना बाकी था। उसे बापूने यूं समझाया, "भारत अेक कृषिप्रधान देश है। यहांकी खेती गोवंश पर निर्भर करती है। बिसलिअे गोसेवा खादीसे भी बड़ा काम है। मैं तो बिसे स्वराज्यसे भी महत्त्वपूर्ण समझता हूं, क्योंकि स्वराज्यप्राप्तिके लिअे लोगोंमें लगन पैदा हो चुकी है और गोसेवाकी रुचि देशमें पैदा करनी है। वह स्वतंत्र भारतके निर्माणका सबसे बड़ा काम होगा। बिसीलिअे मैंने उसे अपने रचनात्मक कार्यक्रमका सबसे बड़ा अंग माना है। मेरे खयालसे गाय ही वह जानवर है, जो हमारे मुख्य राष्ट्रीय उद्योग खेतीका अेकमात्र आधार बैल देती है और अेक निरामिषभोजी आदर्शवाले राष्ट्रके लिअे जिन भोजन तत्त्वोंकी अत्यंत आवश्यकता है वे भी दूध, घी वगैराके रूपमें मुहैया करती है। गोसेवाके मेरे

अपने विचार है और अुसकी अेक विशेष पद्धतिका कामचलाअू विकास भी हो चुका है। जमनालालजी जैसे कर्मठ सगठनकर्ताके नेतृत्वमें अेक देशव्यापी सगठनकी नीव पड गअी है। अब जरूरत योग्य कार्यकर्ताओकी है। तुम भी अिस काममें भाग लो तो मुझे खुशी ही होगी।" मेरा समाधान हो गया और मैं गोसेवा सघमें काम करने लगा। बादमें अनेक बारकी बातचीतमें बापूने अिस कार्यकी महानता और अुसकी आवश्यकता मेरे हृदय और बुद्धि दोनो पर अकित कर दी।

२३५

११ फरवरी १९४१ को जमनालालजीका देहान्त हो गया। दूसरे ही दिन सवेरे नाश्तेके बाद बापूने मुझे बुलाकर कहा, "जमनालालजी चले गये, मगर अुनका अुठाया हुआ काम तो पीछेवालोको करना ही है। जमनालालजी तुम्हारे कामसे सतुष्ट थे और कहते थे कि आगे-पीछे अुनके प्रथम सहायक तुम्ही होगे। अुनके तीन अुत्तराधिकारी है। जानकीदेवी अुनके पद पर बैठी है, कमलनयन अुनके धनका वारिस है और राधाकिशन अुनके सेवाकार्यका। वह गोसेवा सबका मत्री है, अच्छा काम करता है, मगर यह काम अुसके बूतेका नही है। मेरी नजरमें तुम्हारे सिवाय कोअी और आदमी अिसे चला सकनेवाला नही है—अभी तो नही है। मैं चाहता हू तुम मत्री बनना स्वीकार कर लो।" मैंने अुत्तर दिया, "बापू, काम पवित्र है, मेरी रुचिका भी है और मत्रीपदका मुझे कुछ अनुभव भी है। जानकीबहन बडी है, अुनकी अध्यक्षतामें काम करनेमें कोअी आपत्ति भी नही है। अुनकी तरफसे कोअी बाधा न आकर सहायता ही मिलेगी। मगर दो बाधाअें है। अेक तो घनश्यामदासजी अुपाध्यक्ष होने पर भी वास्तवमें अध्यक्ष वही होगे और अुनकी मेरी पटेगी नही। दूसरे जमनालालजीने चाहा था और मैंने मजूर किया था कि मैं छ महीने बगलोर जाकर गोसेवाकी तालीम पा लू। वह तालीम ज्ञानकी दृष्टिसे अुपयोगी और वचन-पालनके खयालसे सतोषप्रद होगी। फिर जैसी आपकी आज्ञा।" बापू बोले, "घनश्यामदासजीकी तरफसे कोअी बाधा नही आयेगी। अव्वल तो अुनमें काफी परिवर्तन है और फिर मैं तो बीचमें ह ही। कोअी बाधा आयेगी तो देख लूगा। अलबत्ता, तालीमवाली बात भिन्न प्रकारकी है। ज्ञानवृद्धि लाभदायक और जरूरी होते हुअे भी गौण वस्तु है। अुसमे कही महत्त्वकी बात सस्थाको चलानेकी है। परतु मुख्य चीज नैतिक है और वह वचन-पालनकी है। अिसलिअे तुम तो बगलोर जाओ। मगर यह तो बताओ, तुम्हारे खयालमे मत्रीपदके लिअे कौन आदमी अुपयुक्त होगा?" "स्वामी आनद", मैंने तुरत अुत्तर दिया। "हा, वह ठीक है, यदि स्वीकार कर ले।" अतमें अुन्ही पर भार डाला गया। अिस प्रकार बापू नैतिकताको अुपयोगिता पर सदा तरजीह देते थे।

२३६

बापूने बगलोरकी इम्पीरियल डेरी इंस्टीट्यूटके पारसी संचालक श्री जाल रुस्तमजी कोठावालाके नाम मुझे एक परिचयपत्र दिया। बापू इस संस्थाको देख चुके थे और वहाके वातावरणमें गांधीजीको भारतके एकमात्र गोसेवक राष्ट्रीय नेताके रूपमें याद किया जाता था। मैं पहुचा तो अध्यापको तकको 'गांधीके चेले' को देखनेकी उत्सुकता हुअी। एक दो दिनमें ही सबसे परिचित हो गया। विद्यार्थियोका तो कहना ही क्या? उन्होने शुरूसे अन्त तक अपनी श्रद्धा और प्रेमसे मुझे अुपकृत किया। जब मैं पहुंचा तो छात्रावासमें कोअी पच्चीस तीस विद्यार्थी थे। अुनके चार पाच अलग अलग भोजनालय थे। छात्र हाथसे कोअी काम नही करते थे। अुनके कमरोकी सफाअी, जूतोकी पालिश आदि सब कुछ नौकर करते थे। सिनेमा प्रति सप्ताह अधिकाश लडके जाते थे। कुछ विद्यार्थी रोज नही तो दूसरे तीसरे दिन जानेवाले थे। मद्यपानका प्रचार काफी था और आवारापन तो अुसके साथ लगा ही रहता था। बापूने रवाना होते समय मुझे एक ही वाक्य कहा था: "जो चीज वहासे लेनेकी है वह लाना और यहासे ले जानी है वह देना।" मैंने अिस सन्देशके प्रकाशमें जाते ही कार्यारभ कर दिया। आशातीत सफलता मिली। सब छात्रोका एक सम्मिलित भोजनालय हो गया और जो मासाहारी थे अुनके लिअे वे चीजें अलग पकवा कर परोस दी जाती थी, परतु बैठते सब एक ही पक्तिमें थे। सब छात्र अपने अपने कमरोमें झाडू लगाने, अपने जूते आप पालिश करने और कुछ कपडे भी हाथसे धोने लगे। शराब छात्रालयमें आनी बन्द हो गअी और सिनेमा महीनेमें एक बार जानेका नियम बन गया। लेकिन अिस पाबदीकी कीमत मुझे भी चुकानी पडी और वह यह कि मुझे अुनके साथ जाना पडता। अलबत्ता, फिल्मकी पसन्द भी मुझी पर छोडी गअी। कुछ विद्यार्थियोने खादी पहननेका व्रत लिया और व्यायाम या पुरुषोचित खेल सबके लिअे अनिवार्य कर दिया गया। पाखाने-पेशाबकी सफाअीके तरीकेमें आश्रमके ढग पर सुधार किये गये और जूठे बर्तन विद्यार्थी स्वय माजने लगे। रातको दस बजेके पहले सब छात्रोका होस्टलमें मौजूद हो जाना लाजिमी हो गया। ये सब सुधार किसी अूपरी दबावसे नहीं, परतु बापूके विचारो और आदर्शोके प्रभावसे हुअे थे। मेरी सूचनाअें निमित्तमात्र थी। बगलोर डेरी अिंस्टीट्यूटके अितिहासमें तो यह अभूतपूर्व घटना ही थी। सब विद्यार्थी और कुछ अध्यापक भी मुझे 'भाअीजी' के नामसे पुकारते थे। आज भी जब मिलते है वही प्रेमपूर्ण सबोधन काममें लिया जाता है।

२३७

बगलोरकी डरी अिस्टीट्यूटमें सुपरिन्टेन्डेन्ट अेक रिटायर्ड फौजी मि० कॉक्स नामक अंग्रेज थे। बापूके आदमीके नाते अुनकी भी मुझ पर कृपा थी। अुनकी पत्नीका बर्ताव भी वैसा ही था। कअी बार नाश्ते पर बुलाया करती थी। अेक रोज कहने लगी, "आप तो मि० गांधीके अनुयायी हैं, आपको अंग्रेजोंसे कोअी दुश्मनी नहीं हो सकती। अिस्टीट्यूटके संचालक मेरे पतिको तंग करते हैं। मि० कोठावालाको शिकायत है कि अंग्रेज अधिकारियोंने अुन्हें अपने हकसे वंचित रखा। अिसके सिवा मि० कॉक्सका कोअी कसूर नहीं। परंतु यह कहांका न्याय है कि किसीकी ज्यादतीकी सजा दूसरेको दी जाय? आप मि० कोठावालाको समझाअिये और हमारी मदद कीजिये।" मि० कॉक्सकी तो आखें ही भर आअी। मैंने कहा, "कोठावाला साहब और मि० कॉक्स दोनों मेरे गुरु हैं। मेरी स्थिति बडी विषम है। मेरा दोनोंमें से किसीको भी कुछ कहना छोटे मुंह बडी बात होगी। बापू सुनेंगे तो अुन्हें भी मेरी अनधिकार चेष्टा पसन्द नहीं आयेगी। फिर भी जैसे आपने जिक्र किया वैसे ही स्वाभाविक रूपमें कोठावाला साहब भी मुझसे अपने-आप बात चलायेंगे तो अपनी नम्र सेवाअें देनेमें मैं अपना सौभाग्य समझूंगा।" वह संयोग जल्दी ही हो गया। बात यह थी कि बापूके कारण ही मि० कॉक्सकी अपेक्षा भी कोठावाला साहबका विश्वास और प्रेम मुझ पर अधिक था। वे बडे सतर्क संचालक भी थे। मेरी गतिविधियोंका अुन्हें पता रहता था और कॉक्स परिवारसे मेरी घनिष्ठता अुन्हें मालूम थी। कभी कभी छात्रालयके प्रबंधके बारेमें बात करनेको वे मुझे बुला भी लेते थे। श्रीमती कॉक्ससे मेरी अुपरोक्त बात हुअी अुसके दूसरे ही दिन अुनका बुलावा आ गया। अिधर अुधरकी बातोंके बाद अुन्होंने ही प्रसंग छेडा और अंग्रेज अधिकारियोंके अुनके साथ किये गये दुर्व्यवहारकी लम्बी और हृदयस्पर्शी रामकहानी अुन्होंने भावनाके साथ सुना डाली। अुसीमें मि० कॉक्सका भी जिक्र आया। तब मैंने कहा, "आपके अंग्रेज अफसरोंने आपको सताया और आपने अपने अंग्रेज मातहतके साथ अुदारताका सुलूक किया, यह पता बापूको चलेगा—और वह अवश्य चलेगा—तो आप अुनकी नजरोंमें जितने अूंचे हैं अुससे कहीं अधिक अूंचे अुठ जायेंगे।" बापूके प्रति अुनका आदर अितना अधिक था कि मेरी यह अपील अुनके दिलमें फौरन् घर कर गअी और जहां तक मुझे मालूम है जब तक मैं बगलोर रहा, दोनोंमें से किसीने भी अेक दूसरेकी शिकायत नहीं की। अुधर कॉक्स परिवार तो अितना अुपकृत हुआ कि अुसने मेरे बंगलोर छोडनेके अवसर पर अेक विदाअी भोज दिया, जो अेक विद्यार्थीके सम्मानकी दृष्टिसे अिस्टीट्यूटके अितिहासमें अिस तरहकी पहली घटना थी। अिधर कोठावाला साहबका अितना भरोसा जम गया कि अगस्त १९४२ की शायद पहली या दूसरी तारीखको जब रेजीडेंटने अुन्हें बुलाकर कांग्रेसके प्रति सरकारकी नीति बताअी और अिस्टीट्यूटमें अुसे लागू करनेका ब्यौरा समझाया, तो दूसरे ही दिन अुन्होंने मुझे बुलाकर संकेत कर दिया कि क्या होनेवाला है।

२३८

लेकिन बापूके प्रभावका चमत्कार तो सबसे अधिक सेनामें मालूम हुआ। अंग्रेजोंके जमानेमें शायद जलवायुके कारण बगलोरमें देशकी सबसे बड़ी फौजी छावनी थी। वहाके सैनिक अफसर डेरीमें दूध, मक्खन आदि लेने आया करते थे। जिनमें से कई शिक्षार्थी भारतीय अफसर भी थे। उन्हें जब मालूम हुआ कि महात्मा गांधीका आदमी डेरीमें काम सीखने आया हुआ है तो वे छात्रालयमें मेरे पास आने लगे। मैं छात्रालयके विद्यार्थियोंकी तरह उन्हें भी बापूके संस्मरण और आश्रमजीवनके हालात सुनाया करता था। उनमें से कुछको सैनिक वातावरणमें मद्यपान और अनैतिक जीवनकी प्रेरणाके प्रति अनतोष था। मैं उन्हें बापूके शुद्ध जीवनके आग्रहकी याद दिलाकर उनकी ऊर्ध्वगतिको दृढ़ करनेकी कोशिश करता। जिस दिन उन्हें मालूम हुआ कि मैं वर्धा लौट रहा हू, वे कुछ अधिक सख्यामें आये। उनमें अधिकाश सिक्ख, राजपूत और जाट थे। अेक मुसलमान और अेक क्रीश्चन भी थे। उन्होने पूछा, "हमारे लिअे क्या सदेश है?" मैंने कहा, "मैं तो छोटा आदमी हू, क्या सदेश दे सकता हू। लेकिन अगर मैंने गांधीजीको ठीक समझा है तो वे चाहेंगे कि आप लोग अपना जीवन शुद्ध रखें और निहत्थे लोगो पर गोली चलानेका प्रसग आने तो इन्कार कर दें। मगर अैसी अवज्ञाके गूढार्थ समझकर करे।" उन्होने जिसे सहर्ष स्वीकार किया।

२३९

सन् १९४५ में कोअी तीन साढ़े तीन साल बाद जब मैं बापूसे मिला तब मैंने ये सब हालात सुनाये तब तो वे खुश हुअे ही। जिससे पहले बगलोरके लगभग अेक मासके निवासके बाद ही उन्हें जो विवरण मैंने भेजा उसका अुत्साहवर्धक अुत्तर आया। वह यह था.

"दिल्ली, १-४-'४२

चि० रामनारायण,

तुमारा १२-३-'४२ का खत मैं साथ लाया हू। कल सब नियम और तुम्हारे लिअे जो अभ्यासक्रम है पढ़ गया। अच्छा है। नियम भी ठीक है।

छात्रालयमें सफाअी, हिन्दी वगैराका काम कर रहे हो वह भी अच्छा लगता है। जितना सुवास फैला सकते हो फैलाओ।

महादेवभाअी अच्छे है।

बापूके आशीर्वाद"

२४०

बापूको बहुत अधिक काम करते देखकर अुनके पास रहनेवाले सभीको अुनकी नकल करनेकी स्वाभाविक प्रेरणा होती थी। मुझे भी हुअी और मैंने बापूसे अगीकृत कार्योंके सिवा कोअी और काम देनेकी प्रार्थना की। शायद अुस दिन अुनका मौन था। अिसलिअे अुत्तर अुन्होने नीचे लिखे अनुसार पत्र द्वारा दिया

"चि० रामनारायण,

तुमारा समय भरा है। अब ज्यादा काम नही लेना। तुमारा मुख्य काम खादी-शास्त्रमें प्रावीण्य पाना है। आध्रकी पद्धतिसे धुनने में कुछ भी कष्ट नही होता है। कृष्णदाससे पूछो।

२५-२-'४० बापू"

बापू जहा अपने साथियोसे कसकर काम लेते थे वहा अिस सबधमें भी अुन्हे मोह नही होने देते थे और बूतेसे ज्यादा काम करनेमें प्रोत्साहन नही देते थे। साथ ही यह भी ध्यान रखते थे कि साहित्यिक रुचिवाले कार्यकर्ताओको मुख्यत रचनात्मक या शरीरश्रम-प्रधान कार्यके साथ साथ कुछ लिखने-पढनेका काम भी मिलता रहे ताकि वे अूब न जाय।

२४१

कार्याधिक्यकी भाति बापूके त्यागकी नकल करनेकी प्रवृत्ति भी अुनके साथियोमें रहती थी। मैंने भी अेक बार अिसी वृत्तिसे घी खाना छोड दिया था। अुन दिनो अुनका आदेश था कि अपने खानपान और स्वास्थ्यकी रिपोर्ट समय समय पर अुनके पास भेज दिया करू। मेरे विवरणमें जब अुन्हे अिसका पता चला तो तुरन्त यह अुत्तर भेजा

"मीरजापुर,
ता० १९-११-'२९

भाअी रामनारायण,

तुमारा पत्र मिल गया। मै घीके बारेमें भूल गया था। मेरे नजदीक तो घीका प्रतिबध करनेकी आवश्यकता नही थी। अब अुसे छोड दिया जाय और आवश्यक मात्रामें घी लिया जाय। शरीर अच्छा बना लेना चाहिये। ता० २५ को प्रात काल मेरी ट्रेन अजमेर पहुच जायगी। मेरा मौन होगा।

बापूके आशीर्वाद"

बापू जानते थे कि कार्यकर्ताओंका स्वास्थ्य अुनकी अपनी चीज नही, बल्कि राष्ट्रीय सपत्ति है, और अगर वे तन्दुरुस्त नही रहेंगे तो अुतनी ही सेवाकार्यमें हानि होगी और बीमार होने पर अिलाजका खर्च भी अधिक होगा। अिसलिअे जहा वे भोजनकी सात्त्विकता और सस्तेपन पर जोर देते थे, वहा अुसके पौष्टिक और वैज्ञानिक होने पर भी अुतना ही जोर देते थे। साथ ही वे अुसी त्यागको स्थायी और श्रेयस्कर मानते थे, जो देखादेखी और भावावेशमें न होकर समझके साथ होता था और निभ सकता था।

२४२

ठाकुर केसरीसिंहजी बारहठ राजस्थानके क्रान्तिकारी दलके चार प्रणेताओमें से अेक थे। वे डिंगल भाषाके ओजस्वी कवि थे और अुनकी कविताके प्रभावसे ही मेवाडके महाराणा फतहसिंहजी लार्ड कर्जनके समय दिल्ली जाकर दरबारमें अुपस्थित हुअे बिना ही मेवाडकी टेक कायम रखकर लौट आये थे। अुन्हे आरा हत्या केसमें आजन्म कारावासकी सजा हुअी थी और अुनकी जमीन, मकान आदि जब्त कर लिये गये थे। परतु जेलमें अुनके साधु चरित्रका अधिकारियो पर अितना गहरा असर पडा कि अुनकी सिफारिश पर सरकारने अुन्हे जल्दी छोड दिया था। आम तौर पर तो यह मशहूर है कि दिल्लीमें लार्ड हार्डिज पर बम श्री रासबिहारी बोसने फेंका था, परतु हकीकत यह है कि वह काम जोरावरसिंहजीने किया था, जो ठाकुर केसरीसिंहजीके छोटे भाअी थे और मृत्युपर्यन्त गुप्त ही रहे। ठाकुरसाहबके बड़े लडके श्री प्रतापसिंहको बनारस षड्यत्र केसमें लबी सजा हुअी थी और जेलमें ही अुनका देहान्त हुआ। अिस प्रकार यह सारा परिवार शहीदोका परिवार था। मैं प्रतापजीके साथ काम कर चुका था। अिसलिअे केसरीसिंहजी मुझ पर पुत्रवत् प्रेम रखते थे। मेरे बापूके पास रहनेकी अुन्हे खबर लगी तो अुन्होने बापूके निकट रहकर अुनके आदेशानुसार सेवा करनेमें शेष आयु व्यतीत करनेकी अिच्छा प्रगट की। मैंने बापूसे जिक्र किया तो बोले, "केसरीसिंहजी आयगे तो मुझे खुशी होगी। अुनके अुत्कृष्ट जेलजीवनका मुझसे सर तेजबहादुर सप्रूने भी जिक्र किया था। मगर अुन्हे यहाके दैनिक जीवनका पता न हो तो लिख दो। अुसका पालन तो सभीके लिअे आवश्यक है।" मैंने ठाकुरसाहबको सूचना दी और अुनका अुत्तर भी आ गया कि वे आश्रमके सब नियमोकी सहर्ष पाबन्दी करेगे, मगर अुनके अेक हाथमें कुछ खराबी थी जिसके कारण कातना अुनके लिअे सभव नही था। बापूने अिस मजबूरीको स्वीकार करके भी अुनके आनेकी स्वीकृति दे दी। परतु भगवानको कुछ और ही मजूर था। ठाकुर साहब बीमार हो गये और थोडे ही समय बाद चल बसे।

२४३

परचुरे शास्त्री नामक संस्कृतके विद्वान बापूके बडे भक्त थे। वे कुष्ठ रोगसे पीडित होकर बापूके बुलाने हुने सेवाग्राममें रहते थे। बापूने उनके लिने अलग कुटिया बनवा दी थी। बापू रोज उनके पास जाते और उनके घाव अपने हाथसे धोते थे। एक दिन शास्त्रीजीको पखा करनेकी ड्यूटी मेरी लगी थी। इस बीच बापू आये और जख्मोंकी मरहमपट्टीका काम शुरू करने लगे। तब शास्त्रीजीने हाथ जोडकर कहा, "बापू, आपके दर्शन मात्रसे मेरा दर्द दूर हो जाता है। आप और अधिक कष्ट न कीजिये।" इस पर बापू कहने लगे, "शास्त्रीजी, आप बडे स्वार्थी है। मुझे आनद नही लेने देंगे?" वास्तवमें बापूको जितना सुख ऐसे रोगियोंकी सेवामें मालूम होता था उतना शायद ही किसी और काममें मिलता होगा। बीमारोंको देखने जानेमें उनका कभी नागा नही होता था।

२४४

मै बहुत कमजोर रहने लगा था। वर्धाके वैद्य कृष्णलालजी मेरे मित्र थे। उन्होंने दूध, मोसम्बी और स्वर्ण पर्पटीका प्रयोग करनेका आग्रह किया और स्थायी स्वास्थ्यका आश्वासन दिया। बापूका इन चिकित्साओंमें विश्वास नही था। वे प्राकृतिक उपचारोंमें ही श्रद्धा रखते थे। भस्मादिके तो वे घोर विरोधी थे। फिर भी जब मैंने वैद्यजीकी बात कही तो उन्हे बुला भेजा और खाते समय उनसे बात की। वैद्यजी तो इस अप्रत्याशित मुलाकातसे कृतकृत्य हो गये। बापू अपना अविश्वास बताते हुने भी एक साथीके स्वास्थ्यकी खातिर उन्हे अवसर देनेको तैयार हो गये। सयोगवश उनका प्रयोग समाप्त होनेके दूसरे ही दिन मुझे ज्वर आ गया और वह मोतीझरा निकला। बापू पर तो प्रतिक्रिया होनी स्वाभाविक ही थी, मेरा भी भस्मादि पर कभी विश्वास नही था। जो था सो भी उठ गया। बापू प्रयोग करनेको सदा तैयार रहते थे और उनके सफल होने पर अपनी चिरकालीन राय भी बदल लेते थे और असफल होने पर पुराना मत दृढ कर लेते थे।

२४५

युद्धकाल था। बम्बई और पूनेसे बापूके पास ये शिकायतें बराबर आ रही थी कि वहा स्थित गोरे सैनिक स्त्रियोंके साथ छेडछाड करते है। कुछ बलात्कारके प्रयत्नोंके आरोप भी थे। लोगोंमें आतक और रोष छाया हुआ था। अंग्रेज अधिकारी आत्मविश्वास कर रहे थे। बम्बईके गवर्नरने तो यहा तक कह दिया था कि मृत्युका आवाहन करनेवाले नौजवान सैनिकोंका यह मनोरजन क्षम्य माना जाना चाहिये! शायद भारतकी आतिथ्यशीलताका भी अल्लेख किया गया था! नागरिकोंमें जितना

क्षोभ फैल गया था कि हिंसा होनेका खतरा था। श्री कन्हैयालाल मुंशी जैसे जिम्मेदार आदमीने ऐसे अवसर पर अहिंसाका पालन करनेमें अपनी असमर्थता प्रगट करते हुअे कांग्रेसकी प्रारंभिक सदस्यता तक छोड दी थी। बापू अपने ढगसे 'हरिजन' में और अखबारी बयानो द्वारा अिस समस्याको हल करनेकी कोशिश कर रहे थे। अपने अनूठे ढगसे वे भारतीयोको वीरता और विदेशियोको शालीनता दिखानेकी सलाह दे रहे थे।

अैसे वातावरणमें अेक महाराष्ट्रीय बहन बापूसे मिलने आअी और अिन घटनाओका जिक्र करके अुसने प्रश्न किया "अगर मेरे धर्म पर आक्रमण हो और कोअी दूसरा अहिंसक अुपाय न हो, तो मैं अपने सतीत्वकी रक्षा हिंसा द्वारा कर सकती हू?" बापूने लम्बा अुत्तर दिया जिसका सार यह था "मैं मानता हू कि जो स्त्री पूरी तरह सती है अुस पर कोअी आक्रमण नही कर सकता। शुद्धताका दूसरे पर असर होता ही है और बुरेसे बुरे आदमीकी अुस पर कुदृष्टि डालनेकी ताब नही हो सकती। वैसी हिम्मत तभी होती है जब स्त्रीमें भी कही न कही कमजोरी होती है। अितने पर भी यदि कुचेष्टा की जाय, तो स्त्रीके नाराजगी प्रगट करने और प्रेमपूर्वक अुलहना या साहसपूर्वक फटकार दे देनेसे दुष्ट शर्मिन्दा होकर या डरकर दुष्कर्मसे पराङ्मुख हो जाता है। अिसके बावजूद बहुत ही कम आदमी आगे बढनेका दुसाहस कर सकते हैं। यदि फिर भी कोअी करे और स्त्री अपने धर्मकी रक्षाके लिअे प्राण देनेको तैयार रहे, तो अुसे आक्रमणको विफल करनेके अनेक अहिंसक अुपाय अुसी समय सूझ जाते हैं। आक्रमणकारीको काट लेना, नोच लेना, अुसके लात-घूसे मारना वगैराको मैं अहिंसक अुपाय ही मानता हू। ये अुतने ही अहिंसक हैं जितना चूहेका अपनी जान बचानेको बिल्लीको प्रहार करना है, क्योकि वह जानता है कि अुसके प्रहारोंसे बिल्ली तो मरेगी नही और अन्तमें अुसीको अपनी जानसे हाथ धोना पडेगा।

"लेकिन ये सब अुपाय भी कारगर न हो तो अपनी लाज लुटने देनेसे आक्रमणकारीका वध कर डालना बेहतर है। तुम्हे यही अुपाय नजर आता हो तो बधकि बाजारसे खजर खरीद लाओ और गांधीका नाम लेकर आक्रमणकारीके सीनेमें भोक देना और अपने सतीत्वकी रक्षा करना।" अेक और प्रश्नका अुत्तर देते हुअे बापू बोले, "दुष्टके अधिक शरीर-बलके सामने स्त्रीका कोअी भी अुपाय सफल न हो और वह अपनी रक्षा न कर सके तो अुसे आत्महत्या करनेकी जरूरत नही और न समाजको अुसे तिरस्कृत ही समझना चाहिये। क्योकि वह निर्दोष है, बल्कि अपने सतीत्वकी रक्षाके लिअे जान जोखिममें डालकर सब अुपाय करनेके लिअे कदकी हकदार है।" बापू जैसे राष्ट्रीय क्षेत्रमें गुलामीको बरदाश्त करनेके बजाय सशस्त्र क्रांति द्वारा आजाद होना अच्छा समझते थे, वैसे ही व्यक्तिगत जीवनमें कायरतासे हिंसाको कही ज्यादा तरजीह देते थे, क्योकि वे कहते थे कि बुजदिल कभी अहिंसाका पालन नही कर सकता। वे मानते थे कि अहिंसा पर अमल करनेवालेमें बहुत अूचे दरजेकी बहादुरी होनी चाहिये।

स्त्री-शिक्षाकी अेक प्रसिद्ध सस्थाके सचालकके विरुद्ध बापूके पास लडकियोंके साथ अनैतिक आचरण करनेकी शिकायत आअी। शिकायत करनेवाले भी और कोअी नही, स्वय सरदार वल्लभभाअी थे, जो कभी कच्ची बात नही कहते थे और प्रमाण जुटाकर ही किसी पर अभियोग लगाते थे। अुधर सचालकका अुत्तर यह था कि सरदार गुजरातमें अैसे किसी स्वतत्र और समर्थ कार्यकर्ताका अस्तित्व गवारा नही कर सकते, जो अुनकी अधीनता स्वीकार न करे, अिसलिअे ये आरोप द्वेषवश लगाये गये है। बापूको यह दलील तो मान्य नही थी, क्योकि अुनके खयालसे सत्य अक्सर अिसी प्रकार प्रगट होता है। जिनमें आपसमें मेल होता है वे अेक-दूसरेको ढकनेका प्रयत्न करते है। जब झगडा होता है तभी आम तौर पर सचाअी जाहिर की जाती है। बापू तो केवल यह देखते थे कि आरोप सच है या झूठ। मगर बापू विवादास्पद या न्याय-अन्यायके मामलोमें कभी अिकतर्फा बात नही मानते और करते थे। अपनी निश्चित नीतिके अनुसार अुन्होने दोनो पक्षोके सामने स्वतत्र जाच कराकर पच फैसला करानेका सुझाव रखा। प्रस्ताव तो दोनो फरीकोने मजूर कर लिया और बापू पर ही यह भार डालना चाहा। अितना विश्वास था अुनकी निष्पक्षता पर भिन्न विचार रखनेवालोका भी। सरदारकी ओरसे गुजरातके अेक प्रमुख कार्यकर्ता सेवाग्राम आये हुअे थे। अुनसे बापूकी जब बातचीत हुअी अुस समय मै वही था।

बापूने कहा "मै तो खुशीसे यह काम हाथमें लेता। परन्तु अिस समय देशके सामने जो महान समस्या है अुसमें मै अितना फसा हुआ हू कि मै अितना वक्त अिस प्रश्नके लिअे नही दे सकता। सेवाग्राम तो छोड ही नही सकता। सस्थाके सचालको और अध्यापिकाओ और छात्राओको यहा बुलानेमें अुन्हे बडा कष्ट होगा, खर्च भी बहुत लगेगा। अैसा करना व्यावहारिक दृष्टिसे भी अवाछनीय होगा। अिसलिअे अैसा किया जाय कि अतिम निर्णय तो मै कर दू और जाचका काम किसी औरसे करा लिया जाय।" कुछ नाम सूचित किये गये, परन्तु किसी पर समझौता नही हुआ। अतमें अभियुक्तकी तरफसे श्री का नाम आया। दूसरे पक्षकी ओरसे अुनके काग्रेसविरोधी और हिन्दू महासभावादी होनेकी आपत्ति की गअी, तो बापूने कहा, "विचार कुछ भी हो, वे धर्मात्मा पुरुष है। वे भ्रष्टाचारको कभी पसन्द नही कर सकते और जानबूझकर अन्याय हरगिज नही करेगे। सरदार बहादुर आदमी है। कोअी जोखम हो तो भी अुठा लेंगे और मुझे विश्वास है कि को स्वीकार कर लेगे।" तदनुसार सरदारको तार देकर पूछा गया तो जैसी आशा थी वैसा ही अुनका स्वीकारात्मक अुत्तर आया।

कुछ दिनके बाद की रिपोर्ट आअी और बापूने निर्णय देते समय वादी पक्षको जो कुछ कहा अुसका आशय यह था · " ने लिखा है कि 'लडकियोने सचालकके विरुद्ध बयान जरूर दिये है, परन्तु वे अभियुक्तके सामने आनेको और जिरहके लिअे तैयार नही है। अैसी हालतमें यह विचारणीय है कि अभियुक्तकी अनुपस्थितिमें दी गअी

गवाहीके आधार पर अुसको दोषी करार देना कहा तक न्यायसगत होगा और खास तौर पर जब वह अभियुक्त अैसा व्यक्ति हो जिसने गुजरात और काठियावाडमें हजारो हिन्दुओको विधर्मी होनेसे बचाकर हिन्दूधर्मकी मूल्यवान सेवा की हो।' मै . की अिस बातसे सहमत हू कि अैसी शहादतकी बिना पर किसीको कसूरवार नही ठहराया जा सकता। न्यायका यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि मुल्जिमको गवाहसे जिरह करनेका मौका दिये बिना अिसाफ पूरा नही होता। अिसलिअे मजबूरन मुझे अभियोग खारिज करना पडता है। परन्तु मुझे आशा है कि सचालक आत्मनिरीक्षण करेंगे और अपनी भूलको—यदि कोअी भूल हो तो—सुधार लेंगे।" बापू अपने बडेसे बडे साथियोका भी लिहाज न करके शुद्ध न्याय ही करते थे।

२४७

बापूको कअी लोगोकी अिच्छानुसार अुनसे अेकान्तमें बातें करनी पडती थीं। यह देखकर बच्चोको भी अुनसे अेकान्तमें बात करनेका कुतूहल होता था। शायद वे अिसे अेक विशेष गौरव समझते थे। अेक दिन मेरी छ वर्षकी लडकी सुभद्राको भी अैसी ही सूझी। अुसने शामको सैरके समय बापूसे यह माग की। वे तो बच्चोको खुश करनेको सदा लालायित रहते थे। दूसरे दिन ४ बजे शामका समय दे दिया। परन्तु वह समय अुन दिनो काग्रेसकी कार्यसमितिकी रोज होनेवाली बैठकोंके लिअे निश्चित था। अिसका बापूको ध्यान नही रहा। परन्तु सुभद्रा कब भूलनेवाली थी? अुसके लिअे तो यह परम सौभाग्यका अवसर था। वह ठीक वक्त पर बापूकी कुटियामें अुनके सामने जा खडी हुअी। मै वही था। बापूके सचिवालयमें काम करनेवालोको यह छूट थी कि खास तौर पर मनाही न होती तो बापूसे होनेवाली चर्चाओको सुन सकते थे। काग्रेस नेताओको अिस लडकीके जाकर यू अचानक खडी हो जाने पर कुछ आश्चर्य हुआ, परन्तु बापूकी नजर पडते ही वे कहने लगे, "अरी सुभद्रा, मैं तो भूल ही गया था।" नेताओंसे कहा, "अिस लडकीको मैंने अेकान्तमें बात करनेका यही समय दिया था। आप लोग तो चर्चा चलाअिये, मै अिसे निपटाकर अभी आता हू।" यह कहकर बापू अुठे और सुभद्राको बाहर बरामदेमें ले गये। बात तो अधिक करनी ही क्या थी, थोडी देरमें लौट आये। नेताओके अुत्सुक चेहरे देखकर कहने लगे, "अकसर हम छोटे आदमियोकी बात पर ध्यान नही देते और अुनको दिये हुअे वचनको महत्त्व नहीं देते। परन्तु यह ठीक नही। वचन तो वचन ही है और बच्चा हो या छोटेसे छोटा आदमी भी हो तो अुसे अुतना ही महत्त्व देना चाहिये जितना किसी बडे आदमीको देते है, क्योकि अुसमें भी वही परमात्मा निवास करता है, जो बडे आदमीके हृदयमें विराजमान है।" समताके अिस प्रकारके व्यवहारसे बापू छोटे बड़े सबके हृदय सदाके लिअे जीत लेते थे। जिस दिन बापूके निधनके समाचार मिले थे अुस दिन हमारे घरमें सबसे अधिक सुभद्रा रोअी थी और कारण पूछने पर अुसने अिसी तरहकी घटनाओका स्मरण कराया था।

२४८

सन् १९२८ की बात है। अुन दिनो 'श्रद्धानन्द' नामक हिन्दी साप्ताहिकमें शमक्त विनायकराव सावरकरका कोअी लेख छपा था, जिसमें अुन्होने अपने विचार और प्रणालीके अनुसार बापूकी कडी आलोचना की थी। अिसके अुत्तरमें कानपुरके 'प्रताप' में अेक-दो अग्रलेख छपे थे, जिनमें वीर सावरकर पर अितने निर्मम प्रहार किये गये थे कि मेरे जैसे गाधी-भक्तको भी अुनमे अमर्यादा प्रतीत हुअी। मैंने अपनी यह प्रतिक्रिया स्व० गणेशशकरजी विद्यार्थी और बापूको सूचित कर दी। मेरे पत्रका बापूने यह अुत्तर दिया

"भाअी रामनारायण,

आपका पत्र मिला। मुझे तो कुछ पता भी नही था कि मेरे बारेमें 'श्रद्धानन्द' में क्या लिखा जाता है। मै अेक दो अखबार चद मिनिटके लिअे देख लेता हू। मेरा बचाव कोअी भी करे वह भी मै नही चाहता हू। मेरे निमित्तसे किसी पर हमला किया जाय वह भी मुझे पसन्द नही है। अिस पत्रका चाहे वैसा अुपयोग करे। मै 'प्रताप'को लिखता हू।

२७-२-'२८ आपका
मोहनदास"

बापू अपने पर होनेवाले आक्षेपोका आम तौर पर जवाब नही देते थे और न यह पसन्द करते थे कि कोअी और ही दे। वे मानते थे कि मनुष्यका आचरण ही अुसकी सबसे अच्छी सफाअी है। अुनके पास जो समय था अुसे वे अिसकी अपेक्षा अधिक अुपयोगी सेवाकार्यमें लगाना बेहतर समझते थे। क्षमा अुनकी वृत्ति और कृतिका अविभाज्य अग था।

२४९

मुझे सन् १९४१ के आरम्भमें सेवाग्राममे मोतीझरा निकल आया। मुझसे पहले अेकके बाद अेक कअी आश्रमवासी अिस रोगके शिकार होते चले गये। बापू अपनी प्राकृतिक चिकित्सा ही करते थे, कोअी दवादारू आम तौर पर नही देते थे। अिसलिअे मेरी बीमारीमें विशेष सावधानी बरती गअी। नतीजा यह हुआ कि मेरे बाद किसीको विषम ज्वरका प्रकोप नही हुआ। वैसे तो बापूके अिलाजमें मुझसे पहलेके भी सब बीमार अच्छे हो गये थे। मगर मेरी बीमारी सबसे लम्बी थी। मुझे २७ दिन ज्वर रहा जो मोतीझरेकी लम्बी मियाद मानी जाती है। अिसलिअे बापूकी चिकित्साका वर्णन दे देना सार्वजनिक हितमें होगा।

जब तक मेरा ज्वर अुतरकर तापमान मामूली नही रहने लगा, तब तक मुझे खानेको सुबह, दुपहर और शामको अेक अेक करके तीन नारगियोका रस ही दिया

जाता था। पीनेके लिअे अुबालकर ठडा किया हुआ पानी यथेच्छ ले सकता था। जाडेका मौसम होने पर भी मुझे बरामदेमें लिटाकर रखा जाता था और चारपाअी पर लेटे लेटे ही टट्टी, पेशाब और खानपान आदिकी जरूरतें पूरी करनी पडती थी। तीन बार टेम्परेचर लिया जाता था। रोज गरम पानीमें सोडा और नमक डालकर अेनीमा और गरम पानीमें भिगोये हुअे कपडेसे बदन पोछकर स्पंज बाथ दिया जाता था। पहननेके सब कपडे रोज बदले और धोये जाते थे और ओढने-बिछानेके वस्त्रोको धूपमें डाला जाता था। किसी बच्चेको मेरे पास फटकने नही दिया जाता था। मेरे मलमूत्रको दूर ले जाकर जला दिया जाता था, क्योकि टायफाअिडके कीडे मक्खियो द्वारा खाने-पीनेकी सामग्री पर रख दिये जानेसे दूसरोको यह रोग लग जाता है। अिस विशेष सावधानीसे ही मोतीझरेके रोगियोकी शृंखला आश्रममें टूट पाअी थी। मेरा ज्वर टूट जानेके बाद भी धीरे धीरे दूध, सागभाजी और फल खानेको दिये गये थे। अन्न तो कोअी दो मास बाद शुरू किया गया था। अिसी प्रकार चलने-फिरने और श्रम करनेकी अिजाजत भी शनै शनै दी गअी थी। अिस सारे कालमें बापू नियमित रूपसे दोनो समय देखने आते और टेम्परेचर, खानपान और नींद वगैराके बारेमें पूछताछ करके सूचनाअें दे जाते थे। दवा मुझे कुछ भी नही दी गअी।

२५०

यह अुपचार डॉ० दास नामक अेक वयोवृद्ध प्राकृतिक चिकित्सककी देखरेखमें होता था। वे जितने कोमल-हृदय प्राणी थे अुतने ही अनुशासनके पक्के और कुछ कटुभाषी भी थे। अेक दिन किसी मामूली-सी भूल पर मुझे कोअी सख्त बात कह बैठे। मेरे दिलको ठेस लगी और असर चेहरे पर प्रगट हुआ। अितनेमें ही बापू आ पहुचे। देखते ही ताड गये कि कुछ दालमें काला है। पूछा "क्या मामला है?" मैं तो चुप रहा मगर दास बाबूने सब माजरा सही सही सुना दिया। बापू अिकतर्फा बयानको कमी पूर्ण सत्य नही मानते थे। मेरी तरफ जिज्ञासाके रूपमें देखने लगे तो मैंने दास बाबूके वर्णनकी ताअीद कर दी। तब अुनसे कहने लगे "देखो, डॉक्टर, सत्य तभी हितकर होता है जब अुसे प्रिय बनाकर कहा जाय। मैंने सत्यके साथ अहिंसाको अिसीलिअे जोडा है। यह जरूरी नही है कि जो कुछ सच हो वह हमेशा प्रगट ही किया जाय। कभी कभी मौन रखना भी कर्तव्य होता है। परन्तु जब कहना फर्ज हो जाय तो झूठ हम कुछ न कहे, लेकिन जो कुछ कहे वह पूर्ण सत्य होते हुअे भी अिस प्रकार मिठासके साथ कहें कि जिसके विरुद्ध कहना पडे अुसे आघात न पहुचे या कमसे कम बुरा लगे। अिससे अुसे हमारे प्रेम और सद्भावका विश्वास होगा और हमारी बातका बुरा असर होनेके बजाय कुछ न कुछ अच्छा ही असर होगा।" सत्य और अहिंसाको अेक ही सिक्केके दो पहलू मानकर व्यवहार करनेमें ही बापूकी महान सफलताओका रहस्य था।

२५१

बापूको किसीका अखबार निकालना पसन्द नही आता था। अपने साथियोको तो वे अिस धधेमें पडनेसे आम तौर पर मना ही कर देते थे। मगर अिस सम्बन्धमें भी किसी साथीकी ली हुअी जिम्मेदारी या दिये हुअे वचनको निभानेका वे बडा ध्यान रखते थे। मुझे भी अुन्होने 'नवज्योति' साप्ताहिक चलानेसे मना कर दिया था। मगर जब मैंने अुन्हे बताया कि अुसके लिअे लिखनेका मैंने वादा कर रखा है और छोटा भाअी जो अुसे चलाता था जेल भेज दिया गया है और अुसकी अनुपस्थितिमें पत्रको बन्द न होने देना मै अपना धर्म समझता हू, तो बापूने तुरन्त स्वीकार किया "कोअी वचन यदि अनैतिक नही है तो अुसे पालन करना हमारा कर्तव्य है। परन्तु अुसका पालन हमारे अपने तरीकेसे ही होना चाहिये। मैंने तुम्हे राजनीतिसे फिलहाल अलग रखना तय किया है, अिसलिअे तुम 'नवज्योति' मे अराजनीतिक लेख लिखते रहकर अपना वादा पूरा करो। रही बात 'नवज्योति' को आर्थिक सहायता देनेकी, सो वह भी दुर्गाप्रिसादके कारावाससे अुत्पन्न होनेवाले सकटमें देनी जरूरी मालूम होती है। मगर तुम्हे अिसमें न पडने देकर मै अिसका कोअी अुपाय सोचूगा।" दूसरे दिन अुन्होने जमनालालजीसे बात की, परन्तु अुन्हे राजस्थानके कामोमे काफी कटु अनुभव हो चुके थे और जयपुरमें कुछ ताजा निराशाअें हुअी थी, अिसलिअे अुन्होने दिलचस्पी नही दिखाअी। आखिर बापूने किशोरलालभाअी द्वारा कलकत्तेके अेक धनिक देशभक्तको लिखवाकर सहायता देनेकी प्रेरणा की। अिस प्रकार अपने साथियोका वचन पालन करने और अुनके सकट दूर करनेको बापू असाधारण कार्रवाअिया भी कर देते थे।

२५२

मेरे गोसेवाकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिअे बगलोर चले जाने पर स्वामी आनद गोसेवा सघके मत्री नियुक्त हुअे। अुन्होने बापूसे, यदि वे गिरफ्तार हो जाय तो बादमें सघकी व्यवस्थाके बारेमें सलाह पूछी तो बापूने कहा "रामनागरण बगलोरसे लौटकर सत्याग्रहमें न पडे। अुसे गोसेवाका ही काम करना है।" जब मैं बगलोरसे लौटा तो स्वामीजीने यह पैगाम सुनाया और स्वय हटनेकी अिच्छा प्रगट की। परन्तु विधिको कुछ और ही मजूर था। मुझे मालूम हुआ कि अजमेर सत्याग्रह बापूने चले जानेवाले दूसरे कार्यकर्ताओकी तरह मेरे नाम भी वारट जारी कर दिया था। मैंने गिरफ्तार होकर जानेके बजाय स्वय चला जाना अपने लिअे अधिक गौरवशाली समझा। तदनुसार मैं आश्रममे चल दिया और अजमेर स्टेशनसे ही सीधा जेल भेज दिया गया। फिर भी मेरे मनमें अुस वक्तके औचित्यके बारेमें कुछ शका रही। परन्तु १९४५ में रिहाअीके पश्चात् जब मैं बापूसे मिला तो अुन्होने मेरी अिस कार्रवाअीको 'सत्याग्रहीके लिअे अधिक योग्य' बताकर मेरा समाधान कर दिया। शौर्यका हरअेक कदम अुन्हे सदा पसन्द आता था।

२५३

२३-५-'४१ को बापूसे मैंने कुछ प्रश्न किये थे। उनके उत्तर मेरी डायरीमें लिखे हैं। प्रश्नोत्तरी यह है :

प्र०—क्या पुस्तकालयकी सफाई आश्रमका शरीरश्रम नहीं है? क्या भाजी साफ करना ही अनिवार्य है?

उ०—भाजीमें जाना आवश्यक माना जाता है, क्योंकि वह अनिवार्य सामुदायिक कार्य है। जब बहुत आदमी रहें तब एक दो छूट सकते हैं।

प्र०—सुबह चार बजे उठते ही शौचादि गये बिना प्रार्थनामें जानेसे सुस्ती आती हो और कब्ज रहता हो तो क्या किया जाय?

उ०—कब्ज जाना चाहिये। चार बजे उठनेका छोड़ दिया जाय। आम कच्चे या पक्के जो मिलें सो खाकर देखो। रोटीसे कब्ज होनेका संभव है।

प्र०—क्या अपने बुजुर्गोंकी भाषाके दोषदर्शनमें—यदि वह सही हो तो भी—भाग लेना उचित है?

उ०—कैसे भी बुजुर्ग हों उनके भाषादोषादिकी ज्ञानपूर्वक चर्चा तो काफी हो सकती है।

* * *

यहां सेवाग्रामकी मेरी डायरीके कुछ अंश उद्धृत करना उचित होगा।

२५४

१२-५-'४१. यहां आने पर ऐसा सुना कि डॉ० दासका प्रयोग सफल नहीं हुआ।

(जिस पर बापूने लिखा ऐसा न माना जाय)

राजकुमारी बहनके साथ घूमनेमें बातचीत हुई। बापूकी क्षमाशीलताका अनुभव तो था। बहनने और भी आख्यान दिलाया। मगर जिन बार बापूकी कड़ाईके भी दर्शन हो रहे हैं। जहां तक कहनेका सम्बन्ध है उन्होंने बहुत साफ और कड़वी बातें कही हैं। मुझ पर ऐसी छाप पड़ी है और राजकुमारी बहनसे भी कभी कभी बापू बहुत गहरी बात कहनेमें बहुत मार्मिक ढंग और भाषासे काम लेते हैं। उसे तुरन्त समझना मुश्किल होता है और बिना पूरा विचार किये झट उत्तर दे देना ठीक नहीं रहता। कभी कभी ऐसा भी लगता है कि वे गलत समझ जाते हैं। और यह भी है कि एक बार अच्छा या बुरा अनका ख्याल बन जाता है तो मुश्किलसे बदलता है। लेकिन उनके मनमें हमेशा शुद्ध और उनका स्वभाव उदार है, जिसमें तो कोई शक ही नहीं।

२५५

१३-५-'४१ बापूसे समय मागने गया तो आज सुबह घूमनेमें साथ चलनेको कह दिया। मनमें अेकान्तकी बात थी, मगर अुन्होने पूछा तो घबरा गया और निश्चित अुत्तर न दे सका। आखिर अेकान्तमें बात हुअी। मगर सैरके अन्तमे बापूने अेकान्त मागनेके दोष बताये। कहने लगे कि अपने दोष दूसरो पर प्रगट हो तो नम्रता, शुद्धि और साहस बढते है।

* * *

२८-५-'४१ यह जानकर सन्तोष हुआ कि बापूको कतरनोके प्रकार और सख्यासे सन्तोष है। हा, कुछ पर अस्थायी समझकर अखबारका नाम नही लगाया, अिस पर बापूने कहा कि वह लगाना जरूरी है।

(छोटी छोटी चीजो पर बापू कितनी सूक्ष्म दृष्टि रखते थे। वस्तुत वे master of details थे।)

* * *

३१-५-'४१ बापूसे पुस्तकालयकी जिल्दोके बारेमें बात हुअी। अुन्होने कहा कि हमें गरीबोकी तरह रहनेका प्रयत्न करना चाहिये, अिसलिअे अत्यन्त आवश्यक होने पर ही पैसे खर्चना चाहिये। अत जो पुस्तक बहुत हाथोमें जाय या फट रही हो अुसीकी जिल्द बधवायें। नअी पुस्तकोको अभी रहने दें।

(मानो खर्च करते समय हर दम बापूके सामने दरिद्रनारायणकी मूर्ति खडी हो जाती थी!)

२५६

१२-६-'४१ आज अेक अुग्र, अुत्तेजित या अुन्मत्त युवकने केशोभाअीको मारा। वे खूनमें लथपथ हो गये, मगर प्रतिकारका बल होते हुअे भी शान्तिसे मार खाकर अुन्होने सच्ची वीरता व साधुताका परिचय दिया।

(ये जापानी साधु थे। बापूके साथ सेवाग्राममें रहते थे। गजबके सेवापरायण, हसमुख और सयमी पुरुष थे। आये तब भी सुवर्ण थे, बापूके पास रहकर अुस सोनेमें अहिंसाकी सुगध भी आ गअी थी।)

१६-८-'४१ बापूने आज प्रार्थनामें गुरुदेव (कवीन्द्र रवीन्द्र) को सन्त कहा और अुनके कवित्वसे अुनके देशप्रेम और विश्वप्रेमको अधिक बताते हुअे आत्मशुद्धिकी प्रेरणा की। अुन्होने क्रोध, आलस्य, स्वार्थ वगैरा छोडनेको कहा।

२५७

२१-८-'४१ बापूका यह पत्र मिला

"चि० रामनारायण, तुम्हारा खत तो अच्छा है ही, मर्यादासे बाहर नही जाना। अगर क्षणिक जोश कारण नही है तो त्याग टिकेगा। अन्यथा ज्यादा

कष्टका ही कारण होगा। बरसोंकी आदत बड़ी दृढ़ताके सिवा नहीं छूट सकती है। ईश्वर तुम्हें बल दे। बापूके आशीर्वाद। २१–८–'४१"

इस पर दोपहरको बात हुई। मैंने कहा, "जोश नहीं, विचारपूर्वक किया है।" बोले, "परिणाम अच्छा आया तो समझा जायगा कि त्याग दिलसे हुआ है। मैंने चेतावनीकी तौर पर कहा है। प्रयत्न तो शुभ है, करने जैसा है। हां, खर्च कहांसे लाओगे? व्यापार तो मैं करने देना नहीं चाहता। हां, तुम तब ऐसा काम करो कि खर्च निकल आवे। प्रताप अच्छा लड़का है। मुझे पसन्द है। अंजना भी है।' बापूकी बातसे बड़ा सन्तोष हुआ।

(बात यह थी कि हम दोनों बीमार रहते थे। तीन बच्चे साथ थे। हमारा आश्रम पर काफी भार था। इससे मनमें असन्तोष रहता था। अुसीको मिटानेके लिअे खानपान वगैरामें कमी करनेका निश्चय किया और बापूको सूचना दी। अुसका जो अुत्तर बापूने लिखा और कहा वह अूपर दिया गया है। अिनमें त्यागका स्वागत करने, विचारपूर्वक त्याग करने और लोकनेवकोंको व्यापारमें न पड़ने देनेका बापूका सतत आग्रह स्पष्ट है।)

२५८

परन्तु हुआ वही जो बापूको डर था। मेरा स्वास्थ्य बिगड़ा और अंजनादेवी घबराअी हुअी बापूके पास पहुंचीं। बापूका मौन था। अिसलिअे अुन्होंने यह पत्र लिखकर दिया

"चि० रामनारायण,

अंजनाका मैंने सुना था। दुःख हुआ लेकिन(न) घबराहट जैसी कुछ नहीं। आज प्रार्थनाके बाद शीघ्र मौन खुलेगा। तब हम तीन बैठ जायेंगे। अेकान्त ही होगा। घूमनेके समय बात करना ठीक नहीं होगा।

८–९–'४१ बापूके आशीर्वाद"

तदनुसार शामको कोअी दो अढ़ाअी घंटे चर्चा हुअी। वा और बापूकी सेविकाअें नाराज हो रही थीं। हमें भी अपनी समस्याओंके लिअे बापूका अितना समय लेने पर बड़ा संकोच हो रहा था। परन्तु अुन्हें तो दूसरेकी बात पूरी तरह समझे अपनी समझाये और कोअी हल निकाले बिना चैन नहीं पड़ता था। आखिर तय हुआ कि आर्थिक समस्या तो यों हल की जाय कि मैं गोसेवा सघका काम करूं और नाल्वाडी (गोपुरी) में रहूं। स्वास्थ्यलाभके लिअे नाल्वाडी जानेसे पहले सेवाग्राम रहकर मैंने लिखा बापूका नुस्खा आजमा लिया जाय

"अजमें

दूध ३० तोला
१ मोसम्बी

११ बजे

एक केला
एक तोला घी
२० तोलेके कटोरेमें आरामसे जा सके अितनी भाजी
दस ग्रेनसे अधिक नमक नही
भाजीमें लीवू डाल सकते हो।

२ बजे भूख लगे तो ३० तोला छाछ और २० ग्रेन सोडा
और मोसबी एक

५–२० को

३० तोला दूध
२० तोलेके कटोरेमें भाजी
ककडी मिले तब पाच तोला ककडी कच्ची
एक मोसबी

रातको बहुत भूख लगे तो एक केला। केला बराबर चबाकर
लेना या मेश करके। यह ज्यादामें ज्यादा है। तीन दिन
दस्त न आये तो अेनीमा लेना। मुझको रोजका
हिसाब देना। अब तो रोजके रोज क्योकि कुछ परिवर्तन
करना पडे तो करू। लिखके भेजो।"

जब ससारका अितना बडा महापुरुष अपने छोटे-छोटे और दुर्बल साथियोके आरोग्य और सुख-शान्तिमें अितनी दिलचस्पी ले, तो क्या आश्चर्य है यदि वे अुसके अुपकारोके कारण ही अुसके भक्त बने रहे!

२५९

जब मै सेवाग्रामसे अजमेर जेलकी तैयारी करके चला तब और कअी कार्यकर्ताओकी तरह मैंने भी समझा था कि बापूने जेल जानेसे पहले कोअी अैसा सन्देश दिया है जिसके अनुसार तोडफोडके कामोकी छूट दी गअी है। अिस कथित सन्देशके अनुसार मैंने बगलोरके अेक विद्यार्थीको वहा भी अैसा ही अेक कार्यक्रम बनाकर अुन पर अमल करानेको लिखा। अिसके कोअी दो साल बाद जब अजमेर जेलमें नजरबन्द था, तब मैंने अिस सम्बन्धमें २६ जुलाअी, १९४४ को बहासे बापूको यह पत्र लिखा

"परम पूज्य बापूजी,

"श्री चरणोमें सादर प्रणाम। कलके 'स्टेट्समैन' में आपका वह वक्तव्य देखा जो आपने सिंधके गृह-सचिव गजदर साहबके कथनका खंडन करते हुअे दिया है। अुसमें आपने कहा है कि 'मै तोडफोड़ और अिसी तरहके अन्य कामोंके प्रति विरोध अनेकबार रूपसे दोहराता हू।' आपके अिस बयानके कारण ही मै यह पत्र लिख रहा हू।

"मैं ९ अगस्त, १९४२ को बगलोरसे सेवाग्राम पहुचा था। नियत अवधिसे लगभग ३ सप्ताह पहले आ जानेका कारण यही था कि हो सके तो आपकी सभावित गिरफ्तारीसे पहले आपसे भेंट कर लू। मेरा विचार तो गोसेवाके अगीकृत कार्यमें ही लगे रहनेका था और जहा तक मुझे मालूम है आप भी यही चाहते थे। परन्तु सेवाग्राममें मुझे पता चला कि अजमेर मेरवाड़ाकी सरकारने मेरे नाम गिरफ्तारीका हुक्म निकाल दिया है। इसलिये मैंने यही सोचा कि मैं खुद ही जाकर क्यो न पकडा जाऊ। तदनुसार मैं २२ अगस्तको परिवार सहित बबसे चलकर २४ अगस्त, १९४२ को रातके ९ बजे यहा पहुचा और रेल्वे स्टेशन पर ही गिरफ्तार कर लिया गया। तभीसे मैं अजमेर सेन्ट्रल जेलमें नजरबन्द हूं।

"किन्तु बबसे रवाना होनेके पहले अेक खास घटना हुअी। आपकी गिरफ्तारीके बाद दो सप्ताह मुझे सेवाग्राममें लगे। अुस बीचमें बम्बअीसे आनेवाले अलग-अलग लोगोंसे जो समाचार मिले, अुनसे मैंने और दूसरोने भी यह नतीजा निकाला कि जेल जाते समय आपने कोअी सन्देश दिया है, जिसके अनुसार तोडफोड आदिके कार्यक्रमको आपकी स्वीकृति प्राप्त है। अिसी खयालके आधार पर १७ अगस्त, १९४२ को मैंने बगलोरके अेक विद्यार्थीको आपके अुस कथित सन्देशका हवाला देकर अुक्त कार्यक्रमकी प्रेरणा करते हुअे अेक पत्र लिख दिया। अिस पत्रके बारेमें ११-४-'४४ को अजमेरके डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस मीर मुम्ताजहुसैन साहब और १५-४-'४४ को सुपरिन्टेन्डेन्ट ग्रैवहम साहब मुझसे पूछताछ करने आये। मैंने तो अुस वक्त अितना ही बताना मुनासिब समझा कि 'सरकार मुझ पर मुकदमा चलायेगी तो जो नही बात है वह अवश्य स्वीकार करूगा। लेकिन अभी कुछ नही कहना चाहता।' अुस वक्त मेरा यही विश्वास था कि आपके विचारोको मैंने ठीक तरह समझ रखा है और १७ अगस्त, १९४२ के पत्रमें मैंने विद्यार्थी भाअीको जो कुछ लिखा था वह भी ठीक था। परन्तु सन १९४२-४३ के दौरेके बारेमें सरकारी प्रकाशनका आपने जो अुत्तर दिया है अुसे ध्यानमें पट जाने पर मुझे शका हुअी कि मैंने कही आपको गलत तो नहीं समझा। अब कल गजदर साहबका आपने जो प्रतिवाद किया है अुसमें तो मुझे निश्चय हो गया कि मैंने आपके साथ अन्याय किया और अुसके आधार पर जो कार्रवाअी की वह भी अनुचित थी। जिस पर मैं हृदयसे खेद प्रगट करता हुआ आपसे क्षमा चाहता हू और जो प्रायश्चित्त अुचित करे वह करनेको तैयार हू। मेरी अिच्छा यह भी है कि सरकारको सीधा भी कुछ लिखू। मगर आप अिसमें सहमत हो तो कृपया लिखिये कि किस प्रकार क्या किया जाय। यह पत्र यहाके प्रमुख राजबन्दियोकी सलाहसे लिख रहा हू। अुत्तर चीफ कमिश्नर साहब अजमेर मेरवाड़ाके मारफत दीजिये।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है।

छोटू
रामनारायण"

आश्चर्यकी बात यह है कि चीफ कमिश्नरने सरकारके फायदेकी बात होने पर भी यह पत्र बापूके पास नही जाने दिया। तब मैंने अजनादेवीको मुलाकातमें यह सब किस्सा सुनाकर श्री श्रीकृष्णदासजी जाजूके मारफत बापूकी सलाह पूछ लेनेको कहा। अुत्तरमें सेवाग्रामसे २२-२-'४५ को जाजूजीका जो पत्र आया वह यह है

"श्रीमती अजनाबाअी,

आशीर्वाद।

"तुम्हारा ता० १५-२-'४५ का पत्र मुझे यहा दो रोज पहले मिला। कुछ महीनो पहले भी तुम्हारा अेक पत्र आया था। अुसका अुत्तर अुसी समय दे दिया था। परन्तु तुम्हे वह मिला या नही, अुसका पता नही चला। अब तुम्हारे पत्रसे पता चलता है कि तुमको पत्र बराबर नही मिलते है।

"मैंने तुम्हारा पत्र पूज्य बापूजीको बतलाया। अुन्होने जो अुत्तर लिख दिया है, वह नीचे अक्षरश गुजराती भाषामें लिख रहा हू। आशा है तुमको भाषा समझनेमें मुश्किल नही जायगी।

"'रामनारायणे जे जेवु वन्यु छे तेवु पोताने विशे लेखितवार कबूल करवु जोअीअे। तेम करता वधारे सजा भोगववी पडे तो भोगवे। आ ज प्रायश्चित्त छे। ते पण जो अेनु हृदय ने बुद्धि कबूल करे तो ज।

"'अुपरनु छता जो कअी पण कानूनी गफलत रही गअी होय अने छुटातु होय तो छूटे ज। निवेदनमा ज कहे के निवेदन शुद्धि रूपे छे। कायदानी बारी हशे तो तेनो लाभ लअी छूटशे ज। निवेदननो अूबो अर्थ सरकार न करे।'

"छेल्ला वाक्यनो स्पष्ट अर्थ बापुने पूछता तेना जवाबमा बापुअे कह्यु 'रामनारायणनी कबूलत शुद्धिनें अर्थे छे। छूटवानी वृत्तिथी नही। पण अे कबूलतनो अर्थ सरकार अे पण न करे के अेणे गुनो कर्यो अेम अे कहे छे अेटले अेने रोको अथवा वधारे सजा करो। कायदा प्रमाणे, तो अेम न ज कराय।'"

['रामनारायणको जो कुछ हुआ है अुसे अपने बारेमें लिखित रूपमें स्वीकार करना चाहिये। अैसा करनेसे अधिक सजा भुगतनी पडे तो भुगत ले। यही प्रायश्चित्त है। वह भी अुसका हृदय और बुद्धि स्वीकार करे तो ही।

'अिसके बावजूद यदि कुछ भी कानूनी गफलत रह गअी हो और छुटकारा होता हो तो अवश्य छूट जाय। वक्तव्यमें ही कह दे कि वक्तव्य शुद्धिके रूपमें है। कानूनी गुजाअिश होगी तो अुसका फायदा अुठाकर छूट ही जायगा। सरकार वक्तव्यका अुलटा अर्थ न करे।'

पिछले वाक्यका स्पष्ट अर्थ बापूसे पूछने पर अुसके जवाबमें बापूने कहा. 'रामनारायणका अिकबाल शुद्धिके लिअे है। छूटनेकी वृत्तिसे नही। परन्तु अिस अिकबालका अर्थ सरकार यह भी न करे कि चूकि वह कहता है कि अुसने अपराध किया, अिसलिअे अुसे रोका जाय अथवा अधिक सजा दी जाय। कानूनके अनुसार तो अैसा हरगिज नही किया जा सकता।']

"आशा है ऊपरके वाक्योंसे बापूजीका अभिप्राय स्पष्ट हो जायगा। यदि अुनको रोक रखनेमें कानूनकी गलती रही हो तो अुसके बल पर कानूनी कार्रवाअी करनेमें बाधा नही समझनी चाहिये। यह पत्र पहुचने पर अुत्तर आप मुझे अवश्य दें। यहा कुशल है, आप बालबच्चे वगैरा सब प्रसन्न होगे। मेरे लायक काम लिखते रहे।

श्रीकृष्णदास जाजूका
आशीर्वाद"

यह अुत्तर मुझे कोअी सात महीने बाद मिला। अिस बीच मैंने पुलिसको लिखा कि अब मैं अिस मामलेकी सब बातें बता सकता हू। अिस पर सी० आअी० डी० अिन्स्पेक्टर चौधरी गुलामहुसैन मुझसे मिल गये और अुन्हें मैंने सब बातें कह दी। बापूके अिस अुत्तरका हाल मालूम होने पर २२ मार्च, १९४५ को मैंने चीफ कमिश्नरको यह पत्र लिखा

"I am writing under the advice of Gandhiji

"On August 17, 1942, I wrote a letter from Sevagram to a student in Bangalore advocating a programme of subversive activities

"On October 2, 1943 I finished writing a book of reminiscences in Hindi and at the close of my narrative alluded to the happenings of August 1942, with particular reference to Ajmer-Merwara, in a spirit of criticism of public apathy towards a campaign of defiance including sabotage.

"Although the aforesaid letter was intercepted by the police during postal transmission and the book is still an unpublished manuscript and no harm could have ensued from either, yet I am convinced, as a votary of truth and non-violence and humble associate of Gandhiji, that I was wrong in holding and expressing the views that I did in both the documents, views which were based on a misunderstanding of the alleged parting message of Gandhiji on the eve of his arrest in August 1942 This realization of error was brought home to me by a statement issued by Mahatmaji on the 25th July 1944 refuting certain charges against congressmen by the Home Minister of Sindh and reiterating his unequivocal opposition to acts of sabotage and the like

"I lost no time in endeavouring to make amends to Gandhiji whom I addressed a letter (copy attached) the very next day i e on the 26th July 1944 Unfortunately, your predecessor, for reasons best known to him, turned down my request to allow the letter to reach its destination I was consequently disabled at that time from obtaining Gandhiji's opinion about the necessity of

my addressing Government directly on the subject Only recently have I been able to know his mind and hence this confession

"In concluding I wish to make it clear that this, communication is solely designed as a measure of self-purification and is not actuated by any desire for securing release"

[यह पत्र मैं गाधीजीकी सलाहसे लिख रहा हू।

१७ अगस्त, १९४२ को मैंने सेवाग्रामसे अेक विद्यार्थीको बगलोर पत्र लिखा था, जिसमें तोडफोड़के कामोकी हिमायत की थी।

२ अक्तूबर, १९४३ को मैंने हिन्दीमें अेक सस्मरणोकी पुस्तक लिखना समाप्त किया था और अपने वर्णनके अन्तमें अगस्त १९४२ की घटनाओका अुल्लेख किया था, जिसमें अजमेर-मेरवाडेका जिक्र करते हुअे विद्रोह और तोडफोडके आन्दोलनके प्रति जनताकी अुदासीनताकी आलोचना की थी।

यद्यपि यह पत्र पुलिसने डाकमें ही अुडा लिया था और वह पुस्तक अभी तक अेक अप्रकाशित पाडुलिपि मात्र है और दोनोसे ही कोअी हानि नही हो सकती थी, फिर भी सत्य और अहिंसाके अेक हिमायती और गाधीजीके अेक नम्र साथीके नाते मुझे प्रतीति हो गअी है कि दोनो ही दस्तावेजोमें व्यक्त किये गये विचार रखकर और प्रगट करके मैंने भूल की थी। अुन विचारोका आधार अेक गलतफहमी थी, जो मुझे अगस्त १९४२ में गाधीजी द्वारा अपनी गिरफ्तारीसे पहले दिन दिये गये कथित सन्देशके बारेमें हुअी थी। अिस गलतीका ज्ञान मुझे अुस बयानसे हुआ जो गाधीजीने २५ जुलाअी, १९४४ को जारी किया और जिसमें अुन्होने सिंधके गृहमत्री द्वारा काग्रेसजनो पर लगाये गये आरोपोका खडन किया था और तोडफोड आदिकी कार्रवाअियोके प्रति अपना असदिग्ध विरोध दोहराया था।

मैंने गाधीजीसे क्षमा-याचना करनेमें कुछ भी देर नही लगाअी और अुन्हे दूसरे ही दिन अर्थात् २६ जुलाअी, १९४४ को अेक पत्र लिखा (नकल साथ है)। दुर्भाग्यवश आपके पूर्वाधिकारीने, न जाने क्यो, मेरी प्रार्थना स्वीकार नही की और अुस पत्रको ठिकाने नही पहुचने दिया। अिस कारण अुस समय तो मै गाधीजीकी राय अिस बारेमें प्राप्त नही कर सका कि मुझे सरकारको सीधा लिखना चाहिये या नही। अुनके विचार मैं अभी हाल ही में जान पाया हू और तदनुसार अपना दोष स्वीकार कर रहा हू।

अन्तमें मैं स्पष्ट कर देना चाहता हू कि यह पत्र केवल आत्मशुद्धिके लिअे लिखा गया है। रिहाअीकी किसी अिच्छासे नही लिखा गया है।]

जेलमें बापूका पथ-प्रदर्शन पाकर मुझे बडा बल मिला और जिस समय हमारे अनेको साथी माफिया मागकर और जलील शर्तें मानकर छूट रहे थे अुस समय भी बापूके विचारो और आध्यात्मिक प्रेरणाके प्रभावके कारण दिलमें कमजोरी नही आअी और न परिवारमें गभीर बीमारिया होने पर भी पैरोल पर जानेका ही प्रलोभन हुआ। सरकार पर भी मेरे अुस पत्रका यह असर जरूर हुआ कि अुसने मुझ पर कोअी केस नही चलाया और मुझे सबके बादकी टोलीमें छोडकर ही सन्तोष कर लिया।

२६०

मगर बापू अपने आदमियोंका ही मार्गदर्शन नहीं करते थे। अपरिचित देश-भक्तोंको सहायता देनेमें भी वे उतने ही उदार और तत्पर थे। अिन्हीं दिनों, अजमेर जेलमें अजमेर राज्यके अेक वर्तमान मंत्रीने भूख-हड़ताल कर दी। वे भूतपूर्व सुपरिन्टेन्डेन्टके मित्र थे। अिस कारण जेल कर्मचारियोंको अुनका रुआब मानना और अुनके साथ विशेष व्यवहार करना पड़ता था। जब वह सुपरिन्टेन्डेन्ट बदला और दूसरा आया तो जेल कर्मचारियोंने बदला निकालना शुरू किया। श्री तेजस्वी आदमी थे। अुन्होंने (दूसरोंकी नजरमें) अेक छोटीसी मांग पर जब तक वह पूरी न हो जाय तब तकके लिअे अनशन शुरू कर दिया जो लगभग बीस दिन तक चला। अुन्हें जबरन् दूध दिया जाता था। स्थिति गंभीर होती जा रही थी। अुनकी पत्नी और मित्रोंकी चिन्ता बढ़ रही थी। अन्तमें अिन लोगोंने बापूको यह सब हाल लिखा तो अुन्होंने तुरन्त भूख-हड़ताल तोड़ देनेकी सलाह तार द्वारा भेज दी। अिस प्रकार बापूने अेक देशभक्तके स्वाभिमान और प्राणोंकी रक्षा कर ली और अुसके अिष्टमित्रोंकी मानसिक पीड़ा दूर कर दी।

२६१

कर्नल वरेघाट नामक अेक पारसी सिविल सर्जन जेलके सुपरिन्टेन्डेन्ट थे। अुनके पक्षपातपूर्ण व्यवहारसे राजबन्दियोंमें असन्तोष था और अन्य कुछ कर्मचारियोंके विरुद्ध भ्रष्टाचारकी शिकायत थी। सुपरिन्टेन्डेन्टसे मुलाकात के लिअे कहा गया तो सन्तोषप्रद कार्रवाअी नहीं की गअी। अन्तमें तय किया गया कि राजबन्दियोंके सामूहिक हितों और अधिकारोंके बारेमें चीफ कमिश्नरको अेक पत्र लिखा जाय और यदि अेक विशेष अवधिके भीतर अुसका सन्तोषजनक अुत्तर न मिले तो अेक राजबन्दी भूख-हड़ताल करे। पत्र जुमींदे नामसे भेजा जाना भी निश्चित किया गया। मियाद बीत गअी तो भूख-हड़ताल हुअी। अिस बीचमें चीफ कमिश्नरकी तरफसे राजबन्दियोंके पास तो कोअी जवाब नहीं आया, परन्तु सुपरिन्टेन्डेन्टके नाम अेक गुप्त पत्र आया जो जैसे तैसे कर्मचारी मुझे दिखा गया। अुसका अेक शब्दप्रयोग *ipse dixit* मुझे याद रह गया है। सुपरिन्टेन्डेन्टकी मनमानी पर अुन्हें अुलहना दिया गया था। जिसने वे और चिढ़ गये और कुछ राजबन्दियों पर 'मारपीट' का अिल्जाम लगाकर तंग करने पर अुतारू हो गये। अुस भूख-हड़तालकी मांगोंके कारण भी मेरे मनमें बेचैनी थी। जब मैंने सुपरिन्टेन्डेन्टसे मिलकर अुन्हें सब परिस्थिति बताअी और सुझाव दिया कि या तो राजबन्दियोंकी अुचित मांगें स्वीकार करके अधिकारी भूल-सुधार कर लें या मुझे रुखसत दें। तब वरेघाटने पूछा "आपका क्या कसूर है?" मैंने कहा, "जिस हस्तलिखित सूचिपत्र में ये और चीफ कमिश्नरके नाम भेजे गये पत्रका लेखक भी मैं ही हूं।" सुपरिन्टेन्डेन्टने मुझे अेक सप्ताहकी कालकोठरीका दंड दिया, अुसे

सुनकर मैंने अुन्हे कहा, "आपने मुझे सजा देनेमें रियायत की है जो मैं नही चाहता। आपको कमसे कम दो सप्ताहका अेकान्तवास देनेका अधिकार है। मैं चाहता हूं कि आप वह पूरा ही काममें लें।" सुपरिन्टेन्डेन्टको मेरे रहस्योद्घाटन और मेरी माग दोनो पर आश्चर्य हुआ और अुन्होने कहा, "मेरे जीवनमें अैसा अनुभव यह पहला ही है। मुझे अफसोस है मैं आपकी बात नही मान सकता।" मैंने मन ही मन बापूको नमस्कार किया, जिनके विचारोकी प्रेरणासे अिस प्रकारकी स्फूर्तिया होती रहती है।

२६२

हम कथित गाधीवादियोका जेलमें जैसा चाहिये वैसा आचरण तो नही रहा। आपसमें मनमुटाव रहा, हममें से कुछने चोरीसे मगाये हुअे अखबार छुप छुपकर पढे और गुप्त रूपसे बाहरवालोंके साथ अनधिकृत पत्रव्यवहार भी किया। अेक-दोने सहूलियतोंके लिअे अधिकारियोकी कृपा प्राप्त करनेकी कमजोरी भी दिखाअी और कुछ लोगोने खादी पहननेकी सुविधा होने पर भी थोडेसे आर्थिक लोभमे आधे मिलके सूतवाला कपडा पहननेमें भी दरेग नही किया। कुछ अपमानजनक शर्तों पर छोडे जानेके बाद अुन्हे तोडकर वापस जेल नही आये। फिर भी यह बापूके पुण्यका प्रताप ही समझना चाहिये कि गाधीवादियोका व्यवहार जेलमें और लोगोसे अधिक शोभनीय या कम अशोभनीय रहा और जहा अनेक प्रमुख काग्रेसियो और पदाधिकारियो तकने सरकारसे क्षमायाचना करके जेलसे मुक्ति प्राप्त करनेमें भी सकोच नही किया, वहा गाधीवादियोमें से अेकका भी अिस प्रकारका पतन नही हुआ।

मैंने अिस कारावासमें यह भी देखा कि जो लोग बापूके सम्पर्कमें रह चुके थे या जिनके जीवन पर बापूके विचारोका प्रभाव पडा था, अुनका व्यवहार जेलमें और अुनके घरवालोका बाहर दूसरोकी अपेक्षा अधिक शातिप्रद, स्वाभिमानपूर्ण और सेवामय तथा शालीन रहा। यही हाल खानपानका था। हम लोगोका भोजन काफी सात्त्विक था। मेरे भोजनालयका तो नाम ही राजबन्दियोने वैज्ञानिक चौका रख दिया था। प्रार्थना और शरीरश्रमका कार्यक्रम नियमित रहा। लिखने-पढनेका काम भी काफी हुआ।

२६३

बापूके कमरेमें — झोपडेमे कहना अधिक ठीक होगा — दो चीजो पर अुसमें घुसनेवालेका ध्यान फौरन जाता था। अेक तो कागजके मोटे पुट्ठे पर लिखा हुआ यह आदर्श वाक्य · Do not negotiate when you are weak, keep silence when you are in temper (जब तक कमजोर हो समझौतेकी बात न करो; जब तक गुस्सा है चुप रहो।) मैंने जब पहले-पहल यह वाक्य देखा तो कुछ देर तक अुधर देखता ही रह गया। मेरे मनमें ये विचार आये "अिसमें बापूकी सार्वजनिक और व्यक्तिगत व्यवहार-नीतिका रहस्य आ जाता है। शक्ति हिंसक हो

या अहिंसक, जब तक वह अपने पास नही है, तब तक किसी भी आन्दोलनके बारेमें विरोधी पक्षके साथ सधिवार्ता करना बेकार है। किसी प्रकार जब तक क्रोधका विकार प्रबल है, तब तक बुद्धि पर परदा पड़ा रहता है और मनुष्य कुछ भी ठीक विचार नही कर सकता। उसे उलटी ही उलटी सूझती है। इसलिअे सम्यक् विचारके लिअे मनका शान्त होना जरूरी है। वाणीका सयम इसके लिअे अनिवार्य शर्त है।"

मेरी इस मुद्रा पर बापूका ध्यान गया तो कहने लगे: "यह वाक्य जितना सार्थक है उतना ही सरल है। परन्तु मेरे गुरुको भी जानते हो?" मैं जानता था कि बापू राजनीतिमें गोखलेको गुरु मानते थे और रस्किन, टॉल्स्टाय और थोरो तथा रायचदभाअीका उनके विचारो पर बहुत असर पडा था। परन्तु उन्होने किसीको सामान्य अर्थमें गुरु नही बनाया है और जीवित मनुष्योमें तो कोअी उनका विशेष अर्थमें भी गुरु न तो है और न होने लायक है। मैंने उत्तर दिया, "जी नही।" तो अपनी डेस्ककी तरफ इशारा करके बोले, "वे देखो, अेक नही, मेरे तीन तीन गुरु है।" उनका मतलब बन्दरोकी तीन चीनीकी मूर्तियोंसे था। उन्होने बताया कि ये उन्हे अेक जापानी यात्री भेंट कर गया था। इन बन्दरोमें से अेकके दोनो हाथ कानो पर रखे हुअे थे, दूसरेके आखो पर और तीसरेके मुह पर। बापूने क्रमश यह अर्थ समझाया कि "बुराअी न सुनो, बुराअी न देखो और बुराअी न करो।" अवश्य ही बापूकी यह वृत्ति थी और यदि उन्हे बुराअी सुननी, देखनी या कहनी पडती थी, तो केवल सुधारके लिअे कर्तव्य-पालनकी दृष्टिसे।

२६४

जनवरी १९४१ में वर्धामें काग्रेस महासमितिका अधिवेशन था। मौलाना अबुल कलाम आजाद सभापति थे। उन दिनो बापू और काग्रेस कार्यसमितिके कथित मत-भेदोकी अखबारोमें बडी चर्चा थी। भारतीय स्वातत्र्यके विरोधी बातका बतंगड बनाकर उससे अनुचित लाभ उठाना चाहते थे। अध्यक्षकी हैसियतसे मौलाना साहबने इन शानदार शब्दोमें अपनी और अपने साथियोकी ओरसे सफाअी दी. "लोग हमारे मतभेदोकी बात करते है। वे नही जानते कि हमारे आपसके क्या ताल्लुकात है। वे निरे नियासी नहीं, धरू है। गाधीजी इस कुनबेके बुजुर्ग है। उनके हिलाये बिना इस घरमें अेक पत्ता भी नही हिलता। वे जो हुक्म दें उसे हम टाल नही सकते। मगर हमारा यह सरदार अजीबोगरीब किस्मका है। वह अपनी कभी नहीं चलाता। हमें पूरी आजादी देता है कि जो हमारा दिलोदिमाग कहे वही करे। हम करते है और जब कोअी रास्ता नही सूझता या कोअी भूल हो जाती है, तो हम इसके पास रोशनीके लिअे पहुच जाते है। वह रोशनी हमें हमेशा मिल जाती है।" इसका उत्तर बापूने भी उतने ही गौरवपूर्ण ढगसे दिया· "मौलाना साहबने जो कुछ कहा वह आपने सुना। वह ठीक ही है। मतभेदके सिलसिलेमें सबसे ज्यादा नाम जवाहरलालका लिया जाता है। लेकिन मेरा तो राजनीतिक उत्तराधिकारी वही

होगा। अुसका दिल तो मेरी जेबमें है ही, दिमाग मैं किसीका छीनना नही चाहता। वह काम तो आज भी मेरा ही करता है। सिर्फ भाषा अुसकी अपनी होती है। परन्तु मुझे विश्वास है कि मैं मर जाअूगा तब वह भाषा भी मेरी ही अिस्तेमाल करेगा।" मैंने देखा कि जवाहरलालजी मसनदके सहारेसे अुचककर अुसके अूपर जा बैठे और अुनके चेहरेसे साफ झलकता था कि वे अनोखा गर्व अनुभव कर रहे है बापूके अिस स्नेह और वात्सल्यपूर्ण अैलानसे। श्रोतागण चकित थे कि गाधीजीने अपने अनन्य अनुयायी सरदार वल्लभभाअी, राजेन्द्रबाबू या राजाजीको अपना वारिस न बनाकर अैसे आदमीको चुना जिससे कअी बातोमें अुनके विचार नही मिलते थे। मगर गाधीजीकी राजनीतिमें हर जगह त्याग, अुदारता और अुदात्तता भरी थी। वे जैसे महान थे वैसा ही अेक महान निर्णय अुन्होने बातो ही बातोमे अैसे स्वाभाविक ढगसे घोषित कर दिया, जिसने नेताकी निष्पक्षताकी अमर छाप जन-मानस पर लगा दी और भारतीय सार्वजनिक जीवनमें वीर्षद्वेष और महत्त्वाकाक्षाओके सघर्षको चिर काल तक टाल दिया। अनुभवने बता दिया कि बापूका चुनाव कितना सही था और जवाहरलालजीने देशमें अल्पसख्यकोकी रक्षा और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिमे शान्तिके बापूके सन्देश पर कितनी सफलतासे अमल किया है।

२६५

सन् १९४५ में जेलसे छूटने पर जब मै सेवाग्राम पहुचा तो गोसेवा सघकी योजनामें परिवर्तन हो गया था। कार्यकर्ताओने जो व्यवस्था सुझाअी वह अुससे भिन्न थी जो बापूने सन् १९४२ में जमनालालजीके निधनके बाद मुझे बताअी थी। जब अिस नअी व्यवस्था पर विचार किया जा रहा था, तब बापू मौन रहे और अुन्होने अपना प्रस्ताव वहा रखा तक नही। मुझे अिस पर आश्चर्य हुआ। शामको घूमते समय मैंने बापूसे अुनके चुप रहनेका कारण पूछा तो कहने लगे, "मेरी रायमें कोअी फर्क नही पडा है। मगर मै अपना मत किसी पर थोपता नही हू। बिना मागे सलाह देकर मैं किसी पद पर अपने आदमीको बिठा भी दू, तो अिससे अुनका स्वाभिमान नही रहता और दूसरोका सहयोग नही मिलनेसे वह काम भी नही कर सकता। आज नही तो कल अनुभवसे अुन्हे अपना निश्चय बदलना पडेगा, बशर्ते कि काम ही मुख्य हेतु हो।" जहा लोग पदोके लिअे लडते हो और आपसमें खटपट करते हों, वहा बापू अपने आदमियोको अिन चीजोसे बिलकुल अलग रखते थे। अुनकी स्वाभिमानकी व्याख्या भी साधारणसे भिन्न थी। किसी योग्य आदमीके योग्य स्थान पर न लिये जानेको वे अुसका अपमान नही समझते थे, अुनके जवरन् थोपे जाकर अनपेक्षित और असफलताका कारण बननेमें स्वाभिमानकी हानि मानते थे।

२६६

बापूकी सत्यपूजा अुनके शौर्य और साहसमें खामकर प्रगट होती थी। जिन चीजको वे सही समझते थे, अुन पर अमल करनेमें वे लोकलाज या समाजके भयसे, विरोधियों द्वारा दुरुपयोग होनेसे या किसी भी जोखिमसे डरते नहीं थे। अुस पर अमल करने लगते थे। जिस साहस और शौर्यका अेक असाधारण पहलू यह था कि वे जो कुछ करते थे खुलेआम करते थे। अुनका जीवन अक्षरश. खुली किताब था। पुराने ढंगके साधकोंका रहन-सहन खान-पान, अध्ययन और अभ्यास अेकान्तमें होता था। बापूका सब कुछ सामूहिक और खुले ढग पर होता था। वे मानते थे कि मोक्षके प्रयत्नोंमें भी दूसरोंको हिस्सेदार बनाना व्यक्तिगत साधनासे कहीं श्रेयस्कर है।

किसी तरह वे प्रलोभनोंसे भाग कर साधना करनेसे अुनके बीचमें रह कर अुनसे अूपर अुठनेके हिमायती थे। वे गृहस्थीमें रह कर सन्यासीका आचरण करते थे, स्त्रियोंके साथ काम करते हुअे ब्रह्मचर्य और सयमका पालन पसद करते थे, धन होते हुअे भी अुनका मालिक बननेके बजाय नरलक बनकर गरीबोंकी सेवाके लिअे सादगी रखनेके पक्षमें थे, बदला लेनेकी ताकत होने पर भी क्षमा करने और हिंसाकी शक्तिके बावजूद अहिंसाका पालन करनेके हिमायती थे तथा पद और प्रतिष्ठाके मिलते हुअे भी अुनसे दूर रहने और मिल जाने पर भी पानीमें कमलकी तरह अुनसे निर्लिप्त रहनेके समर्थक थे।

२६७

अपनेसे बडी अुम्रवालोंके प्रति व्यवहारमें हर हालतमें आदरभाव रखनेकी भारतीय परपराको वे बड़ी कद्र करते थे और छोटोंसे अुनकी आशा ही नहीं अुनका आग्रह भी रखते थे। वे स्वय तो अुस पर अमल करते ही थे। जिन लोगोंने अुन्हें कवीन्द्र रवीन्द्रके बड़े भाभी 'बड़ा दादा' के सामने बैठते और महात्मा मालवीयका अुठ कर स्वागत करते और विदा करते समय पहुचाने जाते देखा है वे जिनके साक्षी हैं। जो लोग दूसरोंके प्रेम या सम्मानके भाजन होनेके कारण काका, मामा, गुरुदेव आदि नामोंसे मशहूर हो जाते थे, अुन्हें छोटे होने पर भी बापू जिन्हीं नामोंसे सम्बोधन करके अुनकी अिज्जत करनेमें शरीक होते थे।

२६८

हमारे समाजमें खानपानके तरीके जितने दूषित हैं कि अिससे समय, शक्ति और धनका अपव्यय तो होता ही है, मगर स्त्रियोंकी अुनसे खास तौर पर दुर्दशा होती है। अुन्हें न केवल स्वास्थ्य-हानि ही होती है, प्रत्युत राष्ट्रका आधा अग राष्ट्रीय सेवाके लिअे लगभग निकम्मा बन जाता है। स्त्रियोंको दिन भर चूल्हेकी शिकार बन कर आँखें खो देनी पड़ती हैं और रातको भी कअी जातियोंमें तो बारह

बारह बजे तक पुरुषोंको खिलाने-पिलानेके लिअे जागना पडता है। बापूने अिस दुराअीको मिटानेके लिअे दो व्यावहारिक अुपाय किये। अुन्होंने अपने आश्रमोमे सूर्यास्तके पहले भोजनका नियम बनाया, ताकि रात पडने तक स्त्रियोंको रसोअीघरसे छुट्टी मिल जाय। अवश्य अिसमें भी बापूका आध्यात्मिक हेतु तो था ही। दूसरे, अुन्होंने खाना बनाने और परोसनेमें पुरुषोंको भी स्त्रियोंका हिस्सेदार बनाकर अुनका यह भार ही हल्का नहीं कर दिया, साथ ही मर्दोंको अनुभव कराया कि औरतोंके प्रति अुनके व्यवहारमें कितना अत्याचार है।

२६९

मुझको लम्बे अर्सेसे स्वप्नदोषकी बीमारी थी। आश्रममें आनेके बाद वह, जैसी कि आशा की जाती थी, वहाके पवित्र वातावरणमे कम होनी चाहिये थी। मगर वह और भी बढ गअी। मुझे अिससे लज्जा हुअी और अिष्ट मित्रोंको आश्चर्य। बहुत समय तक तो मैंने अिसे बापूसे छिपाया, मगर बादमें अुन्हे कहना ही पडा। अुन्होंने कटिस्नान, रातके समय अेनीमा, मिट्टीकी पट्टी और कअी अुपाय बताये, जो मैंने किये परन्तु सब बेकार गये। तब अुन्होंने मुझसे कारण पूछा। मैंने अुन्हे अपनी यह राय बताअी कि आश्रमका ११ और ५ बजेके बीच दोनो पूरे भोजनोंका समय, खानेमें तरल पदार्थोंका बाहुल्य और गरम गरम खुराक ही मुख्य कारण होने चाहिये। यह बात अुस समयकी है जब मै गोसेवाकी तालीमके लिअे बगलोर जा रहा था। बापूने कहा "मेरा खयाल तो यह नही है, मगर तुम्हारा कोअी सुझाव हो तो बताओ।" मैंने अजमेरके अपने स्वर्गीय मित्र प० रामचद्रजी वैद्यकी सूचनाअें सुनाअी। वे ये थी "दोनो समयके खानोंके बीचका समय कमसे कम आठ घटे रखें। अिसमे भी खूब भूख लगे तभी खाये। खानेके समय पाव भर दूधसे अधिक न लें और पतली चीज कम लें। पानी खानेके बाद तीन घटेसे पहले न पियें। खानेके बाद और खास कर रातको बहुत देर न बैठें। भोजन तो सात्त्विक होना ही चाहिये।" बापू बोले, "मैं ये सुविधायें यहा भी दे सकता हू। परन्तु अब तो तुम बगलोर जा रहे हो। वही यह प्रयोग करके देखो। अिससे आश्रमके नियमोमें अपवाद भी नही होगा। प्रयोग सफल हो गया तो मेरे भी अेक नअी चीज हाथ लगेगी।" मैंने पाच महीने अिस नुस्खेको आजमाया तो वह अक्सीर साबित हुआ। अुसके बाद मुझे स्वप्नदोषका रोग हुआ ही नही। अिसके कोअी साढे तीन वर्ष बाद जब हम मिले तो पहला प्रश्न बापूने अिसी विषयमें किया और अुत्तर पाकर प्रसन्न हुअे।

२७०

रियासतोंके अेक प्रमुख लोकसेवककी व्यक्तिगत कमजोरियां बापूको मालूम थीं। अुनके प्रतिद्वंद्वीकी, जो बापूके अधिक निकट थे, दुर्बलताओंका — कमसे कम अेक विशेष दुर्बलताका — बापूको पता नहीं था। वे मुझ पर स्नेह रखते थे। मुझे अुनके दोषका पता था। शायद १९३६ में वे अचानक बीमार हो गये और थोड़े ही दिनोंमें चल बसे। अुनकी अेक दिन चर्चा चल पड़ी तो बापूने पूछा "अकस्मात् . . . न जाने कैसे बीमार हो गये थे। तुम्हें कारण मालूम है?" कारण मुझे मालूम था, मगर मैं ठिठका कि कहीं बापूको धक्का न लगे। मगर बापूसे बच निकलना कठिन था। साहस करके बोला "हां बापू, मालूम है। . मैं भी वही दुर्बलता थी जो अुनके प्रतिद्वंद्वीमें है। पहले तो वह प्रतिद्वंद्वीको मालूम नहीं थी, पिछले कारावासके समय वह मालूम हो गयी। . . को अिससे आघात लगा। अुन्हें भय हुआ कि प्रतिद्वंद्वी अिनका दुरुपयोग करेंगे। अिसी डरसे बेचारे मर गये।" बापूको सचमुच धक्का लगा। मेरे खयालसे वह धक्का अितना . . की दुर्बलताकी बातसे नहीं लगा जितना अिस बातसे कि . . के मरनेसे पहले अुन्हें अिस बातकी जानकारी नहीं हुअी, अन्यथा वे अपने अलौकिक प्रेम और वात्सल्यसे . . को शान्ति देते और मानसिक आघातके असरसे बचानेका प्रयत्न अवश्य करते। बापूने अधिक न कह कर अेक गहरा निःश्वास लिया और अितना ही कहा. "देखो, . . . अप्रतिष्ठाके भयसे मर गये और . . निर्लज्ज होकर अैश कर रहा है। पाप तो सभी करते हैं, परन्तु भले और बुरेमें यही फर्क है।"

२७१

सन् १९४० की बात होगी। मैं नगरिवार वर्धा पहुंचा तब सेवाग्राममें जगहका अभाव था। अिसकी सूचना बापूने मुझे पहले ही दे दी थी। अिसलिअे हम जाजूजीके घर पर ठहर गये। अुसके अेक-दो दिन बाद ही चरखा-संघकी बैठक बजाजवाड़ीमें हुअी। कअी घंटे चली होगी। शामको देरसे खतम हुअी। जब सब बिखरने लगे तो बापूने जाजूजीको बुलाकर कहा. "आपसे अेक बात करनी है। राननारायण नगरिवार आये हैं। सेवाग्राममें अभी स्थानकी बड़ी कमी है। आप अुनके लिअे कुछ समयके लिअे प्रबंध कर दें तो मेरे मन पर बोझा न रहे।" जाजूजीने दूसरे ही दिन व्यवस्था कर दी। मेरे मन पर यह स्थायी छाप पड़ी कि बापू अपने साथियोंकी आवश्यकताओंका कितना ध्यान रखते थे और अुनकी कठिनाअियां हल करनेमें अुन्हें कभी विस्मृति नहीं होती थी। वे कितने व्यस्त थे और मैंने अुन्हें याद भी नहीं दिलाअी थी!

२७२

बापूका नियम पालन गजबका था। दोनों समय डेढ मील घूमना अुनका [illegible] नियम था। अिसमें वे रेलके सफर या बीमारीके सिवा कभी नहीं चूकते थे। मैंने देखा कि जब बरसात पड रही होती तब वे सेवाग्रामके [illegible] भवनके बरामदेमें ही घूम कर अपना नियम जरूर पालन कर लेते थे। [illegible] दिनमें अवकाश न मिलनेसे वे वहाकी बर्फीली ठंडमें भी [illegible] जाते थे। यहा भी समयाभावसे जब कभी दिनमें कातना न हो [illegible] सोनेसे पहले चरखा लेकर बैठते और अपना १६० तार [illegible] थे। खानेके समयकी पाबन्दी भी अुनकी असाधारण थी। [illegible] चीतमें देर हो जाती और अुसे बीचमें छोडा नहीं जा सकता, [illegible] करते करते भी वक्त पर भोजन कर ही लेते थे। अुनके [illegible] दूसरे लोग — बडेसे बडे — भी कद्र करते और अुनमें [illegible] थे।

२७३

तुम लोग बापूको मरने देना पसद करोगे? अगर ये शरण आये हुअे मुसलमान मारे गये तो बापूके मरनेमें सहायक होगे और अगर बचा लिये गये तो बापूके जिन्दा रहनेमें मदद मिलेगी।" अिस अपीलका दोनो पर चमत्कारी प्रभाव पडा, अुन मुसलमानोको मकानमें पनाह दी गअी और वे दूसरे दिन पुलिसकी रक्षामें घर भेज दिये गये। अिस प्रकार कोअी दर्जन भर प्राणियोको बचा लिया गया। गुडोके दिलोमें भी बापूके प्रति अितना पूज्यभाव था! अनलमें बापूका यह खयाल सही था कि साम्प्रदायिक दगोमें कथित गुडे अितने दोषी नहीं जितने टट्टीकी आडमें शिकार खेलनेवाले पढेलिखे और राजनीतिक लोग हैं, जो अिन्हे अपना अस्त्र बनाते है।

२७४

अुन दिनो पूर्व बगाल जानेवाली रेलगाडियोके दूसरे दर्जेके डब्बे हिन्दुओ और मुसलमानोके लिअे अलग-अलग लगते थे। मुझे त्रिपुरा जाना था। स्टेशन पर पहुंचने पर मालूम हुआ तो रिजर्वेदारोने गाधी टोपी अुतारने और हिन्दू डब्बेमें बैठनेकी सलाह दी। अुस वातावरणमें साधारण हिन्दूसे भी काग्रेसी ज्यादा कोपभाजन माना जाता था और गाधी टोपी काग्रेसी होनेकी निशानी थी। अिसलिअे वह ज्यादा जोखिमकी चीज थी। साहसी तबीयत तो थी ही, अिस तरह खतरा देखकर चोला बदलनेमें कायरता लगी। साथ ही बापूके अेक छोटेसे साथीके नाते भी अैसा करना अशोभनीय दिखाअी दिया। यह भी खयाल आया कि कभी बापू सुनेंगे तो क्या कहेंगे? मैंने सवविधोकी चेतावनीकी परवाह न करके निर्णय किया कि न केवल टोपी ही न अुतारी जाय, बल्कि मुसलमानोके डब्बेमें ही बैठा जाय। हा, शौर्यके साथ कुशलतासे भी काम लेनेका निश्चय किया। डब्बेमें घुसते ही अुनमें बैठे हुअे चारो पाचो मुसाफिरोको मैंने ध्यानसे देखा तो अुनमें से अेकके कपडे रगीन होने पर भी खादीके मालूम हुअे। मैंने अुसीके पास आसन जमाया। जाते ही मैंने गाधीजी और साबरमती तथा सेवाग्रामकी बातें शुरू कर दी। फल यह हुआ कि मुसलमान यात्री अैसे घुलमिल गये कि सारा सफर हम लोगोका साथ साथ खेलते, खाते और हसी-दिल्लगी करते हुअे पूरा हुआ। मुझे यह देख कर सानद आश्चर्य हुआ कि अुस दूषित वातावरणमें भी मुसलमानोके दिलोमें गाधीजीका कितना सम्मान और अुनके हालचाल सुननेका कितना चाव था!

२७५

गोलदोमे जब मैं जहाज पर सवार हुआ तो वहा मेरे और मेरे अेक रिश्तेदारके सिवाय सैकडो यात्रियोमें शायद ही कोअी हिन्दू होगा। गाधी टोपी तो सिर्फ मेरे ही सिर पर थी। मेरे चारो ओरके मुसाफिर बडी अुत्सुक दृष्टिसे मेरी ओर देखते थे। शायद मुझे बडा अदूरदर्शी समझते होगे। दुसाहसी तो अवश्य मानते होगे। कुछ

अच्छा शिकार मिलनेकी कल्पना करते हो तो भी कोअी आश्चर्य नही। अस्तु, जब मैं अपनी केबिनमें पहुचा तो जहाजकी अंग्रेज कपनीका अेक हिन्दू गुमाश्ता आकर धीरेसे कानमें कह गया कि, "बाबू, आपकी बदकिस्मती यहा ले तो आअी है, मगर जानकी खैर चाहते हो तो अपनी कोठरीमें ही रहिये, बिधर अुधर न निकलें।" मेरे लिअे जहाजका सफर वह पहला ही था, अिसलिअे देखने-भालनेकी अुत्सुकता भी कम नही थी। मैं अुस भले आदमीकी सीख मानकर डेककी तरफ तो नही गया, मगर केबिनोमें चक्कर लगाने लगा। गाधी टोपी जानबूझकर सिर पर रखी। शायद अिसीको देखकर केबिनसे निकलकर अेक और खद्दरधारी बगाली मेरे पास चले आये। वे नोआखलीके अेक काग्रेसी कार्यकर्ता थे। अिससे हम दोनोको ही काफी अितमीनान हुआ। पूछने पर अुन्होने बताया कि नोआखलीमें जितनी धन-जनकी हानि अखबारोमें बताअी गअी है अुतनी तो नही हुअी, परतु मानव क्रूरताका जो ताडव नृत्य हुआ अुसमें वहाके कुछ हिन्दू काग्रेसियोकी अनुपम निर्भयताका वर्णन सुनकर मुझे अपना साहस फीका मालूम हुआ और मेरी हिम्मत और बेखौफी और भी बढ गअी। बापू अुन दिनो नोआखली क्षेत्रमें ही थे और अुक्त कार्यकर्ताने बताया कि बापूकी अुपस्थितिसे कैसे वहाके हिन्दुओमें विलक्षण साहस और मुसलमानोमें हृदय-परिवर्तन नजर आ रहा है। मैंने मन ही मन बापूकी महानताको प्रणाम कर लिया।

२७६

जहाज पर अंग्रेजी ढगसे खाना खिलाया जाता था। अपने रामके लिअे अिस तरह भोजन करनेका प्रथम ही अवसर था। मेरे पासमें लाहौरमें व्यापार करनेवाले अेक यूरोपियन दपति बैठे थे और सामने दो अमरीकी मिशनरी थे। चारोही मुझसे परिचय करनेकी अिच्छा दिखाअी दी। अैसे वातावरणमें गाधी टोपी और खादीके कपडे पहने देखकर अुन्होने मुझे गाधीजीका ही आदमी समझा होगा। मजे भी छुरी-काटेकी भोजन प्रणालीसे परिचय प्राप्त करना था। पास बैठी हुअी महिलासे सीधा ही सवाल कर बैठा "मैं मेजके नियमोसे अनभिज्ञ हू। क्या आप कृपा करके मेरी मदद करेगी?" महिलाने तपाकसे कहा, "जरूर! मगर क्या मैं जान सकती हू कि आपका गाधीजीसे व्यक्तिगत परिचय है?" जब मैंने यह कहा कि मैं अुनके साथ कअी साल तक रहा हू, तब तो वे चारो आदमी मानो मेरे चिपट ही गये। न केवल अुस दोपहरको ही बल्कि शामके खाने पर भी वे मुझसे बापूके बारेमें प्रश्न करते रहे। कुछ जिरह भी हुअी, कुछ टीका-टिप्पणी भी हुअी, मगर अितना स्पष्ट था कि वे सभी बापूको अेक महापुरुष मानते थे और अहिंसाके अुनके प्रयोगको ऊचे ध्यान और सहानुभूतिसे देखते थे। सयोगवश चारो ही पिछले दोनो महायुद्धोमें अपनी धन-जन खो चुके थे। अिसलिअे चारो ही अिस बात पर सहमत थे कि यदि गाधीजी सफल हुअे और ससारसे युद्धका काला मुह हो गया, तो गाधीजी मानव-जातिके सबसे बडे अुपकारक माने जायगे।

२७७

लौटते समय मैं अकेला ही रह गया था। मेरे संबंधी पहले चले आये थे। डाकेके पास पहुचते पहुचते मेरा डब्बा सूना हो गया। अतमें मैं अकेला मुसाफिर था। मनमें कुछ भय हुआ कि जिन दंगे-फसादके दिनोंमें दो गुडे घुस आवें और मार डालें तो? जब डाका अेक स्टेशन रह गया तो पता चला कि वहा आज भीषण दगा हो रहा है और हिन्दुओ पर आफत आयी हुअी है। जिससे अंदेशा और भी बढ गया। मैंने किसी तरह साहस बटोरा और हत्थ मामूल रेल्वे स्टेशन आते ही गाधी टोपी सिर पर रखी। जितने हीमें तीन-चार मुसलमान नौजवान नेकर पहने और बन्दूकें हाथमें लिये डब्बेमें घुसे तो क्षण भरके लिअे कल्पना हुअी कि आज खैर नहीं। परतु जल्दी ही मालूम हो गया कि यह राजकर्मचारियोका अेक शिकारी दल था जो आखेट पर जा रहा था। मैंने अुनसे बातचीतका सिलसिला जारी किया तो अुन्हे भी गाधीजीके हालचाल सुननेको वैसा ही अुत्सुक पाया, और बापूके व्यक्तित्व और विचारोंके प्रति अुनमें अुतना ही आदरभाव देखा जितना अन्य मुस्लिम मुसाफिरोमें देख चुका था। मेरा अुर्दू भाषा और अिस्लाम धर्मका अभ्यास भी अिस यात्रामें खूब काम आया। मुझे यह भी अनुभव हुआ कि हिन्दू राष्ट्रीय कार्यकर्ताओंने शुरूसे मुसलमान वर्गों और जनसाधारणके साथ जितना चाहिये अुतना घनिष्ठ सम्पर्क न रखकर और केवल मुसलमान कार्यकर्ताओंके लिअे ही अुस क्षेत्रको छोडकर गभीर भूल की थी।

२७८

आशादहन और आर्यनायकमूजीकी जोडी सेवाग्राममें कभी दृष्टिबोंसे अनुपम थी। जिनका अन्तर्वर्मीय, अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह हुआ था। दोनोंकी मातृभाषाअें अलग-अलग होनेके कारण और अंग्रेजीके दोनो विद्वान होने पर भी अुन्होंने घरमें राष्ट्रभाषा हिन्दीको ही अपने व्यवहारका माध्यम बनाया था। बापूके संसर्गसे सब कुछ छोडकर आश्रमजीवन अपनाया था। अुनके अेक पुत्र और पुत्री थी। दुर्भाग्यवश पुत्रने कुनैनकी मीठी (Sugar-coated) गोलिया बहुतसी अेक साथ खा ली और लाख अुपाय करने पर भी अुनकी मृत्यु हो गअी। माता-पिताको तो बिकलौते बेटेसे वचित होने पर जो आघात पहुचा होगा, अुसकी कल्पना ही की जा सकती है, परन्तु आश्रमवासियोंमें भी अिस असामयिक और दुर्घटनापूर्ण मौत पर मातम छा गया। बापूने अिस घटनाको दो दृष्टिबोंसे देखा, अेक व्यक्तिगत और दूसरी सामाजिक। व्यक्तिके स्वार्थको अुन्होंने शोकविह्वल माता पर अपना सारा स्नेह और वात्सल्य अुडेल दिया। बालककी अन्त्येष्टि क्रियामें शरीक हुअे और कअी रोज तक लगातार पहाडी पर जाकर अुसकी समाधिकी यात्रा करते रहे। साथ ही हमारी गृहव्यवस्था और बालशिक्षा प्रणालीमें जो दोष हैं अुन्हें बताते हुअे अुन्होंने जिस प्रकार सुधारनेकी प्रेरणा भी की जिससे अिस प्रकारकी दुःखद घटनाओंकी पुनरावृत्ति न हो। वे हर विपत्तिको अीश्वरीय संकेत समझकर अुससे पाठ ग्रहण करनेका अुपदेश देते थे। सचमुच हम

घरोंमें चाहे जो वस्तु चाहे जहा न रख दें और बच्चोंको विना पूछे कोंओ भी चीज न लेनेकी तालीम दें तो अैसी दुर्घटनाअें न हों।

२७९

मैंने १९४२–४५ की नजरबन्दीमें "गाय बनाम भैंस" शीर्षकसे अेक निबंध अंग्रेजीमें लिखा था। बापूको पढनेको दिया तो सेवाग्राममें पचगनी ले जाकर अुसे पढा। वह अुन्हें पसन्द भी आया, मगर अुसके वैज्ञानिक तथ्योंकी जांच नर्सीगराव और डा० सुशीला नय्यरसे कराये बिना पास नहीं किया। जिस प्रकार जहा बापू साथियोंका प्रोत्साहन देते थे, वहा जिस विषयको खुद अच्छी तरह नहीं जानते थे अुस पर अपनी स्वीकृतिकी मुहर न लगानेकी सावधान नम्रता भी रखते थे। मगर अिस सम्बन्धमें अधिक अुल्लेखनीय बात यह हुअी कि निबंधको डाक रजिस्ट्री द्वारा भेजकर ज्यादा खर्च करनेके बजाय वर्तमान समदके अध्यक्ष दादासाहब मावलंकरके पुत्रके हाथ भेजा। बापूने मुझे पहले ही लिख दिया था कि वे दो-चार दिनमें आनेवाले हैं, अुन्हींके साथ निबंध लौटाअूंगा। मितव्ययिताकी हद हो गअी!

मेलेमें जा रहे थे। देश भरमें दगे-फसाद हो रहे थे। सब मुसाफिर गाडीसे बाहर निकलकर मैदानमें पडे थे। मैं भी अपनी गाधी टोपी लगाये बिस्तर पर बैठा था। इतनेमें अेक खादीधारी युवक जो नगे सिर था आया और कहने लगा "मुसलमानोमें अैसी सुरसुराहट हो रही है कि हिन्दू मुसाफिरो पर हमला कर दिया जाय। कृपा करके टोपी अुतार लीजिये।" मेरा पहला खयाल बापूकी ओर गया। मनने कहा, "यह गाधीजीके साथी होनेका चिह्न है। अिसे कैसे कलकित किया जाय? कुछ भी हो, टोपी नही अुतरेगी।" यही बात मैंने अुस भाअीसे कह दी और यह प्रस्ताव किया "मुझे तो मुसलमानोसे द्वेष नही है। बापूने जो प्रेम सिखाया है अुसका तकाजा है कि डरने या वैरभावके वजाय सकटग्रस्त मुसलमान यात्रियोकी सेवा की जाय।" मैं अुठ खडा हुआ और वह भाअी भी मेरे साथ हो लिया। हमने हर डब्बेके पास जाकर देखा और पूछा कि किसीके चोट तो नही आअी, किसीको पानी तो नहीं चाहिये और किसी तरहकी मददकी जरूरत तो नही? नतीजा यह हुआ कि मुसलमान यात्रियोके साथ हमारी मित्रता हो गअी और हम दो हिन्दू यात्री थे जिन्हे अुन्होने अपने डब्बेमें बिठाया और भीलवाडे पर मुसलमानोका लाया हुआ खाना आग्रहपूर्वक खिलाया।

२८२

अुन्ही दो वर्षोमें कअी राजाओसे मिलनेका काम पडा। मैंने देखा कि सभीका यदि किसी अेक नेताके सद्भावमें विश्वास था तो वे महात्मा गाधी थे। अिस दौरेमें मध्यभारतके अेक छोटे राजासे मुलाकात हुअी। वे अपने यहाके प्रजा-मडलके कार्यकर्ताओसे बडे क्षुब्ध थे। आपसमें व्यक्तिगत कटुता अितनी आ गअी थी कि अेक ओरसे झूठे आक्षेपोका और दूसरी ओरसे नृशस दमनका आश्रय लिया जा रहा था। हिंसा तककी नौबत आ रही थी। दूसरी ओरसे प्रतिहिंसाकी सभावना थी। राजा नौजवान आदमी थे और अुनकी रानी और भी नवयुवती थी। बहुत सुन्दर जोडी थी। गाधीजीके साथीके नाते अुन्होने मुझसे पर्दा तोड दिया और अपने पतिदेवको समझानेका अनुरोध किया। मैंने राजा साहबको समझाया कि अैसे समय बापू राजा और व्यक्तिकी हैसियतमे अुन्हे क्या सलाह देते। मैंने बताया "शासनके नाते आप प्रजाको दायित्व-पूर्ण शासन देकर अुसके प्रथम सेवक होनेका सबूत दीजिये। अिस प्रकार आप आन्दोलनकी जड ही काट देंगे। व्यक्तिके रूपमें आप वुराअीका बदला भलाअीमें दें, दण्ड देनेकी शक्ति होने पर भी अपने विरोधियोको क्षमा कर दें और हिंसाके सामर्थ्यके बावजूद अहिंसाका व्यवहार करे। अिसमे निजी सबधोमें कायापलट हो जायगी। वैसे भी जो चीज कालबाह्य कल जबरन् करा लेगी वह स्वेच्छासे आज कर देना प्रथम श्रेणीकी दूरदर्शिता है।" "वे लोग अिसे मेरी कमजोरी समझें तो?" राजा साहबको शका हुअी। मैंने कहा . "गाधीजी यह मानते हैं कि गलती सुधारने या सही बात करनेमे कोअी हमारी दुर्बलता समझे तो भले ही समझे। अिस

कारण हम स्वधर्म पालन न करे यह ठीक नही।" राजा साहबने विचार करनेका वचन दिया। कुछ दिन बाद रानी साहिबाका १४-५-'४७ का मेरे पास जो पत्र आया उसमें अुन्होने लिखा, " पूज्य पिता, आपने मुझे अुबार लिया।" अिस प्रकार बापूके नाम और कामका असर अमीर-गरीब सब पर पर पडता और अुनके जीवनको कृतार्थ करता था। रानी साहिबाकी अिस कृतज्ञताका कारण अेकमात्र यही था कि बापूकी विचारसरणी और व्यवहार-पद्धतिसे प्रभावित होकर राजा साहबने अनिष्ट मार्गको छोडकर सही रास्ता अपनाकर अपनी पत्नीको निश्चिंत कर दिया था।

२८३

जनवरी १९४२ की बात होगी। श्री बलवन्तराय मेहता देशी राज्य लोक-परिषद्के मत्री और डॉ० पट्टाभि सीतारामैया अध्यक्ष थे। श्री बलवन्तरायने श्री अमृतलाल सेठका नेतृत्व छोडकर सरदार वल्लभभाअीके पथप्रदर्शनमें काम करना स्वीकार कर लिया था। सरदार चाहते थे कि वे काठियावाडमें ही रहकर काम करे। मगर वे मत्रीपद छोडनेसे पहले चाहते थे कि अुस स्थान पर कोअी अनुभवी कार्यकर्ता प्रस्थापित हो जाय। मुझसे गोपुरी आकर मिले और वह जिम्मेदारी सभालनेका आग्रह किया। मुझे अपने पुराने क्षेत्रका मोह हो आया और मै अुन्हे अिनकार न कर सका। लेकिन क्षण भरमें सभलकर बोला, "मै जमनालालजी और बापूकी स्वीकृतिके बिना यह भार नही अुठाअूगा।" तय हुआ कि मै जमनालालजीसे और डॉ० पट्टाभि बापूसे बात करे। जमनालालजीकी अिच्छा तो मुझे गोसेवा सघसे छोडनेकी नही थी, परन्तु वे देशी राज्य लोक-परिषद्के मत्रीपद पर अेक गाधीवादी सेवकके होनेका महत्त्व भी जानते थे। वे बोले "मै जरा बापूसे सलाह कर लू। वैसे मुझे अुम्मीद नही है कि वे मजूरी देंगे।" वही हुआ। बापूने अिस लोभ और मोहमें पडनेकी अनुमति देनेसे साफ अिनकार कर दिया। शायद डॉ० पट्टाभिको भी यही अुत्तर दिया। वे गीताके 'स्वधर्मे निधन श्रेय परधर्मो भयावह' वाले वचनका अक्षरश पालन करते और कराते थे।

२८४

सीमाप्रान्तके अेक रिटायर्ड अिजीनियर बापूके भक्त थे। ये दुबले-पतले प्राणी सेवाग्राममें मेरे पडोसी और मित्र थे। गृहस्थीके कलहसे अुकताकर शान्ति प्राप्त करने और सेवा व सत्सग द्वारा आध्यात्मिक अुन्नतिके लिअे बापूके साथी बने थे। अेक दिन बातें करते हुअे अुन्होने बताया कि वे सरहदी गाधी खान अब्दुलगफारखा और अुनके बडे भाअी डॉ० खानसाहबके बारेमें वही राय नही रखते जो आम तौर पर रखी जाती है। वे अुन्हे साम्प्रदायिकतासे परे नही समझते। यह सुनकर मै दग रह गया! बापूको अुन्होने अपना यह मत बता दिया था, फिर भी बापूने अुन्हे

अपने साथ रखनेमें सकोच नही किया। अिससे मुझे और भी विस्मय हुआ। परन्तु मैंने देखा कि वापू सबके गुणोंके ग्राहक थे, परस्पर विरोधी तत्त्वोका अुपयोग कर लेनेका विवेक और सामजस्य अुनमें विलक्षण था और वडेसे वडे साथियोंके ज्ञातिर भी छोटे साथियोका अुपयोग करनेसे नही हिचकिचाते थे। वापूका आश्रम वास्तवमें विविध तत्त्वोका सगम था। अिसीलिअे वे अुसे विनोदमें शभुमेला या शिवजीकी वरात कहते थे।

२८५

मैं सेवाग्रामसे आकर कोअी छ. मास साबरमती आश्रममें रहा था। अिस बीच काग्रेस और सर्वोदयी कार्यकर्ताओमें, रेलयात्रियोमें, राजकर्मचारियोमें और जनताके सभी वर्गोमें पिछले महायुद्धके कुछ दुष्परिणाम, जो मेरी नजरमें आ रहे थे, मैंने वापूको लिख भेजे। मुझे भय था कि वे अिसे दोषदर्शन न समझ लें, अिसलिअे विन मागी राय देने पर पहले ही क्षमा-याचना भी अुसी पत्रमें कर ली थी। अिस पर पूनासे ८ नवम्बर, १९४५ को वापूका यह अुत्तर आया:

"चि० रामनारायण,

तुम्हारा कार्ड मिला। मुझे अच्छा लगा। अैसी 'विन मागी राय' भेजते रहो। तुमने जो लिखा है अुसका प्रतिविम्ब मैंने अपने भ्रमणमे पाया है।

वापूके आशीर्वाद"

अिस प्रकार साथियोको परिस्थितियोका अवलोकन करनेमें वापू प्रोत्साहन देते, देशकी स्थिति-सम्बन्धी अपनी जानकारी वढाते और अपने अवलोकनसे अुन्हे परिचित रखते थे।

२८६

सन् १९२८ में विजौलियाके दूसरे सत्याग्रहके सिलसिलेमें मेवाड राज्यने मुझे अपने अिलाकेमें घुसनेकी मनाही कर दी और मेवाडसे मिले हुअे ग्वालियर रियासतके प्रदेशोमें जानेकी भी अुस राज्यको लिखकर मनाही करा दी। मैंने कभी अुस आज्ञाको हटवानेका प्रयत्न नही किया। राज्य तो अपने-आप अैसे हुक्मोको वापस लेने ही क्यो लगा? अन्तमें सन् १९४६ में अर्थात् १८ वर्ष वाद जव वापूको पता चला कि मेरा प्रवेश-निषेध अभी तक जारी है, तो अुन्होने तुरन्त राजकुमारी अमृतकौरसे अुदयपुरके दीवान श्री टी० विजयराघवाचार्यको पत्र लिखवाया। फल यह हुआ कि थोडे ही दिनमें मेरे दाखिलेकी रोक अुठा ली गअी। अिस प्रकार जो काम आन्दोलनसे नही होते थे वे वापूके सद्भावपूर्ण नकेतसे ही सरलतापूर्वक हो जाते थे।

२८७

सेवाग्राममें १९४५ मे मैंने बापूकी दिनचर्या यह देखी

४ मे ४–२० घटी बजते ही बापू ४ बजे अुठ जाते थे। अुनके बिस्तरके पास ही चीरी हुअी, कुटी हुअी दतुन अेक पानीके गिलासमें डुबोकर रातको रख दी जाती थी। अुनके दात तो थे ही नही, अिसलिअे वे केवल जीभ साफ करते थे। बादामके छिलके जलाकर अुसमें कोयला और नमक मिलाया हुआ मजन भी करते थे। पेशाबका बर्तन भी वही रहता था। अुससे निपटकर वही हाथमुह धोकर प्रार्थनाके लिअे तैयार होते थे। पानी बोतलमे भरा हुआ बिस्तरके पास ही तैयार रहता था। थूकनेको लोहेका तसला भी वही मौजूद रहता था।

४–२० से ५ प्रार्थनामें पहले 'अीशावास्य' अुपनिषद् मत्र और 'नम्यो हो रेंगे क्यो' जापानी बौद्ध मत्र और फिर कुछ पुराणो और शास्त्रोके चुने हुअे श्लोक बोले जाते थे। बापू मौन रहते थे। प्रार्थना अुनके पास ही होती थी। बापू लेटे ही रहते थे। श्लोकोके बाद कुरान, जेंदावस्ता आदिके पाठ और फिर रामधुन होती थी और अन्तमें किसी भारतीय सन्तका हिन्दी, गुजराती या मराठी भजन गाया जाता था। भजनके सिवा और सब कुछ सब मिलकर बोलते या गाते थे। रामधुनके समय बापू हाथोसे ताल देते थे। अन्तमें गीताके अध्यायोका अिस प्रकार पाठ होता था कि सप्ताहभरमें पूरा पारायण हो जाय। हर महीनेकी २२ तारीखको अर्थात् बापूके मृत्यु-दिवस पर सम्पूर्ण गीताका पाठ किया जाता था।

५ से ६ प्रार्थनाके बाद बापू गरम गरम पानीमें कुछ सोडा और शहद मिलाकर पीते और फिर सो जाते थे।

६ से ८॥ छ बजे अुठकर शौच जाते थे। शौच वे कमोड पर जाते थे। वहासे निपटकर वे नाश्ता करते थे। नाश्तेमें बकरीका दूध और सन्तरे या आमका रस लेते थे। अुस समय आश्रम व्यवस्थापक या और किसी न किसीको मुलाकात भी देते थे। नाश्ता अपनी कुटियामें करते थे, भोजनालयमें नही।

नाश्ता खतम होते ही वे सैरको निकल जाते थे। बापू चलते बडे तेज थे। पैरोमें तकलीफ हो जानेके बादसे वे किसी न किसीके कधे पर हाथ रखकर चलते थे। वे वर्धाकी सडक पर पौन मील जाते और लौट आते थे। लौटने पर आश्रमके बीमारोको अवश्य देखते थे।

८॥ से ११ अब गाधीजी अपने लिखनेका काम शुरू करते थे। बापूके बैठने और सोनेका साधन भी अेक खास तरहका था। वह अैसा तख्ता था जिसके दो भाग थे। अेक भाग पर बैठकर वे पैर फैला देते थे और दूसरा सोते वक्त सिरहानेका और बैठते समय पीठके सहारेका काम देता था। अुस सारे पर अेक गद्दी लगी रहती थी। वे या तो पत्रव्यवहार निपटाते या 'हरिजन' के लिअे लेख लिखते या कोअी अखबारी बयान तैयार करते थे। करीब ९॥ बजेसे वे मालिश

कराते थे। मालिश अुनकी कनु गांधी, प्यारेलालजी, सुशीला नय्यर या मीरावहन करती थी। वे कडवा तेल लगवाते थे। अुस समय वे जरूरी कागजात पढते भी थे और बहुधा पढते पढते सो भी जाते थे। फिर वे अेक अलग कमरेमें स्नान करते थे। स्नान वे सदा गरम पानीसे करते थे जो अेक टबमें भरा जाता था। स्नान करनेमें अुन्हें अेक सहायककी आवश्यकता होती थी। अिसमें ११ बज जाते थे।

११ से १।। ११ बजेकी घटी बजते ही बापू सम्मिलित भोजनालयमें पहुच जाते थे। वहा दो कतारोमें सब आश्रमवासी बैठ जाते थे, जो अपनी अपनी थाली, दो कटोरिया, अेक चम्मच, अेक गिलास और अेक आसन लेकर आते थे। बापूके बैठनेको अुनकी गद्दी आती थी। बापू दोपहरको कुछ मिलाजुला पत्ती-प्रधान साग, और ज्यादातर अुसका पानी, कुछ डबल रोटीके टुकडे (यह रोटी आश्रममें ही बनती थी, जो मोटे आटेकी और खास तरहसे तैयार की हुअी होती थी।), बकरीका दूध, खाखरा (पतली पापड जैसी रोटी), पिसा हुआ नीम, पिसा हुआ लहसन, फलोका रस, सब कुछ मिलाकर लेते थे। बापूको गरम खानेका शौक था। खूब चबाते थे। अुसीके लिअे वे नकली दात काममें लेते थे। बच्चो व बीमारोको वे अपने खानेमें से प्रसादी देते थे। बापूको खानेमें कोअी अेक घटा लग जाता था। अुस समयका अुपयोग वे अकसर जरूरी मुलाकातें करनेमें भी कर लेते थे। वहासे अुठकर वे अपनी कुटियामें जाकर अेक छोटीसी लुटियासे हाथ-मुह धोते थे।

थोडी देर अखबार देखते थे। पढते-पढते अुन्हें नीद आ जाती थी। अिस समय कोअी बहन अुन्हे पखा झलती रहती थी और अुनके पैरोके तलवोमें घी मला जाता था। दोपहरके आरामके समय वे पेट और सिर पर मिट्टीकी पट्टी भी लगाते थे।

१।। से ५ कोअी डेढ बजे अुठकर शहद और नीबू मिला हुआ गरम पानी लेते और फिर शौच जाते थे। २ बजेसे ४ बजे तक वे डाक पढते और अुनका जवाब लिखते थे। अुनकी डाक अुनके मत्रियोमें से कोअी खोलता था। जो बापूके देखने और निपटानेकी होती, वह अुन्हें दे दी जाती थी। शेषको दूसरे लोग सभालते थे। अुनके पास सैकडो पत्र, अखबार और पुस्तकें आदि देश-विदेशसे भेंटस्वरूप आते थे। कार्यकर्ताओको बापू यथासभव स्वय अपने हाथसे ही अुत्तर देते थे। अुनके अुत्तर सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित होते थे। वे अधिकतर पोस्टकार्ड ही काममें लेते थे। डाकके समयका बापू बडा ध्यान रखते थे। ४ बजेसे बापू कातते थे। अुसी समय अुनकी महत्त्वपूर्ण मुलाकातें होती थी।

५ से ९ ५ बजे शामको भोजनकी घटी होती थी। यह खाना भी बापू सबके साथ खाते थे। सायकालीन खुराक भी अुनकी लगभग दोपहर जैसी ही होती थी। अिस समय भी कअी बार मुलाकातें होती थी। खानेके बाद सुबहकी ही तरह और अुसी मार्ग पर बापू टहलने जाते थे। टहलनेके समय भी अकसर लोगोको बातचीतका अवसर दिया जाता था। अन्यथा बच्चोसे हसी-दिल्लगी होती थी। लौटने पर वे फिर बीमारोको देखते थे।

सध्याकी प्रार्थनामें बाहरके लोगोकी काफी भीड होती थी और अुसमें बापू आश्रमकी, व्यक्तिगत या राष्ट्रीय समस्याओ और घटनाओ पर या किसी आध्यात्मिक विषय पर प्रवचन करते थे। शामकी प्रार्थनामें और सब चीजे तो प्रात कालकी तरह ही होती थी। सिर्फ गीतापाठ नही होता था। अेक खास रागमें रामायणकी चौपाअिया गाअी जाती थी और फुटकर श्लोकोके बजाय गीताके दूसरे अध्यायके स्थितप्रज्ञके लक्षणोवाले अतिम १९ श्लोकोका पाठ होता था। भजन सुबहकी भाति कनु गाधी दिल-रुबा पर गाते थे। आश्रममे कातना सबके लिअे अनिवार्य था। अुसका हिसाब शामकी प्रार्थनामे लिखाया जाता था। यही हाजिरी भी मानी जाती थी। बापूका सूत अटेरते तो कोअी और थे, परन्तु वे कअी बार अपनी पूनिया स्वय ही रुअी धुनकर बनाते थे। सम्माननीय अतिथियोको बापू भोजन और प्रार्थनामें अपने पास बिठाते थे। अुनके सामने बहने बैठती थी और अुनके अिधर अुधर पुरुषोका स्थान रहता था।

प्रार्थनासे अुठकर बापू ९ बजे तक फिर कुछ लिखते-पढते और चर्चा करते थे। कडाकेके जाडे और बरसातके सिवा बापू सदा खुलेमें सोते थे। वे केवल अेक तहमत लगोटकी शकलमें पहनते थे और अृतुकी आवश्यकताके अनुसार अेक सूती या अूनी चादर ओढते थे। रातको सोते समय अुनके सिरमें तेल मला जाता था और पैर दबाये जाते थे। बापू आश्रममें खडाअू और बाहर मुर्दार चमडेके चप्पल पहनकर चलते थे।

२८८

अगस्त १९४५ में जब मैंने सेवाग्राम आश्रम छोडते समय बापूसे विदा ली तो मैंने अुनसे पूछा "हिंसाका सबसे बुरा रूप क्या है? आपका अुत्तर मेरे लिअे बिदाअी सन्देश होगा।" बापूने अेक क्षण सोचकर कहा, "मेरे खयालमें प्रतिशोध वह रूप है, जैसे दभ असत्यका है। आवेश या क्रोधमें हम किसी पर हाथ अुठा ले या हानि पहुचा दें, तो वह अितना गभीर अपराध नही है, क्योकि मनुष्यको अुसका वेग शान्त होने पर पश्चात्ताप और प्रायश्चित्तका भाव पैदा होता है। परन्तु जब अिन्सान जान-बूझकर, सोच-विचारकर बदला लेने पर अुतारू होता है, तो वह अिरादापूर्वक हिंसा होती है। अुसमें पछतावे या सुधारकी कमसे कम गुजाअिश रहती है और वह सबसे खतरनाक होती है।"

अिस सन्देशने अेक नाजुक अवसर पर रामबाण औषधिका काम किया। [illegible] १९४८ की बात होगी। अेक दिन अेक कार्यकर्ताने आकर प्रस्ताव किया " [illegible] विरुद्ध गदा प्रचार किया, परचे बटवाये और सार्वजनिक जीवनमें [illegible] विरोध कर रहे हैं और अधिकारियोसे मिलकर भी आपको हानि पहुचा [illegible] समय अुनके दुराचार और भ्रष्टाचारका भडा फट रहा [illegible] सदाके लिअे काटा निकल जाय।" मुझे सबसे पहले बापूका वह सन्देश [illegible] मैंने अुस भाअीको निराश करके लौटा दिया। मेरे जीवनके [illegible] यह काम मेरी सबसे अच्छी स्मृति है। अिसने मुझे [illegible]

अंजनादेवीके संस्मरण

१

बापूने मेरी पहली मुलाकात १९२० की नागपुर काग्रेससे पहले वर्धाके मारवाडी विद्यार्थी-गृहमें हुई। उस समय मेरे साथ स्व० केसरीसिंहजी बारहठकी पुत्री चद्रमणिबाजी भी थी। हम दोनो पर्दा तो छोड चुकी थी, परतु आभूषण और विदेशी वस्त्र हमारे शरीर पर थे। हम दोनोने बापूके पैर छूकर कुछ जेवर भेंट किये। बापूने अुन्हें स्वीकार करके हमारे पर्दा छोडने पर हर्ष प्रगट किया। "मगर', वे बोले, "अितनेसे काम नहीं चलेगा। तुमको तो स्त्रियोमें काम करना चाहिये। जेवर सदाके लिअे छोड दो। खादी धारण कर लो और यह परिवर्तन २४ घटेमें करके दिखाओ।" चद्रमणिबाअीको सबोधन करते हुअे अुनके आभूषणोकी ओर अिशारा करके कहा, "तुम्हारा पिता फकीर है। जिन्दा शहीद है। अुसकी बेटी होकर यह सब क्या पहन रखा है?" हम दोनो पर अिस प्रथम मिलनका चमत्कारी परिणाम हुआ। हमने अुसी दिनसे खादी धारण कर ली। मैंने जेवर छोड दिये और हम दोनोने स्त्रियोमें काग्रेसका कार्य आरभ कर दिया। कुछ ही दिनोमें हमने काग्रेसके लगभग १,००० सदस्य बना लिये।

२

अुसी समय जमनालालजीकी बडी लडकी कमला आअी। अुसके हाथोकी सोनेके चूडिया देखकर बापू कहने लगे, "यह क्या हथकडी पहने हुअे है? मुझे दे दे।" "अच्छा, ले लीजिये," भोली कमलाने तुरत अुत्तर दिया। "फिर तो नही बनवायेगी?" बापूने पूछा। कमला हिचकिचाअी। बापूने चूडिया नहीं ली। हमने देखा कि वे बच्चोसे अुनके माता-पिताकी अनुमतिके बिना कोअी भेंट स्वीकार नहीं करते थे।

३

दूसरी भेंट हमारी नागपुर काग्रेसके बाद जमनालालजीके बगीचेमें हुअी। अुस समय तक बापूके आश्रमकी महाराष्ट्र शाखा वर्धामें स्थापित हो चुकी थी। विनोबाजी और लक्ष्मीबहन भाअी मोदी साबरमतीसे आ पहुचे थे। मोदीजीकी पत्नी भागवतन भी अुनके साथ थी। अुनसे हमारा परिचय हो चुका था। अिस बार हम तीनो साथ थी। दीपावलीका समय था। जानकीबहन, चद्रमणिबाअी और मैं पीछे

रंगकी साडी-पोल्के पहने हुअी थी। मेरे शरीर पर कोअी गहना नहीं था। [illegible]-देवीकी साडी पर गोटा लगा हुआ था। हमें देखते ही बापू बोले, "ये आअी [illegible] बाना लिये हुअे राजस्थानी वीरांगनाअें।" हम अिस प्रशंसापूर्ण व्यंगसे शर्माकर [illegible] प्रणाम करके बैठ गअी तब कहने लगे, "अितनी धूपमें आअी? यह ठाट तो [illegible] है। प्रणकी भी पक्की दीखती हो।" हमने कहा, "प्रण तो ले लिया, परन्तु [illegible] मिलेगी कहांसे? दो दो साडियां भी जोड लगाकर कठिनतासे बनी हैं। [illegible] भी तीन ही।" "तीन पक्की हैं तो तीन हजारके बराबर हैं", वे बोले, "[illegible] मणि ही है। अुम पिताकी पुत्री जो है। मगर यह क्या [illegible] भी यह सब जेवर पहनेंगी?" फिर विनोदमें कहने लगे, "[illegible] कहा?" अितनेमें ताराबहन मोदी भी आ गअी। अुन्हें [illegible] "तूने गलेमें यह क्या पहन रखा है? रमणीक तो नाम है।" [illegible] भर आअी। वे कहने लगी, "मेरे पास तो यही है। आगे क्या होगा?" [illegible] तुरत जवाब दिया, "अच्छा, जब त्यागभावना तीव्र हो जाय तब [illegible]। [illegible] अपने थोडेसे कांग्रेसके कार्यका विवरण अुन्हें बताया तो [illegible] प्रगट किया और अधिक करनेका प्रोत्साहन दिया। हम [illegible] कि यह आदमी स्त्रियोंका अुद्धार करेगा।

वह स्पष्ट विरोध प्रगट कर देती है और भविष्यमें अैसी हरकतोंके लिअे मौका नही देती, तो वह निरपराध और सती ही मानी जायगी।"

प्रश्न—यदि प्रेम, भय, किंकर्तव्यविमूढता या घनिष्ठताके कारण स्त्री आरंभमें विरोध न कर सके और बात आगे बढ जाय तो?

अुत्तर—तो अुसे चाहिये कि मर जाय या मार दे, मगर अपने धर्म पर आंच न आने दे।

५

आश्रमकी लडकिया मासिक धर्मके दिनोंमें भी सम्मिलित भोजनालयमें पगतमें बैठकर भोजन करती थी। अिस पर कुछ बहनोंने आपत्ति की और चाहा कि घर पर खाना चाहिये। बापूने महिला प्रार्थनामें कहा . "नाथजी (केदारनाथजी) कहते हैं कि रजस्वलाके हाथका खानेसे अुनका मंत्र झूठा हो जाता है। किशोरलाल-भाअी जैसे लोग भले ही अैसा मानें। मैं भी अपवाद तो मानता हू। मगर सबको तो खाना चाहिये।" दूसरे दिन मैंने अिस बारेमें पूछा . "अिस विषयमें दो मत मालूम होते हैं। अेक कहता है कि तीन दिन तक स्त्रीको नहाना, काम करना, बोझा अुठाना और छूना नही चाहिये। दूसरा कहता है यह सब करनेमें कोअी हर्ज नही। आपकी क्या राय है?" बापूने अुत्तर दिया "छूनेमें तो कोअी पाप नही। साधारण कामकाज और नहाना-धोना भी आदतके अनुसार किया जा सकता है। हा, बोझा अुठानेमें हानि हो सकती है। पगतमें बैठकर खानेमें कुछ भी आपत्ति नही होनी चाहिये। मासिक धर्म सन्तानोत्पत्तिके लिअे अिच्छा और अनुकूल स्थिति पैदा करता है। जो ब्रह्मचर्यसे रहना चाहती हैं अुन स्त्रियोंको ये तीन दिन याद ही न रखने चाहिये।"

६

अहमदाबादमें अुन दिनों चेचकसे सैकडो बच्चे रोज मर रहे थे। आश्रममें भी दो बाल-मृत्युअें हो चुकी थी। अिस पर वातावरणमें कुछ घबराहट हो रही थी। अेक दिन बापूने प्रार्थनामें कहा . "चेचकका टीका लगवानेके बारेमें दो मत हैं। अेक पक्षमें और दूसरा विपक्षमें। मैं कहता हू टीका नही लगवाना चाहिये। वह खराब चीज है। अिसके लिअे जीती गायका खून लेते हैं। टीकेसे जहर दबकर दूसरी खराबियां पैदा होती हैं। मुझे डॉक्टर लोग नहीं समझा सके हैं कि अैसा नही है। फिर भी जो माना-पिता चाहे वे टीके लगवा सकते हैं।" मैं भी प्रतापकी तरफसे चिन्तित थी। परन्तु बापूके विचारोंके कारण अुसे टीका नहीं लगवा रही थी। बापूके अिस स्पष्टी-करणके बाद जब मैंने अैसी अिच्छा प्रगट की, तो बापूने स्वय डॉ० हरिप्रसादको पत्र लिखकर टीका लगवानेकी व्यवस्था कर दी।

७

अेक रोज सेवाग्राममें सुबह घूमते समय चि० सीताने बातो ही बातोमें बापूसे कहा कि भसाली भाअी १५ सेर दूध पीते है। बापूको आश्चर्य हुआ तो वह अुन्हे पकडकर भसाली भाअीके पास ले गअी। वहा पहुचकर बापूने पूछा "क्यो भसाली, १५ सेर दूध पी लेते हो?" "हा, बापू", वे बोले, "१७-१८ सेर सेपरेट (मक्खन निकाला हुआ) दूध मिल जाता है तो ले लेता हू। नही मिलता तो नही पीता। बाकी नीमके पत्ते, कच्चा कद्दू और कच्चा पपीता टोकरीमें रखता हू। अुससे काम चला लेता हू।" बापू हसकर चले गये।

८

भसालीभाअी गुजरात कालेजमें प्रोफेसर थे। विलायत हो आये थे। 'यग अिंडिया' के सम्पादक भी रहे थे। बडे फैशनेबल आदमी थे। परन्तु बापूके ससर्गमें फकीर बन गये थे। हठयोगके शौकीन थे। वाणीके सयमके लिअे कअी वर्ष तक होठ सी लिये थे और जिह्वा-जयके लिअे सत्तू ही खाकर रहे थे। अिससे जब आखोकी ज्योति मद हो गअी तो बापूके आदेशसे यह सब छोड दिया था। फिर भी अुनका जीवन घोर तपस्यामय तो रहा ही। अुन्होने ब्रह्मचर्यकी साधनाके लिअे सावरमतीमें ५७ दिनका अुपवास किया था। सेवाग्राममें भी अुनका यह हाल था कि दिन भर धूपमें तपते रहते। केवल सिर पर कपडा डाले कातते रहते और लडके-लडकियोको अंग्रेजी, गणित आदि पढाते रहते। परन्तु अुन्हे छायामें बिठाते। प्रार्थनामे नही जाते और शामको सात बजे सो जाते थे। रातको बारह-अेक बजे अुठकर चक्की चलाते। अेक रोज किसीने बापूसे कहा "अिस वेवक्त पीसनेसे आपकी नीदमें खलल नही पडता होगा?" "बिलकुल नही", बापूने अुत्तर दिया, "मुझे नीद खूब आती है। माताओके पीसते हुअे बहुतसे बालक सोते है। मुझे भी वह अभ्यास है।" अिस प्रकार बापू अपनी बचपनकी बाते सुनाकर मनोरजनके साथ शिक्षा भी देते थे और अपने आरामके लिअे साथियोके काममें हस्तक्षेप भी नही करते थे।

९

सेवाग्रामकी बात है। मै और सीता बीमार थी। बापू कही बाहरके सफरसे लौटे थे। मौन दिवस था। मोटरसे अुतरते ही सीधे हमारे पास आये। मैंने कहा, "आप अभी यहा क्यो आये? पहले मुह-हाथ धोकर आराम करना था।" बापूने अपनी छाती पर हाथ धरकर अुगलीके अिशारेसे बताया, "अपने दिलसे तो पूछो?" सच तो यह है कि हम दोनोको बापूके आनेसे बडा सुख मिला था।

१०

बापूको शुद्ध उच्चारण बहुत अच्छा लगता था। प्रताप और सीता राजकुमारी बहनसे अंग्रेजी और अम्तुल बहनसे उर्दू पढते थे। यह क्रम बापूकी कुटियाके आसपास ही चलता और बापूको सुनाओ देता था। अेक दिन अुनसे कहने लगे "तुम्हारा अुच्चारण मुझे पसद है। घूमते समय मेरे पीछे पीछे चला करो और जब किसीसे बातें न हो रही हो तो संस्कृतके श्लोक रटा करो। मुझे आनद मिल जायगा और तुम्हारा अभ्यास हो जायगा।" 'अेक पथ दो काज' बापूकी कार्यप्रणालीका अेक खास अग था।

११

खाने-पीनेके सयम पर बापूका बडा जोर था। आश्रमवासियोको हिदायत थी कि बाहर खानेवालोंके यहा भोजन न करे और वर्धामें दिनभर रहना पड़े और आश्रमी भोजन मिलनेमें दिक्कत दिखाओ दे, तो अपना खाना साथ ले जाय। अेक दिन बापूकी सेविकाओमें से अेक लडकीने पारनेरकरजीके यहा खा लिया। बापूको पता लगने पर अुससे पूछा तो अुसने पहले अिनकार करके फिर अिकरार किया। अिस पर बापूने अेक दिनका अुपवास किया। अिसके बाद अुस लड़कीने कभी यह दोष नही दोहराया।

१२

अेक रोज चि० सुभद्राको आश्रममें कही अेक रुपया पडा मिल गया। वह दौड़ी दौडी बापूको देने अुनके पास पहुची तो वे आराम कर रहे थे। अम्तुल बहनने बापूको कष्ट न होनेके खयालसे सुभद्राको अुनके पास जानेसे रोक दिया। बापूने सुन लिया तो कहने लगे, "अम्तुल, अिसे आने दे। बच्चे मेरा जीवन है।" फिर सुभद्राकी सराहना करके अुसे व्यवस्थापकके पास रुपया हरिजन-कोषमें देनेको भेज दिया।

१३

बापूके अेक मित्रका लडका कुछ चक्रम-सा था। वह अपनी पत्नीके साथ दुर्व्यवहार करता था। बापूने अुसे सेवाग्राम बुलाकर अपने पास रख लिया था। मगर वहा भी वह अपनी हरकतोंसे बाज नहीं आता था। अेक दिन पत्नीने बापूसे कहा, "ये मुझे मारते हैं। मै अिनके साथ नही रहूगी।" बापूने पतिको बहुत समझाया। मगर अुसने अेक न मानी। अुल्टे बापू पर ही दोषारोपण करने लगा कि आप तो हम दोनोका विछोह कराना चाहते हैं। अन्तमें वह आश्रमसे चला गया। थोडे दिन बाद

पश्चात्ताप करता हुआ आया तो बापूने रख लिया। बापू सुबहके भूले हुओ शामको घर आ जानेवालोंको बराबर सुधरनेका मौका देते थे। मगर स्त्रियो पर अत्याचार सहन नही करते थे। जिसके लिओ वे पति-पत्नीके वियोग जैसी कडी व्यवस्था करनेमें भी नही हिचकते थे।

१४

कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुरका देहान्त हुआ तो आश्रममें १२ घटेका कताओ-यज्ञ रखा गया। अुस समय बापूको दीनबन्धु अेंड्रूजकी याद आओी और अुन्होने दु खके साथ कहा कि अेंड्रूज फड अिकट्ठा नही हुआ। बापूको सम्मिलित कताओीकी केवल मजदूरी द्वारा यह कोष जमा करनेकी सूझी। हम लोगोने मजाक अुडाया कि अिस तरह ६ लाख रुपया कितने सालमें जमा होगा, तो बापू कहने लगे, "तुम लोग क्या समझो? देखना, अिस सूतका क्या चमत्कार होता है?" अस्तु। दो तीन दिन बाद सम्मिलित कताओ हुओ। अुसका सूत चार-पाच सौ रुपयेमे विका। स्वय बापूके १५० तार सूतके तीन हिस्से किये गये, जिसको तीन आदमियोने ५०-५० रुपयेमें खरीद लिया। सरदारको पता लगा कि बापू अपने सखाके स्मारकके लिओ अितना कायाकष्ट अुठा रहे हैं, तो अुन्होने बम्बअीसे सन्देश भेजा कि बापू ७ दिन आश्रमका मोह छोड दें तो मैं यहा ७ लाख करा दूगा। अैसा ही हुआ और बापूकी सूतके चमत्कारवाली भविष्यवाणी पूरी हो गयी। अैसा अटल था अुनका चरखेमें विश्वास।

१५

ने १९३० में निहत्थे असहयोगियो पर गोली चलानेसे अिनकार कर दिया था। अिस पर अुन्हे फौजी अदालतने कओी सालकी कैदकी सजा दी थी। जेलसे छूटने पर बापूने अुन्हे सपत्नीक सेवाग्राम आश्रममें बुला लिया था। वे हमारे पासवाली झोपडीमे रहते थे। अेक दिन मैं सीताकी आखें दिखाने अुसे वर्धा ले गओी थी। लौट कर आओी तो सुभद्राको कूकर खासी (whooping cough) हो गओी। ने शोरकी शिकायतके साथ बापूसे मेरे खाने-पीनेके अनियमकी भी शिकायत कर दी, जो झूठी थी। मुझे भी बुरा-भला कहा। मुझे बहुत बुरा लगा। बापूने जाच करके शिकायतको गलत पाया, तो मेरे झोपडे पर आये और कोओी घटे भर तक वहीं घूमते हुओ मुझे समझाते रहे, "लम्बे कारावासके कष्टोंने का दिमाग खराब हो गया है। वह जो कुछ कहे अुसे सहन कर लेना चाहिओ। मैंने भी तो देखो कितनी छूट दे रखी है कि आश्रमके बीचमें पति-पत्नीको साथ रहने देना है? अर्जुनलाल सेठीको जानती हो? कितना बडा आदमी था? कैसा देशभक्त था? मगर कैसे पागल-सा हो गया और अन्तमें अेक दरगाहमें मरा। कभी कभी जेल-यातनाओसे मस्तिष्क बिगड जाता है।" बापू जैसे कार्यव्यस्त और महान व्यक्तिके

अितना समय देने और अैसी असाधारण अुदारता दिखानेकी बातसे मेरा सारा असतोष काफूर हो गया।

१६

मैं अकसर बीमार रहती थी। अिस कारण मुझ पर खर्च भी अधिक होता था और आश्रमवासियो पर सेवाका भी कुछ भार पडता था। अिससे मुझे बडा असतोष रहता था। जब आत्मग्लानि अधिक बढी तो मैंने बापूसे अेक रोज कहा "मेरा आश्रममें कोअी खास अुपयोग नही है और मेरा खोखा भी अुस पर काफी पडता है। अिससे मनमें बडी अशान्ति रहती है। क्या करू?" बापूने बडी मिठाससे मुझ समझाया· "वैसे तो बीमारी अपने वसकी बात है और वह प्रकृतिके नियमोका अुल्लघन करनेसे ही होती है। फिर भी जब वह हो जाय, तो अुसका अिलाज करते हुअे अुसे सहन करना ही होगा। मगर तेरा कुछ अुपयोग नही या तू कोअी काम नही करती, यह बात सही नही है। तू भोजनालयमें समय देती ही है और रोज चार-पाच गुडी सूत कात लेती है। अिससे अधिक क्या करेगी? यह तो काफी अुपयोग है।" मैंने कहा, "मैं बहुत पढी-लिखी तो नही, मेरे अिन कामोका क्या महत्त्व है?" अिस पर बापू कुछ तेज होकर कहने लगे, "वैसे तो सत्याग्रहमें कअी बार भाग लेकर और किसान स्त्रियोकी सेवा करके तूने पढीलिखी बहनोसे कम महत्त्वका काम नही किया है। परन्तु तेरा वर्तमान कार्य भी राष्ट्रनिर्माणकी दृष्टिसे छोटा नही है। काम कोअी छोटा या बडा नही होता। अीमानदारी, ज्ञान और भावनापूर्वक किये हुअे सभी कार्योका समान मूल्य है। जरूरत अितनी ही है कि मनुष्य शक्ति भर काम करे और अुसमें कसर न रखे।" अुस दिन मेरी समझमें आया कि सचाअी और पूरी ताकत लगाकर किये हुअे सभी परिश्रमोकी अेकसी कीमत है।

१७

चि० प्रताप खादी विद्यालयकी परीक्षामें बैठा था। नव विषयोमें प्रथम आया। परन्तु तेरह वर्षकी आयु थी, काग्रेसका अितिहास पूरा पढाया नही गया था, गोल्मेज जैसे विषयोमे अनभिज्ञ था, अिसलिअे अुस विषयमें फेल हो गया। सुबह पास होनेवाले विद्यार्थी बापूके पास आशीर्वाद लेने गये, तो अुनमें प्रतापको न देखकर अुन्होने पूछा। कारण मालूम होने पर अुसे बुलाया और कहा "क्या पास होनेवालोको ही आशीर्वाद मिलता है? तेरे साथ अन्याय तो नही हुआ?" "नही, बापू, हरगिज नही। जब मैं अेक विषयमें फेल हू तो मुझे प्रमाणपत्र क्यो मिलना चाहिये?" प्रतापने अुत्तर दिया। बापू बोले "तेरे जवाबसे मैं खुश हू। मगर मेरी रायमें तुझे प्रमाणपत्र अवश्य दिया जाना चाहिये।" नियमानुसार प्रमाणपत्र तो प्रतापको नही मिला, मगर दूसरे दिन वर्धामें प्रमाणपत्र देनेके समारोहमें बापूने अिस घटनाका अुल्लेख अवश्य

किया। बापू जहा व्यवस्था और नियमोमें दखल नही देते थे, वहा मनुष्यकी असली योग्यताकी कद्र किये बिना नही रहते थे।

१८

प्रतापको फेल होनेका दु ख तो हुआ ही, क्योकि अच्छे-अच्छे कार्यकर्ताओके मुकाबलेमें अिस छोटेसे बालकने अच्छा दर्जा पाया था। बापूको मालूम हुआ तो अुन्होने भारतानन्दजी (पोलिश अिजीनियर मि० मॉरिस फ्रिडमैन) को बुलाकर अुनसे कहा "प्रतापको राजकुमारी अंग्रेजी तो पढाती ही है। तुम कारखानेमें अपना काम भी सिखाओ।" थोडे दिन बाद जब भारतानन्दजीने बापूको रिपोर्ट दी कि प्रताप अच्छा अिजीनियर बन सकता है, तब बापूने अुसे वर्धामें रहकर मैट्रिक पास करनेकी अनुमति दे दी। मगर यह शर्त लगा दी कि अुसे छात्रालयमे न रखा जाय और मै स्वय अुसके साथ रहू। मुझे अिस घटनासे पता चला कि बापू विद्यार्थियोके स्वास्थ्य और चरित्रकी रक्षाके लिअे अुनको छात्रावासोमे रखनेके बजाय माता-पिताके साथ रखनेके ही पक्षमें थे। अिस प्रकार बापू आधुनिक शिक्षाके विरुद्ध होते हुअे भी पात्र देखकर अपवाद कर देते थे। अनुभवने प्रतापके लिअे अुनके निर्णयको बिलकुल सही साबित कर दिया।

१९

सेवाग्राम आश्रममें अविवाहितोके कपडे आम तौर पर दर्जीसे सिलवाये जाते थे। रजाअियोमें डोरे तक अुसीसे डलवानेका रिवाज था। मुझे यह बात खटकती थी। मुझे अपने पास काम कम होनेका असतोष भी था। मैने प्रस्ताव किया कि ये कपडे मै सी दिया करू। अिस पर आश्रमकी अेक बहनको यह आशंका हुअी कि अिससे दर्जीका रोजगार छिन जायगा। बापूको समाधानके लिअे पूछा गया तो अुन्होने अुत्तर दिया, "यो तो हम भगीका रोजगार भी छीनते है। परतु स्वावलबन हमारा ध्येय है। जितना काम हम कर सकें वह तो खुद हमीको कर लेना चाहिये। दूसरोसे वही करावे, जो हमारे बसका न हो।"

२०

सेवाग्राममे साप-बिच्छू बहुत थे। बिच्छू काटनेकी घटनाअें अकसर होती थी। अेक दिन प्रतापके साथ भी अैसी ही बीती। मुझे सख्त खामी थी। मेरी तकलीफका खयाल करके बापूने प्रतापको अपने पास ही रख लिया। मुझे लगा कि बापूको कष्ट होगा, नीद नही आयेगी, अिसलिअे मैने आग्रह किया कि प्रतापको मेरे ही पास भेज दिया जाय। बापूने अुसे भेज तो दिया, मगर अिस शर्त पर कि प्रतापकी

देखभाल मैं न करू बल्कि कृष्णचद्रजी और शकरन्‌जी करे। सुबह बापू स्वय आये और प्रतापको हसी-दिल्लगीसे खुश करके अपने सामने दतुन कराया और दूध और राब पिलाओ। पीते ही प्रताप सो गया। स्त्रियो और बच्चोका, विशेषत बीमारीमें, बापू सचमुच पितासे भी बढकर खयाल रखते थे।

२१

अेक नम्र आश्रमवासी मद्रास लौट रहे थे। रास्तेमें वे आश्रमी भोजनके सिवा कुछ नही खाना चाहते थे। अिसलिअे व्यवस्थापकने अुनके लिअे भोजनालयमे कुछ 'भाखरिया' बना देनेकी हिदायत दी। हम कुछ स्त्रिया रसोअीघरमें खाना बना रही थी। अुनमें से अेक बहनने आलोचना की "आश्रममें तो सब नवाब बन जाते है। सबको रास्तेके लिअे भी यहासे खाना बनाकर देना पडता है।" अुधर बापूको कहीसे खबर लगी थी कि भोजनालयमें मक्खिया होने लगी है। वे मक्खियोंके सख्त खिलाफ थे। अुनकी स्वच्छताका आदर्श यह था कि टट्टी और रसोअीघर दोनोमें अेक भी मक्खी नही होनी चाहिये। यही देखनेको न जाने कबसे वे आकर हम लोगोके पीछे खडे थे। अुन्होने आलोचना सुनी तो कहने लगे, "हा, नवाब बन जाते है। अिसलिअे भाखरी तो जानेवालेके लिअे बननी ही चाहिये। मेरे लिअे बनती है तो अिस भाअीके लिअे क्यो न बने? मगर ये मक्खिया क्यो है?" अुस दिनके बाद वह शिकायत फिर नही हुअी और भोजनालयका प्रबध भी सुधर गया। कमजोरका पक्ष लेनेमें बापू कभी नही चूकते थे।

२२

बहनके पास फलोका भडार रहता था। बीमारोको आवश्यकतानुसार वही मोसम्बिया बाटती थी। बेचारी अीमानदारीसे मानती थी कि 'बडे' आदमियो और कार्यकर्ताओकी आदतोमें फर्क होता है, अिसलिअे अुन्हे क्रमश बढिया और घटिया दर्जेकी मोसम्बिया देनेका भेद करना अनुचित नही है। तदनुसार अेक रोज मेरे हिस्सेमे जरा अुतरी हुअी मोसम्बिया आ गअी और अच्छी अच्छी विडलाजी और नरेन्द्रदेवजीके पास पहुच गअी। सयोगवश किशोरलालभाअी मुझे देखने आ गये और अुनकी नजर मोसबियो पर पड गअी। वे तो अैसे भेदभावके कट्टर शत्रु थे। मैंने अुनकी त्यौरी पर कभी बल नही देखा था, मगर आज पड गया और अुन्होंने कृष्णचद्रजीको बुलाकर मोसम्बिया दिखाअी। बात बापू तक पहुचीं। मुझे तो अिस पर बडा सकोच हो रहा था, मगर व्यवस्थापकजी नही माने। बापूने तुरत ही वह काम बहनसे छीन लिया। अैसे मामलोमें बापू बडे कठोर थे। बडेसे बडेको भी नही बख्शते थे।

२३

अेक वार सेवाग्राममें मुझे, सीता और सुभद्रा तीनोंको अेक साथ कूकर खासी हुअी। वापूने आश्रम व्यवस्थापकको आदेश दिया कि अेक आश्रमवासी हर समय हमारी देखभालके लिअे हमारे पास रहे। वह कातता रहे और जब काम हो अुठकर कर दे। अेक दिनके बाद मुझे वडा सकोच हुआ और मैंने आग्रह करके व्यवस्थामे यह परिवर्तन करा दिया कि वह भाअी दिनमें चार वार आकर हमें सभाल जाय और जो काम हो कर जाय। दूसरे दिन जब वापू देखने आये तो अुस भाअीको वहा न पाकर विगडे। मैंने वहुतेरी सफाअी देनी चाही, परतु वापू न माने और कृष्णचद्रजीको वुला भेजा। वापूका वह रूप देखकर अुनका तो यह हाल हो गया कि काटो तो खून नही। वापूने तेजीमें कहा, "यहा कोअी न कोअी हरदम रहना ही चाहिये। तुम लोग अिन्तजाम नही कर सकते हो तो मै आकर रहूगा।" नतीजा यह हुआ कि जब तक हम लोग वीमार रहे यह व्यवस्था ही कायम नही रही, वल्कि स्वय वापूकी देखरेख अितनी अधिक और स्नेहमयी थी कि हमें कभी महसूस ही नही हुआ कि हमारे माता-पिता या वच्चोके पिताजी पासमें नही है।

२४

जमनालालजीके देहान्तसे पहले जब अुनकी तवीयत ज्यादा खराव हुअी तो वर्धामे वापूके पास फोन आया कि आप रक्तचापकी अपनी दवा लेकर जल्दी आअिये। अितनेमें मोटर भी आ गअी। वापू अुसमें सवार होने लगे तो दूसरा फोन आया कि सेठजी तो चल वसे। यह खवर सुनकर मै, राजकुमारी वहन और घनश्यामदासजी विडला भी वापूजीके साथ ही वर्धा चले गये। वहा जाकर देखा तो सेठजीकी माताके सिवा और किसीके आसू नही थे। वापूके ससर्गसे वजाज परिवारको सयमकी अितनी शिक्षा मिल चुकी थी। दिलोमें दर्द और चेहरो पर रज तो सभीके था। जानकीदेवीका वुरा हाल था। अुन्होने कहा, "अव मै जीकर क्या करूगी? मेरी दाहक्रिया भी अिसी चिता पर होनी चाहिये। मै तो सती होअूगी।" वापूने अुन्हे समझाया, "सच्ची सती वह है जो पतिके पीछे अुसका काम करे। जमनालालजी गोसेवा करते करते गये है। तुम्हे वही करते रहना चाहिये। अुनके धनका मालिक कमलनयन है।" जानकीदेवी वोली, "वापू, मेरे पास क्या है जो अुनके नाम पर दू? मुझमें कौनसी योग्यता है जिसे अुनके काममें अर्पण करू?" "क्यो नही?" वापूने कहा, "तुम्हारे पास जमनालालजी जो अढाअी लाख रुपया छोड गये है, वह गोसेवामें दान कर दो और अपना शरीर और वुद्धि भी अुसीमे लगा दो। रोटी तो कमलनयन देगा ही। नही तो आश्रम तो है ही।" जानकीदेवीने पानीकी अजलि लेकर अपने पतिदेवके प्रीत्यर्थ वापूकी पवित्र साक्षीमें अुन्हींका वताया हुआ सकल्प ले लिया और हिन्दू नारीके महान आदर्शको पूरा किया।

२५

जानकीदेवीके बाद बापूने अुनकी बूढ़ी सासको संभाला। अुनके पास जाकर बोले, "माजी, रोनेसे प्राणीको दुःख होता है। जमनालाल चला गया तो क्या हुआ? मैं भी तो तुम्हारा बेटा ही हूं।" यों बुढियाको सान्त्वना देकर औरोंको अर्थीके साथ भेज दिया और बापू और मैं माजीके साथ रहे। पीछेसे श्मशानमें पहुंचे तो अुन्हें जानकीदेवीको अन्त तक संभाले रखना पड़ा। दाहक्रिया गोपुरीमें सेठजीकी कुटियाके सामने ही हुअी थी। अुसके समाप्त होने पर जब हम लोग सेवाग्राम लौटे तो बापू राजकुमारीसे कहने लगे: "मैंने कल ही सपना देखा था कि जमनालाल कैसे गायको बचायेगा। अिसका बड़ा भारी बोझा है। अुसके कंधे अितने मजबूत नहीं हैं। यह तो स्वराज्यसे भी मुश्किल काम है। बेचारा अिसी भारके नीचे दबकर मर गया।" मैं कभी कभी सोचा करती हूं कि जमनालालजी भी चले गये और बापू भी। अब अिस महान कार्यको कौन पूरा करेगा?

२६

अेक बार बा बीमार हो गअी। डॉक्टरने अुन्हें अुठनेसे मना कर दिया। अिसलिअे बापूने अुनकी कुटियामें कमोड रखवा दिया। बाकी अिच्छा नहीं थी, पर बापू नहीं माने। मुझे अुसे साफ करनेका काम सौंपा गया। मैं अेक दिन तो सफाअी कर आअी। दूसरे दिन बाने मना कर दिया। बोली, "बहन, कमोडकी जरूरत नहीं। बापू तो यूं ही किया करते हैं। मैं टट्टीमें ही जाअूंगी।" मैंने बहुत आग्रह किया, परंतु बा माननेवाली कहां थी? शामको बापू देखने आये तो मैं भी वहीं थी। बापूको जब सारा हाल मालूम हुआ तो कहने लगे, "क्यों अंजना, नापास हो गअी न? बा पास कर दे तो वह मोलह आने पास है।" बाने कहा, "मैं कमोड पर जाअूंगी तो स्वयं ही साफ कर लूंगी।" अुन्होंने वैसा ही किया। बा दूसरोंकी सेवा तो खूब कर देती थीं, परंतु दूसरोंसे सेवा कराती नहीं थी।

•

२७

अुसी दिन बापूने कहा, "बा, तुम्हारा खाना अम्तुल यहीं ले आयेगी। रसोडेमें मत जाना।" बाने अुत्तर दिया, "नहीं, मैं तो भोजनालयमें ही जाकर खाअूंगी।" असल बात यह थी कि बाको बीमारीमें भी यह बर्दाश्त नहीं होता था कि बापूके भोजनकी देखरेख वे खुद न करें। अुनका खयाल था कि वे ही बापूका खाना ठीक तरहसे लगा सकती थीं।

२८

अेक समय बापूको लड़कियोंके बाल कटवानेकी धुन सवार हुआी। स्त्री-जातिको बालोंसे बड़ा मोह होता है। वे पुरुषोंके विकारका कारण भी बनते हैं। फिर भी कुछ बहनों और बालिकाओंने बापूके कहनेसे अपने बाल कटवा लिये, बाकीने नहीं कटवाये। अेक दिन सीताको सिरदर्द हुआ। बापूको अच्छा मौका मिल गया। सीताको देखने आये तो बोले, "बाल कटा देगी तो तेरी पीड़ा भी मिट जायेगी और बाल भी ज्यादा बढ़ेंगे।" सीताके बाल छोटे थे, बड़े होनेकी बात अुसको जच गअी। अुसने बाल कटवा दिये। संयोगवश अुसे बुखार आ गया। बापूने अुसे मोसंबी पर रखा। कुछ दिन बाद अुसने रोटी मांगी तो बापूने अुसे अपनी थालीमें से खाखरा दिया, मगर अेक ही दिया। बा देख रही थीं। अुनसे न रहा गया और सीताको डबल रोटी और देकर खुश कर दिया। बा सदा अिसी प्रकार बच्चों पर स्नेह प्रदर्शित करनेमें बापूसे दो कदम आगे रहती थीं।

२९

बा आश्रमका खाना न खाकर अपने लिअे अलग बनाती थीं। अुसमें खटाई, मसाला और तली हुआी चीजें भी होती थीं। अुसमें से वे बच्चोंको भी देती रहती थीं। बापू अिसे सहन कर लेते थे। मगर समय-समय पर मीठे व्यंग और विनोद द्वारा टोकते भी रहते थे। अेक दिन भोजनके समय कहने लगे "आज तो बड़ी मसालेदार चीज बनी दीखती है। जी ललचा रहा है। अितना कौन खायेगा? मुझे भी खिलाओगी?" बापूको खाना तो क्या था? असलमें बापू सख्ती तो अपने पर ही सबसे अधिक करते थे और दूसरोंकी बातोंको — यदि वे नीति-विरुद्ध न होतीं — अधिकसे अधिक सहन कर लेनेकी अुदारता रखते थे।

३०

बा दीपावली और बापूका जन्मदिवस अपने ढंगसे मनाती थीं। मगर अुनमें गांधीजीकी खातिर सादगीका पूरा ध्यान रखती थीं। [illegible] अेक अंग यह था कि आश्रमके सब बच्चोंको चने-मुरमुरे, [illegible] और [illegible] बांटती थीं। बात यह थी कि बा अेक पतिव्रता [illegible] सेवा-कार्यमें बापूका अनुसरण करती थीं, मगर वे हिन्दू नारीके रूपमें अपना स्थान [illegible] थीं और त्योहार तथा अुत्सव आदि मनाये बिना नहीं रहती थीं।

३१

१९४१ की बापू-जयंतीका दिवस था। महिला आश्रमकी लड़किया बापूको प्रणाम करने आयी और अपने काते हुये सूतकी अेक बारीक धोती अुनको भेंट की। बापूने कहा, "अिस भेंटका अधिकारी मैं नहीं, बा है।" लड़कियोंने कहा, "आप बड़े हैं, अिसलिअे आपको ही स्वीकार करनी चाहिये।" "नहीं, बड़ी बा है", बापू बोले, "अनलमें बुअमें वह मुझसे छ. महीने बड़ी है। वह कहती है मैं बड़ा हूं। यह घोटाला अिसलिअे हो रहा है कि मेरे स्कूलके रजिस्टरमें अंदाजसे ज्यादा अुम्र लिख दी गयी थी और वही चली आयी है। कोअी जन्मपत्री तो थी नहीं।" धोती छोटी थी। वह बापूके ही काम आ सकती थी। मगर अिस तरह विनोद करके समय-समय पर सबके सुखकी निर्दोष वृद्धि करते हुअे बापू अपनी मानवताका परिचय दिया करते थे।

३२

सुभद्रा छोटी थी। कोअी पाच छह वर्षकी होगी। तकली पर तो वह कातती ही थी। अेक दिन अुसे चरखे पर कातनेकी धुन सवार हुअी। बापू तो बच्चोंके लिअे घरकी मुर्गी दाल बराबर थे। झटसे बोली, "बापू, मैं भी चरखा चलाअूंगी।" बापूने पूछा, "चलायेगी तो सही, मगर तेरा हाथ कैसे पहुंचेगा?" सुभद्रा वहां तो चुप हो गअी, मगर सीधी भारतानंदके पास गअी और अुनसे अपनी कठिनाअी बयान की। वे तो बच्चोंके प्रेमी हैं ही। अुसके लिअे अेक चक्रका पेटी चरखा तैयार करा दिया। अुसी पर महीने दो महीनेमें मोटा सूत कातकर अुसने कपड़ा बुनवा लिया और अेक दिन शामको भोजनके बाद जब बापूजी मुह-हाथ धो रहे थे तो वहीं जा पहुची और बोली. "लीजिये, बापूजी, मैंने तो चरखा भी बनवा लिया, अुस पर सूत भी कात लिया और अब अुसीका यह कपड़ा आपको भेंट करने लायी हू। आपको लेना होगा।" बापूको तो बच्चोंसे ठठोली करनेका मौका चाहिये। कब चूकनेवाले थे? कहने लगे. "लेकिन भाअी मैं तो दाम नहीं देता। तू दाम ले ले तो मैं कपड़ा ले लू।" "मैं क्या कोअी बेचने आयी हूं? आप दूसरोंसे भेंट कैसे ले लेते हैं? मेरा कपड़ा खराब है, अिसलिअे नहीं लेते होंगे।" "अरे नहीं, नहीं, सुभद्रा, यह बात नहीं है। कपड़ा तो तेरा बड़ा अच्छा है। मैं अिसके तौलिये बना सकता हूं। मेरी पट्टियोंके काम आ सकता है। दूसरोंसे भेंट लेता हूं वह सब मैं थोड़े ही काममें लेता हूं। मेरा तो अपना ही सूत अितना हो जाता है कि मेरी जरूरतसे बच जाता है तो वाको दे देता हूं। अच्छा, तू पूरी कीमत न ले तो थोड़ीसी ले ले।" शायद वे लड़कीकी परीक्षा ले रहे थे कि दामोंके लालचमें आती है या नहीं। मगर सुभद्रा टससे मस न हुअी तो अन्तमें अुन्होंने अेक पट्टीके लायक कपड़ा कटवा कर रख लिया। सुभद्रा खुश खुश होकर लौट आअी। शायद वह मन ही मन अपनी जीत पर फूल

रही थी। ससारका वह महानतम व्यक्ति भी ऐसी हारोमें असाधारण आनद अनुभव करता था।

३३

चि० प्रतापको टॉन्सिलकी बीमारी रहती थी। बापूने अपने अुपाय करके देख लिये और अुनसे काम नही चला तो वर्धा ऑपरेशनके लिअे भेज दिया। लौटकर आने पर बापू अुसे अच्छा होने तक रोज दोनो समय देखने आते। पहले ही दिन बापूने पूछा "क्यो, कैसा है?" प्रतापने लिखकर बताया "ठीक हू।" "बोला नही जाता?" बापूने पूछा। "बोला जाता है, मगर डॉक्टरने मना कर रखा है। आपने ही तो सिखाया है कि अनुशासन मानना चाहिये।" बापू बहुत खुश हुअे और खानेके बारेमें जानना चाहा। प्रतापने लिखकर दिया "पतली चीज बताअी है।" बापूने जाकर अपना सेबका रस भेज दिया। अम्तुल बहन लेकर आअी तो प्रतापने लिखकर बताया, "मै तो मोसबीका रस ले चुका हू और बापूका हिस्सा लेना मुझे अच्छा भी नही लगता। आप वापस ले जाअिये।" अम्तुल बहनने कहा, "बापूका आग्रह है। अुनका खयाल है कि अुनसे तुम्हारी जरूरत ज्यादा है।"

३४

बापूके अिस तरहके वात्सल्य और त्यागमय व्यवहारका मनुष्यों पर कितना स्थायी असर होता था, अिसका अनुभव प्रतापके सवधमें ही बटा शुभ हुआ। बात यह हुअी कि बम्बअीमें हम 'तुकाराम' का सिनेमा देखकर लौट रहे थे तब प्रतापने पूछा "पिताजी, विद्यार्थियोको सिनेमा देखना चाहिये या नही?" अुन्होने कहा, "नही देखना चाहिये। बापूकी भी यही राय है।" बापूजीके प्रति और पिताकी आज्ञाने आश्रमके वातावरणसे सुपक्वित और परिष्कृत हुअे बालक प्रतापके निर्मल मनको श्रद्धा और अनुशासनमें अैसा बाधा कि अपने विद्यार्थी-जीवनमें वह अेक बार भी सिनेमा देखने नही गया। अनेक अवसरों पर साथियो और बुजुर्गों तकने आग्रह किया, परन्तु प्रताप सिनेमा देखने नही गया सो नही गया। वह तब गया जब अुसका विवाह होने पर अुसके पिताजी ही अुसे और नववधूको दिखाने ले गये।

३५

यह अनुभव मुझे अपने सभी बच्चोके बारेमें हुआ। मैंने अपने अेक पुत्र और दो पुत्रियोको क्वचित् ही पीटा है। लेकिन ये घटनाअें अुस समयकी हैं जब हम लोग छत्रछायामें रहनेका सौभाग्य नही मिला था। मुझे कअी बार लिखना पड़ा है और पश्चात्ताप हुआ है। तब पूछा जाय तो बड़ी आत्मग्लानि होती है। लेकिन जबसे ये बच्चे दो वर्ष तक बापूके साथ रहकर लौटे हैं, तबसे मैंने [illegible]

कोई खास शिकायत नहीं हुई। आश्रममें उन्हें सफाई, नियमितता, सदाचार, सादगी, परिश्रम, कर्तव्य-परायणता, नम्रता, संस्कृति आदिकी जो शिक्षा मिली, उसके कारण घरोंमें आम तौर पर बच्चोंके झूठ बोलने, चीजें चुराने, खाने-पहननेमें दुराग्रह करने, लड़ाई-झगड़ा करने, गाली-गलौज करने, पढ़नेसे जी चुराने और अन्य कुटेवोंसे जो समस्यायें उत्पन्न होती हैं उनका सामना मुझे नहीं करना पड़ा। बुद्धि, हृदय और शरीर-विकासका यह सामंजस्य मैं बापूके सान्निध्यका ही परिणाम समझती हूं।

३६

जिस सुपरिणामका परिचय देनेवाली अेक घटना मुझे और भी याद आ रही है। सन् १९४३ की बात है। सीता-प्रताप दोनों बाहर मोतीझिरेमें रोगशय्या पर पड़े थे। उनके पिताजी अजमेर जेलमें नजरबन्द थे। हमारे परिवारके मित्र होमियो-पैथ डॉ० राजपालजी और उनकी धर्मपत्नीका जिलाज था। उनके यहां छुपिया पुलिसके जिस्पेक्टर पुरी भी जिलाजके लिअे आया-जाया करते थे। हमारी निगरानी तो उनका काम ही था। जब उन्हें मेरी परेशानीका पता चला तो डॉक्टरजीको सुझाया कि "चौधरानीजी चाहें तो मैं चौधरीजीको पैरोल पर छोड़नेकी सिफारिश कर सकता हूं।" मैं जानती थी कि वे जिस प्रकार छूटना हरगिज पसन्द नहीं करेंगे। मैं स्वयं भी अैसी जलील प्रार्थना सरकारसे करनेको तैयार नहीं थी। तब डॉक्टरजीने प्रतापको टटोला। मेरी परेशानीका भय और पिताके दर्शनोंका प्रलोभन दिखाया। लेकिन प्रतापने कहा. "मैं अपने लिअे अपने वीर पिताकी देशभक्तिको बट्टा नहीं लगा सकता। और बापू सुनेंगे तो मेरे लिअे क्या खयाल करेंगे?"

३७

उन्हीं दिनों प्रतापने किसी बात पर चिढ़कर सीताके अेक चांटा लगा दिया। यह बात मेरे मुहसे प्रसंगवश जेलमें मुलाकातके समय जिनके पिताजीके सामने निकल गयी। उन्हें बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने प्रतापको लिखा कि, "बापूके साथ रहकर अहिंसाका पाठ सीखे हुअे लड़केके लिअे यह गंभीर भूल है। जिनका तुम्हें हार्दिक पश्चात्ताप हो तो सीतासे क्षमा-याचना और आगंदा अैसा न करनेकी प्रतिज्ञा करो। जिसकी सूचना मुझे तीन दिनमें न मिलेगी तो मैं अुपवास करूंगा।" बेचारे प्रतापके लिअे अपने कारावासी पिताका दुःख और प्रायश्चित्त असह्य था। उसने उनकी आज्ञा पालन करके समय पर सूचना भेज दी। दुर्भाग्यवश नेत्रके कारण वह उन्हें वक्त पर नहीं मिली और उन्होंने अुपवास किया। परन्तु अुस दिनके बाद प्रतापने अपनी बहनों पर कभी हाथ नहीं अुठाया!

३८

अेक जर्मन यहूदी युवती छुट्टियोंमें बापूके सत्सगके लिअे सेवाग्राम आकर रहा करती थी। अेक बार वह अपने साथ अपनी कुतियाको भी ले आअी। बापूने पूछा : "जिसे क्यो लाअी हो? अिस पर खर्च क्यो किया?" युवतीने कहा "यह मुझे बहुत प्रिय है। न लाती तो अिसे कष्ट होता। अिसे लानेमे खर्च नही करना पडा, क्योकि टोकरीमे बन्द करके ले आअी हू।" बापूको और भी बुरा लगा। बोले : "यह तो चोरी हुअी। वैसे भी तुम्हे प्यार करनेकी चीज ही चाहिये तो किसी जानवरके बजाय किसी गरीब बच्चेकी परवरिश करो।" युवती शर्मिन्दा हो गअी। बापू प्राणीमात्रके प्रति दयाभाव रखते हुअे भी मनुष्य और पशुका विवेक यहा तक रखते थे कि गायकी खातिर भी मुसलमानोसे लडनेकी हमेशा निन्दा करते थे।

३९

बापू सैरको जाते तब तेज चलते थे। अिसके लिअे सहारेके तौर पर दो लडकियोके कधो पर हाथ रखकर चलते थे। अिस पर लडकियोमें स्पर्धा होने लगी तो अुनकी बारिया बाध दी गअी। अेक दिन अुस यहूदी लडकीकी बारी थी। वह कुछ देरमें पहुची तो सुभद्रा बीचमें ही कूद पडी और बापूजीका हाथ पकडकर अपने कधे पर रख लिया। अिधर बारीवाली लडकी पहुची और अुसने अपना हक मागा तो सुभद्रा मचल गअी। अुधर सुभद्राका कद बहुत छोटा होनेके कारण बापूको सुभीता होनेके बजाय अुल्टी दिक्कत हो रही थी। वे तो कुछ नही कह रहे थे, मगर मुझे बुरा लग रहा था। मैंने सुभद्राको हट जानेके लिअे जरा झिडक कर कह दिया। बापूको यह कैसे सुहाता? अुन्होने मुझे अुलहना दिया और सुभद्राको तब तक समझाते रहे जब तक बात अुसकी समझमें नही आ गअी। अन्तमें अुसने खुशीसे यहूदी युवतीके लिअे जगह कर दी। मसारकी बडी-बडी समस्याओको हल करनेवाले गाधीजी अिस प्रकार बच्चोकी छोटी-छोटी बातोमें भी अुतनी ही दिलचस्पी लेते, अुन्हे तालीम देते और स्वय आनन्द लूटते थे।

४०

अेक दिन सायकालीन प्रार्थनामे रेहाना बहन तैयबजीने देशमें अन्नकी कमीका प्रश्न छेडा और बापूसे अुसका हल पूछा। बापूने कहा कि अन्न-अुत्पादनका सारा बोझा किसान पर ही नही डालना चाहिये। सभी खानेवालोको बूतेके माफिक पैदावार करनी चाहिये। हमारे पास जो भी फालतू जमीन हो अुसमें मूगफली, शकरकद और शाकभाजी वगैरा बोकर अुसका अुपयोग करना चाहिये। बापू तो जो कहते थे वही करते थे। अुन्होने अपने दालानमें खेती शुरू कर दी। फिर तो सभीने अुनका अनुगमन आरम्भ कर दिया। बापूके पास रचनात्मक अुपाओका भडार भरपूर रहता था।

४१

बापू बडे सरगरम आहारशास्त्री और प्रयोगकर्ता थे। दूधको अुबालनेसे अुसका 'सी' विटामिन नष्ट हो जाता है और अुबाले बिना दूधमें रोगके कीटाणु होनेकी सभावना रहती है। अिसलिअे बापू अुनमें टमाटर या नीबू डालकर खानेकी सलाह देते थे। वैसे भी आश्रममें नीबू काफी होते थे। मगर अुनका रस काममें लेकर छिलके फेंक दिये जाते थे। मुझे यह खटकता था। अेक दिन मैंने सुझाव दिया कि छिलके काच या चीनीके बर्तनमें भर दिये जाय और अुनमें थोडासा नीबूका रस और नमक डाल दिया जाय तो अेक अच्छा स्वादिष्ठ और लाभदायक खाद्य बन सकता है। बापू तो प्रयोगोंके लिअे अुत्सुक और किफायतके लोभी थे ही। अुन्होंने तुरन्त अनुमति दे दी। १५ दिन बाद जब वह निर्दोष अचार आश्रममें परोसा गया तो यह नअी चीज सबको बडी पसन्द आअी। फिर तो नीबूका बिना मसालेका यह अचार हमेशा बनने लगा।

४२

अिसी तरह आश्रममें खोपरा बहुत काममें आता था। गीले खोपरेको तो किसकर बीमारो और कमजोरोंको दे दिया जाता था और छूछको या तो शाकमें मिला दिया जाता या कृष्णचन्द्रजी वगैरा कोअी खा लेते थे। शाकमें छूछ मिलाने पर कुछ आपत्ति की गअी, तो बापूने अुसे अनुचित बताया और छूछके अुपयोगका समर्थन किया। वे तो किसी भी स्वास्थ्यप्रद प्रयोगको सदा ही प्रोत्साहन देते थे।

४३

सुभद्रा कोअी पाच छह वर्षकी होगी। बापूकी रामायण और छोटीसी लालटैन अुसको पसन्द आ गअी। अेक दिन माग बैठी। बापू तो विनोदके साथ साथ बच्चोंको हर बातमें सिखा भी देते थे। झट बोले, "तू दोहा पढकर सुनायेगी तो दे दूगा।" सुभद्राने शर्त कबूल कर ली, मगर अुसे तो वर्णमाला भी नही आती थी। बापूने अपनी रामायण और लालटैन अुसे दे दी। साथ ही अुसे समझा दिया कि अुन्हें सभालकर रखे और प्रार्थनाके समय ले आया करे। सुभद्राने सीतासे सुनकर दो-तीन दोहे रट लिये और रामायणमें अुनका स्थान वगैरा पहचान लिया। अुनमें से अेक दोहा यह था.

रघुकुल रीति सदा चलि आअी।
प्राण जाहिं पर वचन न जाअी॥

अेक दिन जाकर अुसने बापूको दोहे सुना दिये। बापूके पूछने पर यह भी बता दिया कि दोहे किस पृष्ठ पर हैं। बापू सारी कारस्तानी समझ गये और बोले

"तुझे जितनी देर दोहे सीखनेमें लगी उतनी देर तूने रामायण रख ली। अब जब तू रामायण पढ़ने और समझने लगेगी तब तुझे रामायणकी अेक पुस्तक मिल जायगी।" नतीजा यह हुआ कि जो सुभद्रा पहले राजी नही थी उसने लिखना-पढना सीखना शुरू कर दिया। जब हमने सेवाग्राम छोडा तो वचनानुसार सुभद्राको सटीक तुलसीकृत रामायणकी अेक प्रति ही नही मिली, बल्कि बादमे पत्र द्वारा भी बापू अिस सम्बन्धमें अुसे प्रेरणा देना नही भूले, जैसा कि महाबलेश्वरसे १५-५-'४५ को भेजे हुअे अुनके अिस पत्रसे प्रगट होता है

"चि० सीता, तेरा खत अच्छा है। सुभद्रा तो अब मुझे रामायण सुनायेगी। तेरा अभ्यास भी अच्छा लगता है। प्रतापने बहुत अच्छा किया है। जुगलकिशोरजी कहा सीखे? माकी क्या चिकित्सा चलती है? मैं अुत्तर दू या नही मुझे लिखा कर। जहा तक मुझे स्मरण है पारनेरकरजीने मुझे कुछ दिया नही। शायद बात की होगी। पिताजीको मेरे आशीर्वाद। मैं आशा रखता हू वह बिलकुल अच्छे और ताकतवर हो जायगे।

बापूके आशीर्वाद"

४४

जेलमे अेक बार प्रतापके पिताजीको दिलका दौरा हुआ। मुझे बडी चिन्ता हुअी और घबराहट महसूस हुअी। अुसी मनोदशामें शान्तिके लिअे मैंने बापूको सब हालचाल लिखे। अुत्तरमे अुनका यह पत्र आया

"महाबलेश्वर, २-५-'४५

चि० अजना,

तुमारा खत मिला है। रामनारायणकी मैं फिकर नही करता हू। वह बहादुर है। अच्छे हो जायेगे। तुमने खत दिया सो अच्छा ही हुआ है। लडके सब अच्छे हैं सुनकर खुश होता हू। अब तो सब बहुत मोटे लगते होगे। अुनका अभ्यास क्या हो रहा है लिखो। तुमने ठिकाना नही दिया है। तुम कैसी हो? मैं अच्छा हू।

बापूके आशीर्वाद"

अिस प्रकार प्रियजनोके बारेमें अपनी बनी हुअी अच्छी राय जाहिर करके बापू सान्त्वना व प्रसन्नता प्रदान करते थे, साथ ही पत्र न लिखने जैसी छोटी-मोटी भूलोका सकेत भी करते थे। अिस पोस्टकार्डमे बापूकी हिन्दीमें बच्चोके लिअे 'सब', पढाअीके लिअे 'अभ्यास' और बडेके लिअे 'मोटे'—ये शब्दप्रयोग खास ध्यान देने लायक है।

४५

आश्रम छोडते समय बापूने मुझसे कहा था कि "तू काफी सूत कातती रहेगी तो वह अच्छी सेवा समझूगा।" तदनुसार हमने साल भरमें कोअी ८ लाख गज सूत कातकर और लगभग १२५ गज कपडा भी घरके सूतका बुनवाकर बापूकी ७८ वी वर्षगाठ मनाअी। यह सूचना देते हुअे मैंने बापूको अुनके जन्मदिन पर प्रणाम भेजे और आशीर्वाद मागे। अिसका जवाब अुन्होंने मुझे यह दिया।

"नयी देहली, २०–९–'४६

"चि० अजना,

तुमारा खत मिला। जो हिसाब तुमने भेजा है अुसके लिअे अवश्य धन्यवाद देना चाहिये। रोज ४ गुडी (६४० तारकी अेक) कातती हो अुसमें कितना समय लग जाता है? सुभद्रा जो कातती है अुसका समय कितना जाता है?

गीता क्या करती है?

बापूके आशीर्वाद"

बापूके लिअे हमारे जैसे हजारो नही तो सैकडो कार्यकर्ता होगे। सबके बच्चोके नाम याद रखना, अुनकी पढाअी और स्वास्थ्यके बारेमें पूछताछ करना कितना कठिन काम है? परतु बापूके हृदय और स्मृति-भागरमें अिन सब बूदोके लिअे बराबर स्थान था।

४६

सेवाग्राम आश्रममें अेक दिन हमारी झोपडीके पीछे पडी हुअी लकडियोमें अेक साप घुस गया। मुझे अपने लिअे तो नही, परन्तु बच्चोके लिअे डर लगा। भाअी मुन्नालालजी साप पकडनेमें विशेषज्ञ माने जाते थे। अुन्हे सूचना दी तो वे अपना काठका लम्बा चिमटा लेकर चले आये। अपनी सारी कला खर्च करके वे कोअी घंटेभरमें सापको पकड पाये, परन्तु अिस कशमकशमें वह घायल हो गया। खैर, अुसे तो रिवाजके मुताबिक जगलमें छोड दिया गया। मगर बापूको अुस हिंसक पशुका भी जख्मी होना खटकता रहा। शामकी प्रार्थनामें अुन्होने अिस घटनाका अुल्लेख करते हुअे कहा, "आम तौर पर साप निर्दोष प्राणी होते है। वार होने पर ही क्रोधमें आकर काटते है। अुन्हें अधिक सख्ती करके पकडना हिंसा है। मनुष्य और पशुमें यही भेद है कि पशु प्रकृतिके अनुसार चलता है और मनुष्यको बुद्धिसे चलना चाहिये।"

४७

अेक बार बापूके पास अुनकी अेक लाडली गोद ली हुअी बेटीकी शिकायत आअी कि अुसका पति अुसके साथ मारपीट करता है। अुन्होंने दोनोंको मिलने बुलाया। रूबरू होने पर अुन्होंने युवकसे कहा "पति-पत्नीका सबंध प्रेमका और दर्जा बराबरीका है। जो सिसे न निभा सके वह अयोग्य है। मारपीट करोगे तो . को छीन लूगा।" लडकीको शायद यह खयाल न होगा कि बापू अितना सख्त रुख लेंगे। अन्तमें अुसीने कहा, "बापू, अेक बार समझाकर और मौका दीजिये।" बापू तो अुदारताके भडार थे ही, राजी हो गये। मगर वे स्त्री-जाति पर होनेवाले जुल्मको सहन नही कर सकते थे और अुसके विरोधमें कडीसे कडी कार्रवाअी करनेको भी तैयार रहते थे।

४८

अेक बार प्रेमाबहन कटक हाथ-पैरोंमें मेंहदी लगाकर सेवाग्राम आअी। आश्रम-वासियोंको यह अटपटा लगा। कुछने अुनकी खिल्ली भी अुडाअी। प्रेमाबहनने अिसकी परवाह नही की। बापूजी प्रेमाबहनको देखकर मुस्कराये तो सही, मगर अुन्होंने आश्रमवासियोंसे कहा "तुम प्रेमाबहनको नही जानते। यह जब कालेजमें थी तो अेक डडा रखती थी और लडकियोंको छेडनेवाले लडकोंकी अुनसे अच्छी तरह खबर लेती थी। अिनके चरित्र पर सन्देह नही किया जा सकता।" बापू भीतरी गुणोंका विश्वास होने पर किसीकी बाहरी त्रुटियोंकी परवाह नही करते थे।

४९

सन् १९३४ में हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें बापू अजमेर आये थे। बा भी साथ थी। अुनके टट्टीके पॉट अुठानेका काम मैंने अपने जिम्मे लिया था। मगर बाने मुझे अुठाते देख लिया। फिर क्या था? अुठाने ही नहीं दिया और खुद ही साफ किया। अैसी थी बा कि किसीको अपना काम तो करने ही नहीं देती थी, बन चलते बापूका भी नही करने देती थी।

५०

अुस अवसर पर बापूके दलके लिअे भोजनका प्रबन्ध मेरे और मास्टर अोंकार-नाथजी वाकलीवालके सुपुर्द था। भोजन और सब तरह बापू और अुनकी साथियोंके अनुकूल ही था। बापूने भी पसन्द किया। लेकिन मास्टरजीने जीमें आअी कि अुनके लोगोंको कुछ मीठा खिलाया जाय। मैंने बापूको नाराज होनेकी बात कही। अितने ही में बा आ पहुंची और पूछा, "क्या मामला है?" मास्टरजी बोले, 'बा, आपके साथवालोंको कुछ रसगुल्ले खिलाये जायं तो कुछ आपत्ति है?" बा हा

समझती ही थी कि आश्रमवालोंको समय-समय पर कुछ स्वादिष्ठ चीजें मिल जाया करें तो अच्छा है। कहने लगी, "नहीं रे, क्या हर्ज है? खिलाओ तुम तो।" हमने खाना परोसनेके बाद रसगुल्ले परोसे। बापूने देखते ही कहा: "अरे, अरे, यह क्या आफत है?" हम जानते थे, इसलिअे बापूको तो परोसनेका साहस किसे होता? दूसरोंके लिअे हमने सब किस्सा सुना दिया तो बापू हसकर बोले. "बासे परवानगी ले ली है तो फिर मेरी क्या चलनेवाली है? वा अैसा ही करती है। अुसे अच्छा लगता है।"

५१

सेवाग्रामके खादी-विद्यालयमें अेक दिन विनोबाका प्रवचन हुआ। प्रताप अुसका विद्यार्थी था। प्रवचनमें विनोबा नमक पर कुछ बोले होंगे। अुससे प्रभावित होकर अुसने चार मास तक नमक छोड़नेकी प्रतिज्ञा कर ली। मैंने अिसमें जोखम समझकर बापूको सूचना दे दी। अुन्होंने तुरंत प्रतापको बुलाकर समझाया. "प्रतिज्ञा समझकर लेनी चाहिये। नमक हड्डीके विकासके लिअे जरूरी है। ३० वर्षकी अुम्र तक वह लाभदायक और बादमें हानिकारक नहीं तो अनावश्यक है। अिसलिअे तुम्हें यह प्रतिज्ञा नहीं लेनी चाहिये। अंजना ले तो अच्छा है।" बापू ज्ञानपूर्वक ली हुअी प्रतिज्ञाका ही समर्थन करते थे और अज्ञानमें किये हुअे प्रण अनुचित समझते थे और अुन्हें छुडवा देते थे।

५२

सरकारने ओझा नामक खुफिया पुलिसके सिपाहीको होशियार समझकर आश्रमकी निगरानीके लिअे नियुक्त किया। भीतर आनेकी हिम्मत तो नहीं होती थी, अिसलिअे बेचारा बाहर घूमता या बैठा रहता। बापूको दया आअी। अुन्होंने कहा. "भाअी, तुम कष्ट क्यों अुठाते हो? आश्रममें रहा करो। वहा सर्दी, गरमी और बरसातसे बच सकोगे।" ओझा आश्रममें रहने लगा। धीरे-धीरे अुसके मन पर बापूजी और आश्रम-जीवनका असर पड़ने लगा। फिर तो वह दिन-भर चरखा चलाता और आश्रमका काम करता रहता। सन् '४२ के आन्दोलन तक तो अुस पर अैसा रंग चढ गया कि वह गुप्तचरी करना भूल गया और बापूकी गिरफ्तारीके थोडे ही दिन बाद अुसने नौकरीको लात मार दी। मैंने साबरमतीमें भी देखा था कि पुलिसका आदमी आश्रममें आनेवालोंके नाम-पते पूछने आता तो व्यवस्थापक खुशीसे बता देते थे। बापूके यहा कोअी छुपानेकी बात ही नहीं थी।

५३

जाजूजीके लड़के नारायणका विवाह हुआ था। नअी नअी बहू आअी थी। जाजूजीकी पत्नी, जिन्हें हम बाअी कहते हैं पुत्रवधूको लेकर बापूके आशीर्वादके लिअे आश्रम आअी। मेरी झोंपडी पहले पड़ती थी, अिसलिअे मैं भी साथ हो गअी।

बाबूके पास पहुंचे तो बाबीको देखते ही [illegible] पकौड़े नहीं लाओ मेरे लिये?" बाबी बोली, "[illegible] बुलाते हैं। कभी खाये भी हैं?" [illegible] नवविवाहित बहूकी पीठ पर जोरदार घूंसा [illegible]।

सूची

अंजनादेवी १४, १९, ४९, ५५, ६१, ७२, १२७, १४४, १७८
असारी, डॉ० ११७
अनन्तराम १२७
अप्पासाहब पटवर्धन १२३
अबुलकलाम आजाद, मौलाना १०२, १५२
अब्दुलगफ्फारखा १६३
अब्दुलरशीद १२५
अमृतकौर, राजकुमारी १०८, १२१, १६४, १७२, १७७
अमृतलाल सेठ १६३
अम्तुलबहन १७२, १७८, १८१
अर्जुनलाल सेठी ३, ५, १९, २६, ९१-९२, १७३
अल्लामा मशरिकी ११
अवन्तिकाबाली गोखले ७

आयगर १०५
आर्यनायकम्जी १६०
आशाबहन आर्यनायकम् १६०

इम्पीरियल डेरी इंस्टीट्यूट, बगलोर १३०–३२

उमिया गावी २३, २५, २६

एण्ड्रूज (दीनबन्धु) १८, ११७, १७३
ऐनी बीसेन्ट ६

ओंकारनाथ वाँकलीवाल १८७–८८

कनु गांधी १६६
कन्हैयालाल मुंशी १३६
कबीर ३२
कमलनयन बजाज १२९, १७७
कमला बजाज २२, २३–३४, १६८
काका कालेलकर २२
काशीनाथ त्रिवेदी ५२–५३, ६०
किशोरलालभाली मशरूवाला १०२, ११२, १४१, १७०, १७६
कृष्णकान्त मालवीय ३
कृष्णचन्द्रजी १७६, १७७, १८४
कृष्णदास गांवी १३३
केदारनाथजी १७०
केनवर्दी ५७, ७६
केसरीसिंह ठाकुर १३४
कॉक्स, मि० १३१
कोट्स्वर्थ, मि० ७६

खरेघाट, कर्नल १५०
खानसाहब, डॉ० १६३

गंगावहन झवेरी ५३, ५६, ६०
गगांसिंहजी १२४
गजदर साहब १४५–४६
गणेशशकर विद्यार्थी ३, ९५, १३९
गांधी-सेवा-सघ ७६, ९४, १०२
गिब्सन ४३-४४
गिरिराजजी ६६
गुजरात विद्यापीठ ४८
ग्रैवहम १४६
गोखले १३, १५२
गोसेवा-सघ १२६
गौरीशकर भार्गव ४४, ९१

घनश्यामदास बिटला ६४, ९३, १२९, १७६–७७
घनश्यामसिंह गुप्त १२२

चन्द्रमणिबाली १६८–६९
चन्द्रशकर शुक्ल ८१, ८४

चरखा-संघ १५६

छगनभाऊ जोशी ५३, ५५
छोटेलालजी जैन ४, ५–६, १६

जमनालालजी बजाज ४, ५, ७, ८, ११, १४, २२, २४, २६, ४१, ७६, ८१, ९४, ११६, १२८, १५३, १६३, १६८, १७७–७८
जयनारायण व्यास १२०
जयसुखलाल गाधी २३
जवाहरलाल नेहरू ३७, ६०, १०६, ११५, १५२–५३
जानकीदेवी १२९, १६८, १७७, १७८
जाल रुस्तमजी कोठावाला १३०–३१

टी० विजयराघवाचार्य ११, ११०, १६४
टॉल्स्टॉय १५२

ठक्करबापा ७९, ९०, ९८, १०१

तारावहन १६८–६९
तुलसीभाऊ नेपाली ५६
तेजबहादुर सप्रू, सर १३४
तोतारामजी ५२

थोरो १५२

बादासाहब मावलकर १६१
दादू ५५
दास, डॉ० १४०
दुर्गाप्रसाद १४१
देशबन्धु गुप्त १२२

नटराजन १११
नरेन्द्रदेव, आचार्य ४९, १७६
नारायणदास गाधी ५२, ५४
नारायण मोरेश्वर खरे २२, ५३, ६०

परचुरे शास्त्री १३५
पट्टाभि सीतारामैया, डॉ० १६३
पारनेरकरजी १७२, १८५, २०१
पेता, मार्शल १२६
प्यारेलालजी २९, ८४, ११२, १६६
प्रभासचन्द्र चटर्जी ११०
प्रताप ७१, ७३, ९४, १७०, १७२, १८१–८२, १८८
प्रह्लाद ६३
प्रेमावहन कंटक ६२, १८७

फतहसिंह महाराणा १३४
फील्ड, कर्नल १२०

बनारसीदास चतुर्वेदी १८, ३७
बलवन्तराय मेहता १६३
बलवन्तसिंह १२७, १८९
बसन्तकुमार दास ४
बा २९, ५१, ५३, १७८
बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ९५
बालकोबा १००
बिजौलिया सत्याग्रह ९–१०

भंसालीभाऊ १७१
भारतानन्द (मि० मारिस फ्रिडमैन) १७५

मगनलाल गाधी १६, २२, २८, ५४
मणिलाल कोठारी १६, २१, ४१
मणिलाल गाधी २५
मथुरादास ५४
मदनमोहन मालवीय, पंडित ६, १५८
महादेव देसाभी ७, १०, १२, १८, ६०, ६६, ८४, ९७, १०२, ११२, १२६, १३२
माणिक्यलाल वर्मा ११०
मीरावहन ४०, ५३, ६६, १६६
मुजे, डॉ० ११, ६४, ८६
मुन्नालालजी १८६
मुहम्मदअली, मौलाना ११
मुहम्मदअली जिन्नाह ११, १०८, ११७

मैक्डोनाल्ड ६५, ७७
मोतीलाल नेहरू ११, १०२

रमणीकलाल मोदी ५३, १६८–६९
रमाकान्त, पंडित १२
रमाबहन ५५
रवीन्द्रनाथ ठाकुर ५१, १२०, १४३, १५४, १७३
रस्किन १५२
राजपूताना हरिजन-सेवक-संघ ८७
राजस्थान-सेवा-संघ १३, १९, २६
राजाजी ९७, १०६, १५३
राजा प्रजा सेवक समिति ३८–४०
राजेन्द्रबाबू ११५, १५३
राधाकृष्ण बजाज ९९, १२७, १२९
रामानन्द बाबू १११
रामेश्वर नेवटिया २३–२४
रामेश्वरी नेहरू ९२, ११९
रायचन्दभाई १५२
रावजीभाई पटेल ५५
रासबिहारी बोस १३४
रुद्र, आचार्य १३
रेजीनाल्ड रेनाल्ड्स ४९, ६५, ६७
रेहाना बहन तैयबजी १८३
रौलेट ऐक्ट ८

लक्ष्मीपति, डॉ० ११५
लक्ष्मीबहन खरे ५३
लाखाजी राज ३७
लार्ड अर्विन ४९, ६६
लार्ड कर्जन १३४
लार्ड हार्डिज १३४
लाला लाजपतराय ११
लेडी स्मिथ ६४
लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ६, ८, ११, ५३

वल्लभभाई (सरदार) पटेल ३०, ५८, ६४–६५, १०६, ११५, १२२, १३७–३८, १५३, १६३
वालुजकरजी १२६
विजयसिंह पथिक ९, १२–१३, १८, २६, १२५
विजयालक्ष्मी पंडित १२१
विनायकराव सावरकर १३९
विनोबा भावे ६१, १०९, १६८, १८८

शंकरन् १७६
शेक्सपीयर १२०
शोभालाल गुप्त ४७, ४९, ५५, ६३
श्रीकृष्णदास जाजू ५, ६, १४७–४८, १५६, १८८

सतीशबाबू १६१
सी० आर० दास १८
सीता १७१, १८२, १८५
सुभद्रा १३८, १७२, १७७, १८४
सुरेन्द्रजी ५३
सुशीला नय्यर, डॉ० ११०, ११९, १६१, १६६
सैयद महमूद, डॉ० १०२
स्वामी आनन्द १२९, १४१
स्टेफर्ड क्रिप्स १०७

हरविलास शारदा, दी० ब० ९७
हरिजन-सेवक-संघ ९२, ९४ १०१, ११९
हरिप्रसाद देसाई, डॉ० ६५, ७२, १७०
हार्वे, कर्नल १२१
हिटलर १२६
'हृदय-कुंज' २८
हेडगेवार, डॉ० ११
होमरूल आन्दोलन ८